MAHY-113 (भाग–1)

भारत का राजनैतिक इतिहास : घटनायें एवं प्रक्रियाएँ (1206 ई0–1947ई0)

उत्तर प्रदेश राजर्षि टण्डन मुक्त
विश्वविद्यालय प्रयागराज

खण्ड – प्रथम : भारत में तुर्की वंश की स्थापना 03–51

इकाई 1 – भारत में इस्लाम का पदार्पण 05–12
इकाई 2 – महमूद गजनवी एवं मोहम्मद गोरी का भारतीय अभियान 13–26
इकाई 3 – तुर्क आक्रमण के समय भारत की दशा 27–34
इकाई 4 – पूर्व मध्यकालीन राज्य एवं त्रिकोणीय संघर्ष 35–42
इकाई 5 – भारतीय राजवंशों की अवनति 43–52

खण्ड – द्वितीय दिल्ली सल्तनत की स्थापना 53–130

इकाई 1 – दिल्ली सल्तनत का विस्तार एवं सुदृढ़ीकरण 55–66
इकाई 2 – प्रारभिक तुर्की वंश के शासन एवं नीतियाँ 67–76
इकाई 3 – खलजी वंश के शासक एवं नीतियाँ 77–94
इकाई 4 – तुगलक वंश के शासक एवं नीतियाँ 95–118
इकाई 5 – सैय्यद वंश तथा अफगान राज्यों (लोदी एंव सूर) की स्थापना 119–130

खण्ड – तृतीय : बाबर (1483–1530) 131–172

इकाई 1 – बाबर का व्यक्तित्व एवं सफलताएँ 133–140
इकाई 2 – हुमायूँ (1530–40 तथा 1555–56) 141–150
इकाई 3 – अकबर और उसकी नीतियाँ 1556–1605 151–160
इकाई 4 – जहाँगीर और नूरजहाँ 1605–1627 161–164
इकाई 5 – शाहजहाँ 1628–58 165–171

MAHY-113 (भाग–1)

भारत का राजनैतिक इतिहास :
घटनायें एवं प्रक्रियाएँ
(1206 ई0–1947ई0)

उत्तर प्रदेश राजर्षि टण्डन मुक्त
विश्वविद्यालय, प्रयागराज

खण्ड – 1

भारत में तुर्की वंश की स्थापना

इकाई – 1 05–12

भारत में इस्लाम का पदार्पण

इकाई – 2 13–26

महमूद गजनवी एवं मोहम्मद गोरी का भारतीय अभियान

इकाई – 3 27–34

तुक्र आक्रमण के समय भारत की दशा

इकाई – 4 35–42

पूर्व मध्यकालीन राज्य एवं त्रिकोणीय संघर्ष

इकाई – 5 43–52

भारतीय राजवशों की अवनति

उत्तर प्रदेश राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय उत्तर प्रदेश प्रयागराज

परामर्श समिति **MAHY-113**

प्रो0 सीमा सिंह — कुलपति, उ0प्र0 राजर्षि टण्डन विश्वविद्यालय, प्रयागराज

डा0 पी0पी0 दूबे — कुलसचिव, उ0प्र0 राजर्षि टण्डन विश्वविद्यालय, प्रयागराज

पाठ्यक्रम निर्माण समिति (अध्ययन बोर्ड)

प्रो0 संतोषा कुमार — आचार्य इतिहास एवं प्रभारी निदेशक, समाज विज्ञान विद्याशाखा, उ0प्र0 राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, प्रयागराज

प्रो0 हेरम्ब चतुर्वेदी — आचार्य एवं पूर्व विभागाध्यक्ष, इतिहास विभाग, इलाहाबाद विश्वविद्यालय, प्रयागराज

प्रो0 संजय श्रीवास्तव — आचार्य, इतिहास विभाग, इलाहाबाद विश्वविद्यालय, प्रयागराज

डॉ0 सुनील कुमार — सहायक आचार्य, प्राचीन इतिहास, समाज विज्ञान विद्याशाखा उ0प्र0 राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, प्रयागराज

लेखक

डॉ सेराज मोहम्मद — आचार्य, इतिहास, श्री देवसुमन उत्तरखण्ड विश्वविद्यालय, गढ़वाल, उत्तराखण्ड

सम्पादक

प्रो0 हेरम्ब चतुर्वेदी — आचार्य एवं पूर्व विभागाध्यक्ष, इतिहास विभाग, इलाहाबाद विश्वविद्यालय, प्रयागराज (इकाई 1–5)

पाठ्यक्रम समन्वयक

डॉ0 सुनील कुमार — सहायक आचार्य, प्राचीन इतिहास, समाज विज्ञान विद्याशाखा उ0प्र0 राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, प्रयागराज

© उ0प्र0 राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, प्रयागराज 2021

ISBN : 978-93-94487-88-8

सर्वाधिकार सुरक्षित। इस सामग्री के किसी भी अंश को उ0प्र0 राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय की लिखित अनुमति के बिना किसी भी रूप में, मिमियोग्राफी (वक्रमुद्रण) द्वारा या अन्यथा पुनः प्रस्तुत करने की अनुमति नहीं है। पाठय सामग्री में मुद्रित सामग्री के विचारों एवं आकड़ों आदि के प्रति विश्वविद्यालय, उत्तरदायी नहीं है।

प्रकाशक – कुलसचिव] कर्नल विनय कुमार उ0प्र0 राजर्षि टण्डन विश्वविद्यालय, प्रयागराज – 2024

मुद्रक– चंद्रकला यूनिवर्सल प्राइवेट लिमिटेड, 42/7 जवाहरलाल नेहरू रोड, प्रयागराज

इकाई–1 भारत में इस्लाम का पर्दापण

इकाई की रूपरेखा

1.1 प्रस्तावना

1.2 उद्देश्य

1.3 इस्लाम का अर्थ और स्वरूप

1.4 भारत में इस्लाम के आगमन का प्रारम्भिक अभियान

1.5 सिन्ध पर अरब आक्रमण के कारण

1.6 अरब आक्रमण के समय सिन्ध की दशा

1.7 मुहम्मद बिन कासिम का अभियान

1.8 मुहम्मद बिन कासिम की वापसी

1.9 भारतीय संस्कृति का इस्लाम पर प्रभाव

1.10 इस्लाम का भारतीय संस्कृति पर प्रभाव

1.11 सारांश

1.12 अभ्यासार्थ प्रश्न

1.13 सन्दर्भ ग्रन्थ

1.1 प्रस्तावना

इस्लाम धर्म का उदय एवं उत्थान विश्व इतिहास की एक महत्वपूर्ण घटना है। यह धर्म अरब के रेगिस्तान में उदित होकर सम्पूर्ण विश्व में तेजी से फैल गया। इसके फैलाव एवं प्रचार–प्रसार में सैन्य अभियानों एवं सूफियों ने उल्लेखनीय योगदान दिया। इस्लाम धर्म के संस्थापक पैगम्बर हजरत मुहम्मद साहब हैं, जिनका जन्म 570 ई0 में अरब देश के मक्का नामक नगर में हुआ था। अपने उपदेशों एवं आचार–विचार से जनसाधारण को काफी प्रभावित किया। मुहम्मद साहब के नेतृत्व में यह नवीन धर्म एक राजनीतिक शक्ति के रूप में भी विकसित हुई। हजरत मुहम्मद साहब के 632 ई0 में देहान्त के पश्चात राजनीति एवं धर्म की बागडोर खलीफा के हाथ में चला गया। खलीफाओं के समय में भी इस्लाम धर्म का विस्तार निरन्तर जारी रहा। दूसरे क्रम के खलीफा हजरत उमर के समय में भारत पर अरबों ने 636 ई0 में सैन्य अभियान किया। इस अभियान में अरबों को न केवल पराजय मिली, बल्कि इस अभियान के सेनानायक बुदेल भी युद्ध में मारा गया। दूसरा अभियान 647 ई0 में उबेद के नेतृत्व में हुआ, वह भी असफल रहा। तीसरा और महत्वपूर्ण सैनिक अभियान 712 ई0 में मुहम्मद–बिन–कासिम के नेतृत्व में हुआ, जो निर्णायक रहा। इस प्रकार अरबों ने 712 ई0 में सिन्ध और मुल्तान पर अधिकार करने में सफलता पाई।

राजनीतिक आगमन एवं सैन्य अभियान से पूर्व भी भारत का अरबों के साथ व्यापारिक सम्बन्ध थे। व्यापारियों के माध्यम से भारत के लोग नवीन उदित धर्म इस्लाम से परिचित हो गये थे, परन्तु राजनीतिक शक्ति के रूप में आने पर इस धर्म का तेजी से फैलाव प्रारम्भ हो गया। अरब, अफगानिस्तान और ईरान से सूफियों के आगमन ने इसमें और अधिक दृढ़ता, परिपक्वता एवं तीव्रता ला दी। सूफियों के सरल और आदर्श विचार ने यहाँ के जनसाधारण को काफी प्रभावित किया। भारत का जनमानस अब इस्लाम की ओर आकर्षित होकर इसको स्वीकार करने लगा था।

इस्लाम के समतावादी विचार एवं भाईचारा के आदर्श ने भारत की सामाजिक, राजनीतिक एवं सांस्कृतिक जीवन को काफी प्रभावित किया। भारतीय समाज उस समय अनेक सामाजिक कुरीतियों एवं अन्धविश्वासों से घिरी हुई थी। यहाँ के समाज में छुआ–छूत की भावना प्रबल थी। सामाजिक विषमता और वैमनस्यता के वातावरण में इस्लाम के आगमन ने भारतीय जनमानस को अपनी ओर आकर्षित किया। इस्लाम की एकता, समरसता और भाईचारे की भावना ने लोगों को काफी प्रभावित किया। वे शान्ति और सद्भावना की तलाश में नए धर्म में दीक्षित होने लगे। सूफियों के विचार और उनके मानवीय दृष्टिकोण की भावना ने इस्लाम के फैलाव और विस्तार में और अधिक तीव्रता ला दी।

1.2 उद्देश्य

- प्रस्तुत इकाई के अध्ययन से आप जान सकेंगे कि –
- इस्लाम धर्म का उदय किस परिस्थिति में हुआ।
- अरबों द्वारा भारत पर विजय।
- अरबों द्वारा भारत विजय के समय की यहां की दशा।
- भारत पर इस्लाम धर्म का पर्दापण एवं विस्तार।
- भारत पर इस्लाम के प्रचार–प्रसार में सूफियों एवं खानकाहो का योगदान
- इस्लामिक संस्कृति का भारतीय संस्कृति पर प्रभाव।
- भारतीय संस्कृति का इस्लाम पर प्रभाव।

1.3 इस्लाम का अर्थ और स्वरूप

इस्लाम अरबी भाषा का शब्द है, जिसका शाब्दिक अर्थ शान्ति में प्रवेश करना है। यह शब्द संधि–कुशलता, आत्मसमर्पण, आज्ञापालन एवं विनम्रता के सन्दर्भ में भी प्रयुक्त होता है। अतः इस्लाम वह धर्म है, जिसके माध्यम से मनुष्य अपने चित्त को शान्त करने के लिए एवं आत्मसन्तुष्टि के लिए परमात्मा की शरण लेता है। कुरान–शरीफ एवं हदीस जो कि इस्लाम के मूल ग्रन्थ हैं, निर्दिष्ट उपदेशों और सिद्धान्तों के आधार पर अन्य मनुष्य के प्रति प्रेम एवं अहिंसा का व्यवहार कराता है। इस प्रकार इस्लाम धर्म का नाम 'इस्लाम' इसीलिए रखा गया है कि यह अल्लाह के आदेशों का अनुवर्तन और उसका आज्ञापालन है। इस्लाम धर्म को मानने वाले लोग मुस्लिम कहलाते हैं।

इस्लाम का उदय और विकास दुनिया के इतिहास में एक महत्वपूर्ण घटना थी। अन्य धर्मों की तरह 'इस्लाम' का उदय भी विशिष्ट सामाजिक परिस्थितियों के कारण हुआ। इस्लाम का जन्म स्थान अरब, जो बड़े भौगोलिक क्षेत्र का एक भाग है तथा जो लालसागर, अरब सागर, फारस की खाड़ी तथा भूमध्य सागर से लगभग घिरा हुआ है। पुरानी दुनिया में इस क्षेत्र की केन्द्रीय स्थिति रही और तीन महाद्वीप का यह मिलन बिन्दु था। ऐसे विराट भौगोलिक क्षेत्र में अवस्थित अरब की स्थिति 'इस्लाम' के उदय से पूर्व बहुत ही दयनीय थी। ऐसे समय में सन् 570 ई0 में मक्का में मोहम्मद साहब का जन्म हुआ। उनके पिता अब्दुल्लाह जो अब्दुल मुत्तलिब के पुत्र थे, कुरैश कबीले के प्रमुख थे। मोहम्मद साहब के जन्म के पूर्व ही उनके पिता अब्दुल्लाह का स्वर्गवास हो गया था, जिससे आरम्भ में उनके पालन पोषण का भार उनके पितामह अब्दुल मुत्तलिब पर आ पड़ा। मोहम्मद साहब जब केवल छह वर्ष के ही थे, तो उनकी माता बीबी आमना का भी परलोकवास हो गया। इस प्रकार वह बाल्यकाल में ही माता–पिता के वात्सल्य से वंचित हो गये। केवल इतना ही नहीं, जब वह आठ वर्ष के हुए तो उनके पितामह अब्दुल मुत्तलिब का भी परलोकवास हो जाने के कारण उनका पोषण उनके चाचा अबू–तालिब ने किया, जो कि एक व्यापारी थे। अपने चाचा अबू–तालिब के साथ रहकर उनको व्यापार का अच्छा ज्ञान हो गया और उन्होंने सीरिया की व्यापारिक यात्रा भी की। मोहम्मद साहब को पच्चीस वर्ष की आयु में खदीजा नामक एक विधवा स्त्री ने अपना व्यापारिक प्रतिनिधि नियुक्त किया। वह मोहम्मद साहब के गुणों से इतना प्रभावित हुई कि कुछ समय पश्चात उनसे विवाह सम्पन्न कर लिया। खदीजा से मोहम्मद साहब के दो पुत्र और चार कन्यायें उत्पन्न हुई, जिनमें एक कन्या का नाम फातिमा था, जिसका विवाह मोहम्मद साहब के चाचा अबू–तालिब के पुत्र अली से हुआ। कालान्तर में अली इस्लाम धर्म के चौथे खलीफा हुए।

मोहम्मद साहब चालीस वर्ष की आयु में एक बार मक्का के निकट हीरा नामक गुफा में ध्यान में लीन थे, तब उनको दैवी वाणी सुनाई पड़ी कि ''पढ़ो''। उन्होंने कहा, ''मैं नहीं पढ़ सकता।''। दैवी वाणी ने पुनः कहा कि ''पढ़ो''। वह बोले कि ''मैं नहीं पढ़ सकता।'' अन्त में तीसरी बार भयभीत ध्वनि सुनाई पड़ी कि ''पढ़ो।'' वह बोले, ''मैं क्या पढ़ूँ?'' दैवी वाणी ने कहा : ''पढ़ो, उस ईश्वर के नाम को जिसने सृष्टि कि रचना की, जिसने एक रक्त पिण्ड से मानव को पैदा किया। पढ़ो, और वह ईश्वर अत्यन्त दयालु है, जो लेखनी द्वारा ज्ञान देता है। मानव को वह सिखाता है, जिससे वह अपरिचित होता है।'' इस प्रकार हीरा गुफा में ही मोहम्मद साहब को ईश्वर का सर्वप्रथम संदेश मिला कि ''अल्लाह के अतिरिक्त कोई दूसरा नहीं है, मोहम्मद उसका पैगम्बर है।'' मोहम्मद साहब ने अत्यन्त उत्साह एवं लगन के साथ अपने धर्म का प्रचार किया। किन्तु वह अधिक समय तक जीवित न रह सके और केवल 63 वर्ष की अवस्था में 632 ई0 (10 हिजरी) को उनका परलोकवास हो गया।

पैगम्बर मुहम्मद साहब की इच्छा थी कि इस्लाम धर्म का अधिकाधिक प्रचार किया जाय। अपने अनुयायियों को उन्होंने इसका आदेश दिया। उनके जीवन काल में ही इस्लाम का विस्तार सम्पूर्ण अरब में हो गया था। पैगम्बर मुहम्मद साहब की मृत्यु के पश्चात खलीफा इस्लाम के प्रधान बने। उनके योग्य एवं सफल नेतृत्व में अरबों ने सफल सैनिक अभियान कर एक विस्तृत इस्लामी साम्राज्य की स्थापना की।

1.4 भारत में इस्लाम के आगमन का प्रारम्भिक अभियान

भारत में इस्लाम का आगमन व्यापारियों द्वारा मित्रता और आपसी सौहार्द के वातावरण में हुआ था। भारत और पश्चिम के बीच व्यापारिक सम्बन्ध में अरब सौदागरों का काफी हाथ था। दूसरे शब्दों में अरबों का भारत में आगमन व्यापारिक रूप में पहले ही हो चुका था, परन्तु राजनीतिक शक्ति रूप में इनका आने का पहला प्रयास 636 ई0 में बुदेल के नेतृत्व में हुआ, जो असफल रहा। भारत पर अरबों का दूसरा आक्रमण 647 ई0 में उबेद के नेतृत्व में हुआ। इस बार उन्हें कुछ सफलता प्राप्त हुई इसी समय मकरान तथा सीस्तान के क्षेत्रों पर उनका अधिकार भी हो गया। अरब भारत में और आगे बढ़ना चाहते थे, किन्तु बाद के खलीफा से उन्हें प्रोत्साहन ही नहीं मिला। आठवीं शताब्दी के प्रथम दशक में सिन्ध के विरूद्ध अरबों के अभियान शुरू हो गये।

1.5 सिन्ध पर अरब आक्रमण के कारण

सिन्ध पर अरब आक्रमण के अनेक महत्वपूर्ण कारण थे। पहला कारण – व्यापार की वजह से वे अच्छी तरह भारत से परिचित थे। भारत के धन–धान्य ने उन्हें दीवाना बना दिया। अरबों का दूसरा उद्देश्य इस्लाम के साम्राज्य की सीमा का विस्तार करना था। अब तक पूर्व में इस्लाम के साम्राज्य की सीमा का विस्तार काबुल तक हो गया था। अरबवासी सिन्ध को जीतकर भारत में भी अपने साम्राज्य का विस्तार करना चाहते थे। भारत में इस्लाम धर्म का प्रचार करना अरबों का तीसरा उद्देश्य था। भारत में हिन्दू धर्म का बोलबाला था। इस्लाम धर्म के विस्तार के लिये यह अनुकूल देश था। इसे जीत कर अरब यहाँ इस्लाम धर्म का प्रचार करना चाहते थे, किन्तु सिन्ध पर अरबों के आक्रमण का तात्कालिक कारण यह था कि लंका से आने वाले कुछ अरब जहाजों को देवल के किनारे थट्टा नामक स्थान के पास समुद्री डाकुओं ने लूट लिया। जब इसका समाचार हज्जाज को मिला, तो उसने क्रोधित होकर सिन्ध के समकालीन शासक दाहिर से अपराधियों को दण्ड देने तथा क्षतिपूर्ति की माँग की, किन्तु दाहिर ने यह कहकर उसकी बातों को टाल दिया कि समुद्री डाकू न तो उसकी प्रजा थी, और न ही उन पर उसका कोई अधिकार था। इस प्रकार हज्जाज की माँगें पूरी न हो सकी। इस पर क्रुद्ध होकर हज्जाज ने सिन्ध पर आक्रमण करने का निश्चय किया। उसने खलीफा वलीद से इसकी अनुमति भी ले ली और इसके साथ ही सिन्ध पर अरबों का आक्रमण शुरू हुआ।

1.6 अरब आक्रमण के समय सिन्ध की दशा

अरब आक्रमण के समय राजनीतिक परिवर्तनों और आन्तरिक कलह की वजह से सिन्ध काफी कमजोर हो गया था। उस समय लोगों में सामाजिक एकता भी नहीं थी। इसके अतिरिक्त तत्कालीन शासक दाहिर भी बदनाम था, क्योंकि उसके पिता चच ने बलपूर्वक राजपूत नरेश से सिंहासन प्राप्त किया था। वह सिर्फ उत्तर भारत पर ही अपना राज्य जमा सका था। इसके अलावा दक्षिण सिन्ध में अनेक लुटेरी जातियाँ, जैसे– मेड़, तन्कामर, कुर्क, संगार आदि बहुत उत्पात किया करती थीं। तन्मकार जाति समुद्र तट पर रहती थीं और व्यापारी जहाजों को लूटना ही इनकी आजीविका थी। इन लोगों पर दाहिर का शासन नाममात्र का था। यहाँ तक कि वे पुराने सामन्तों के भी अधीन नहीं थे। सिन्धु में जाट लोग भी बहुत थे। इनमें से कुछ दाहिर के साथ थे और कुछ लूटमार किया करते थे। सिन्ध के दक्षिण

भाग में बौद्धों की भी बहुत बड़ी–बड़ी बस्तियाँ थीं, विशेषकर नगरों और कस्बों में इनका प्रभाव था। इनमें अधिकांश लोग दाहिर के साथ नहीं थे। इन लोगों का भारतवर्ष के साथ कोई विशेष प्रेम नहीं था। ये सारे एशिया को अपना देश समझते थे, क्योंकि एशिया के लगभग समस्त देशों में इस समय बौद्ध धर्म का प्रचार हो चुका था।

1.7 मुहम्मद–बिन–कासिम और अभियान

दो विफलताओं से आगबबूला होकर हज्जाज ने तीसरी बार आक्रमण की योजना बनाई। इस आक्रमण का नेतृत्व उसने 17 वर्षीय मुहम्मद–बिन–कासिम को दिया, जो उसका दामाद और भतीजा दोनों ही था। उसे सीरिया और इराक के चुने हुए 6000 घुड़सवार और 6000 सशस्त्र ऊँट सवार दिये गये। इनके अतिरिक्त 3000 यूनानी ऊँटों पर लड़ाई का सामान लदा था। कासिम मकरान के रास्ते से बढ़ा। रास्ते में वहाँ का गवर्नर मुहम्मद हारून अपनी सेना सहित उसके साथ हो लिया था। जलमार्ग से 5 बड़ी–बड़ी मशीनें भी भेजी गई थी, जिससे गोलाबारी की जाती थी। यही नहीं, कासिम ने कई जाटों और मेड़ों को भी अपनी ओर कर लिया था। समुद्र मार्ग से बढ़ते हुए उसने देवल की बंदरगाह पर अधिकार किया। यहाँ उसने विरोधियों का दमन करने के उद्देश्य से विरोध प्रदर्शन करने वालों को मृत्युदण्ड दिया, परन्तु सहयोग करने वाली प्रजा को सुरक्षा का आश्वासन दिया। नगर की सुरक्षा हेतु वहाँ एक शक्तिशाली सेना छोड़कर मुहम्मद–बिन–कासिम ने नीरून के नगर की विजय के लिए आगे बढ़ने का फैसला किया। नीरून की प्रजा ने स्वेच्छा से आत्मसमर्पण कर दिया, जबकि वहाँ का शासक पहले ही नगर छोड़कर भाग गया। इसी प्रकार सेहवन में भी किसी संघर्ष के बिना मुहम्मद–बिन–कासिम विजयी रहा। अगले नगर सीसम पर अधिकार करने के लिए अरब सेना को स्थानीय जाटों के साथ कड़ा संघर्ष करना पड़ा, परन्तु विजयी उन्हीं को प्राप्त हुई।

अब मुहम्मद–बिन–कासिम ने सिन्धु नदी को पार कर राजा दाहिर पर प्रहार किया। स्थानीय लोगों के सहयोग से उसने नौकाएँ प्राप्त की और नदी को पार कर रावर की ओर बढ़ा। दाहिर ने उसका मुकाबला किया, परन्तु युद्ध में मारा गया और रावर का दुर्ग अरबों के अधिकार में आ गया। अगला आक्रमण ब्रह्मणावाद पर हुआ, जो दाहिर की राजधानी थी। दाहिर का पुत्र जयसिंह नगर छोड़कर भाग गया और यह नगर भी अरबों के अधिकार में आ गया। फिर भी कुछ नगरों में दाहिर की सेना सुरक्षित थी। अतः बचे हुए विरोध को शान्त करने के लिए मुहम्मद–बिन–कासिम ने आलोर पर आक्रमण कर उसे जीत लिया। सिन्ध पर वस्तुतः पूर्ण अधिकार हो जाने के बाद उसने मुल्तान को जीतकर अरब शासन की स्थापना भारतीय उपमहाद्वीप में कर दी।

इस प्रकार इस्लाम का भारत में आगमन एक राजनैतिक शक्ति के रूप में हुआ। अरब सौदागर बहुत पहले से भारत आ रहे थे और यहाँ के लोग उनसे प्रभावित होकर इस्लाम कबूल कर रहे थे। नवीं शताब्दी के खत्म होने के पहले ही मालाबार का राजा चेरामन पेरूमल मुसलमान हो गया क्योंकि उसने सपने में चन्द्रमा को फटते देखा था और दूसरा उसे विश्वास दिलाया गया कि यह इस्लाम का चमत्कार है। भारत में सबसे पहले उसी ने अरबों को अपना धर्म फैलाने की सुविधा दी थी। इस प्रकार धीरे–धीरे अरब से इस्लाम का पदार्पण भारत में हुआ। पश्चिमी तट पर मुसलमानों का आगमन आठवीं शताब्दी से प्रारम्भ हुआ। दसवीं शताब्दी तक वे पूर्वी तट पर भी पहुँचने लगे और उनकी धाक राज–दरबारों से

लेकर व्यापारियों तक खूब फैल गयी। इन प्रान्तों में तभी उनकी सैकड़ों मस्जिदें भी बन गई और समाज में उनके पीर–औलिया भी घूमने लगे। बाद में इस्लाम धर्म के प्रचार–प्रसार में मुख्य योगदान सूफी सन्तों का रहा। सूफी सन्तों ने मुसलमानों के समाज की अच्छाइयों को चुनकर उनका प्रचार किया। सच्चा मुसलमान सभी धर्मों को प्यार करता है। इसी प्रकार सूफी सन्त किसी धर्म से विरोध नहीं रखते। इस सम्बन्ध में डॉ0 आशीर्वादीलाल श्रीवास्तव ने लिखा है कि ''हिन्दुओं को प्रभावित करने के लिए और उन्हें इस्लाम स्वीकार करने के लिए सूफियों को जनभाषा सीखनी पड़ी और उनके तत्कालीन प्रचलित धर्म के दार्शनिक एवं आध्यात्मिक विचार नहीं, तो कम से कम उनकी रीति–रिवाज समझने पड़े। इसलिए उन्होंने हिन्दी पढ़ी और हिन्दू सर्वसाधारण में प्रचलित उपासना के तौर–तरीकों, धार्मिक उत्सवों, सामाजिक तथा धार्मिक जीवन के बारे में सीखा व समझा। भारत के सूफी सन्तों के उपदेशों में बहुत से हिन्दी शब्द मिलते हैं। सूफियों ने भारत में इस्लाम के प्रचार–प्रसार में महत्वपूर्ण योगदान दिया।

1.8 मुहम्मद–बिन–कासिम की वापसी

715 ई0 में खलीफा वलीद की मृत्यु के बाद सुलेमान ने खलीफा का पद ग्रहण किया। वह हज्जाज और उसके सम्बन्धियों का शत्रु था। अतः उसने मुहम्मद–बिन–कासिम को पदच्युत कर वापस बुला लिया। उस योग्य सेनापति के अभाव में अरब अपनी सत्ता सिन्ध और मुल्तान से आगे विस्तृत नहीं कर पाये। अरबों की आपसी कलह और भारत के अन्य राज्यों, विशेषकर प्रतिहार राज्य की सशक्त अवस्था ने भी अरब सत्ता के विस्तार को रोका।

1.9 भारतीय संस्कृति का इस्लाम पर प्रभाव

भारतीय सभ्यता एवं संस्कृति ने अरबों को गहरे रूप में प्रभावित किया। सिन्ध विजय के फलस्वरूप ही अरब भारतीयों के निकट सम्पर्क में आये। उन्होंने भारतीय विद्वानों एवं दार्शनिकों की जितनी प्रशंसा की, उतनी ही कलाकारों, संगीतज्ञों, राजगीरों आदि की भी की। अरबों ने दर्शन, विज्ञान, चिकित्साशास्त्र, ज्योतिष आदि के क्षेत्र में बहुत कुछ भारतीयों से सीखा। अरबों ने भारतीयों से शासन सम्बन्धी व्यावहारिक ज्ञान भी प्राप्त किया। अरबों ने भारतीय शिल्पकारों की निपुणता से भी लाभ उठाया और मस्जिदों के निर्माण में उनकी सहायता ली। बगदाद के खलीफाओं ने भी भारतीय विद्वानों, शिल्पकारों, चिकित्सकों, ज्योतिषियों तथा संगीतकारों को संरक्षण प्रदान किया। यह कार्य विशेष रूप से अब्बासी वंश के खलीफा मंसूर (753–774 ई0) और हारून रशीद (786–809 ई0) के समय में हुआ। खलीफा मंसूर के समय में बगदाद में प्रसिद्ध भारतीय ज्योतिष ग्रन्थ 'ब्रह्म सिद्धान्त' तथा 'खण्ड–खाद्यक' का अनुवाद अरबी भाषा में किया गया। खलीफा हारून रशीद भारतीय संस्कृति का प्रेमी था। उसने अनेक भारतीय विद्वानों को बगदाद में बुलाकर अनेक शास्त्रों का अनुवाद अरबी भाषा में करवाया। अरब में विविध विधाओं को भारत में सीख कर उन्हें पाश्चात्य जगत के सामने प्रस्तुत किया। इस तरह सिन्ध अरबों के विशाल साम्राज्य के पूर्वी एवं पश्चिमी जगत को मिलाने वाली कड़ी का काम करने लगा। हैवेल ने लिखा है कि, ''अरबों की सिन्ध विजय से इस्लाम भारत के अध्यातमिक एवं भौतिक साधनों का उपयोग करने में समर्थ हो सका तथा समस्त यूरोप में उसका वितरण करने के लिए उनका एजेंट बन गया।''

1.10 इस्लाम का भारतीय संस्कृति पर प्रभाव

अरबों की सिन्ध विजय ने भारतीयों को भी प्रभावित किया। भारत में अरबों के आगमन से एक नये धर्म 'इस्लाम' का प्रवेश हुआ। निम्न जातियों और शोषित हिन्दू इस धर्म की ओर आकृष्ट हुआ, क्योंकि इस्लाम अधिक प्रजातान्त्रिक था। इसमें ऊँच–नीच, जात–पात, छुआ–छूत आदि के भेदभाव नहीं थे। जब सिन्ध पर अरबों का आधिपत्य हो गया, तो उसके बाद कुछ लोगों को बाध्य होकर इस्लाम धर्म को स्वीकार करना पड़ा। इस प्रकार इस काल में ही भारत में इस्लाम धर्म का बीजारोपण हुआ, जो बाद में अंकुरित हुआ। सामाजिक जीवन पर भी अरब शासन का प्रभाव पड़ा। अरबों ने स्थानीय महिलाओं के साथ वैवाहिक सम्बन्ध स्थापित किये। अरबी भाषा का प्रचलन हुआ। संस्कृत के अतिरिक्त स्थानीय भाषा में अरबों ने अभिरुचि ली। सिंधी भाषा की लिपि का विकास अरबी लिपि के आधार पर हुआ तथा अरबी मूल के अनेक शब्दों का प्रचलन सिन्धी भाषा में हुआ। सन् 886 ई0 में पहली बार सिन्धी भाषा में कुरान का अनुवाद हुआ। धीरे–धीरे धर्मांतरण के माध्यम से इस्लाम का प्रचार हुआ। स्मरणीय है कि इस्लाम का प्रचार एकाएक नहीं हुआ, बल्कि एक लम्बे समय में धीरे–धीरे धर्म परिवर्तन के माध्यम से इस्लाम का प्रसार हुआ। अरबों ने स्थानीय परम्पराओं व रीति–रिवाजों को अपनाया और इस तरह सामाजिक जीवन में समन्वय का आरम्भ हुआ। इस प्रकार सिन्ध पर अरबों के शासन के कारण अत्यन्त महत्वपूर्ण और दूरगामी प्रभाव उत्पन्न हुए, जिनसे जीवन के विभिन्न आयामों में उन्नति मिली। इस्लाम के साथ भारत का पहला प्रत्यक्ष सम्पर्क बना। इन दोनों महान सभ्यताओं के बीच प्रारम्भिक सम्बन्धों के फलस्वरूप मिश्रित संस्कृति के विकास की प्रक्रिया आरम्भ हुई, जिसे हम भारत के मध्य युग में रचनात्मक और समृद्ध रूप में देखते हैं।

1.11 सारांश

भारत में इस्लाम का आगमन व्यापारियों द्वारा मित्रता और आपसी सौहार्द के वातावरण में हुआ था। बाद में राजनीतिक रूप से इस्लाम का भारत आगमन मुहम्मद–बिन–कासिम के नेतृत्व में सिन्ध विजय के साथ प्रारम्भ हुआ। बाद के काल में सूफी संतों के आने से इस्लाम प्रचार–प्रसार में और अधिक बल मिला। भारत पर आक्रमण के समय निःसन्देह मुसलमान किसी नवीन संस्कृति का प्रचार करने वाले नहीं थे, लेकिन सिंध पर अरबों का अधिकार हो जाने के पश्चात बहुत से अरब मुसलमान सिन्ध तथा उसके निकटवर्ती प्रदेशों में फैलने लगे। वे यहाँ के लोगों के साथ वैवाहिक सम्बन्ध भी स्थापित करने लगे, जिसके फलस्वरूप एक मिश्रित वर्ग की उत्पत्ति हुई, जिसने भविष्य में मिश्रित संस्कृति को जन्म दिया। शनैः–शनैः इस्लाम ने भारतीय संस्कृति पर प्रभाव डालने लगा। दूसरी ओर भारतीय संस्कृति ने भी इस्लाम पर काफी गहरा और स्थायी प्रभाव छोड़ा। अरबों के माध्यम से भारतीय ज्ञान यूरोप एवं विश्व के अन्य भागों में फैलने लगा।

1.12 अभ्यासार्थ प्रश्न

प्र01 इस्लाम एवं इस्लामिक संस्कृति का परिचय दीजिये।

प्र02 भारत में इस्लाम की विजय का कारण बताइये।

प्र03 मुहम्मद–बिन–कासिम की सफलता और दाहिर के पराजय के क्या कारण थे?

प्र04 अरब आक्रमण के समय सिन्ध की सामाजिक एवं राजनीतिक दशा का वर्णन कीजिये।

प्र05 इस्लाम का भारतीय संस्कृति पर पड़े प्रभावों का उल्लेख कीजिए।

प्र06 भारतीय संस्कृति ने किस प्रकार इस्लाम को प्रभावित किया।

1.13 सन्दर्भ ग्रन्थ

1. सिन्हा, बिपिन बिहारी, मध्यकालीन भारतीय सभ्यता एवं संस्कृति।
2. श्रीवास्तव, आशीर्वादीलाल, भारत का इतिहास।
3. अहमद, इम्तियाज, मध्यकालीन भारत।
4. शर्मा, एल.पी., मध्यकालीन भारत, लक्ष्मीनारायण अग्रवाल।
5. लूनिया, बी. एन., भारतीय सभ्यता तथा संस्कृति का विकास।
6. खुराना, के. एल., भारत का सामाजिक, आर्थिक एवं सांस्कृतिक इतिहास।

इकाई–2 महमूद गजनवी एवं मोहम्मद गोरी का भारतीय अभियान

इकाई की रूपरेखा

2.1 प्रस्तावना

2.2 उद्देश्य

2.3 महमूद गजनवी का प्रारम्भिक जीवन

2.4 महमूद गजनवी का राज्यारोहण

2.5 महमूद गजनवी के भारतीय सैनिक अभियान

- 2.5.1 सीमान्त दुर्ग पर आक्रमण
- 2.5.2 पंजाब पर आक्रमण
- 2.5.3 भेरा पर आक्रमण
- 2.5.4 मुल्तान पर प्रथम आक्रमण
- 2.5.5 सुखपाल (सेवकपाल) पर आक्रमण
- 2.5.6 आनन्दपाल पर आक्रमण
- 2.5.7 नारायणपुर पर आक्रमण
- 2.5.8 मुल्तान पर आक्रमण
- 2.5.9 त्रिलोचनपाल पर आक्रमण
- 2.5.10 थानेश्वर पर आक्रमण
- 2.5.11 कश्मीर पर आक्रमण
- 2.5.12 मथुरा पर आक्रमण
- 2.5.13 कन्नौज, कालिंजर पर आक्रमण
- 2.5.14 पंजाब पर आक्रमण
- 2.5.15 ग्वालियर तथा कालिंजर पर आक्रमण
- 2.5.16 सोमनाथ पर आक्रमण
- 2.5.17 अन्तिम आक्रमण

2.6 महमूद गजनवी की मृत्यु

2.7 आक्रमणों का महमूद गजनवी को लाभ

2.8 मोहम्मद गोरी (1173–1206)

2.9 मोहम्मद के आक्रमणों के कारण

2.10 सिन्ध तथा मुल्तान की विजय

2.11 अन्हिलवाड़ और लाहौर पर आक्रमण

2.12 तराइन का प्रथम युद्ध (1191 ई0)

2.13 तराइन का दूसरा युद्ध

2.14 मेरठ और कोइल पर अधिकार

2.15 कन्नौज विजय

2.16 अन्य विजयें

2.17 खोखरों पर आक्रमण

2.18 गोरी की मृत्यु

2.19 सारांश

2.20 अभ्यासार्थ प्रश्न

2.21 सन्दर्भ ग्रन्थ

2.1 प्रस्तावना

11वीं–12वीं शताब्दी में भारतीय इतिहास की सर्वाधिक महत्वपूर्ण घटना है भारत पर तुर्क आक्रमणकारियों का आक्रमण तथा भारत में अपनी सत्ता की स्थापना। इस अभियान के दो प्रमुख नेतृत्वकर्त्ता महमूद गजनवी एवं शहाबुद्दीन मोहम्मद गोरी थे। इन आक्रमणकारियों ने आक्रमण एवं विजय की जो प्रक्रिया आरम्भ की, उसकी परिणति अन्ततः भारत में तुर्की राज्य की स्थापना में हुई। भारत पर तुर्कों की विजय के स्थायी तथा दूरगामी प्रभाव पड़े। तुर्क आक्रमण की शुरूआत महमूद गजनवी द्वारा की गई। उसने भारत पर 1000 ई0 से 1026 ई0 के मध्य 17 बार आक्रमण किया और उसने प्रत्येक युद्ध में सफलता पाई। भारतीय धन–लालसा ने उसे बार–बार भारत पर आक्रमण करने को प्रेरित किया और उसे प्राप्त करने में सफल भी हुआ। महमूद गजनवी के बाद मोहम्मद गोरी ने भारत पर निरंतर आक्रमण कर एक स्थायी साम्राज्य की स्थापना की। तराईन के द्वितीय युद्ध (1192 ई0) में पृथ्वीराज चौहान की पराजय के साथ ही भारत में तुर्कों की सफलता के द्वार खुल गये। तुर्कों ने भारत में न केवल एक विशाल साम्राज्य की स्थापना की, बल्कि यहाँ के राजनीतिक, सामाजिक, धार्मिक एवं सांस्कृतिक जीवन को अत्यधिक प्रभावित किया। कालान्तर में दो भिन्न परिवेश के लोगों के मिलने से एक नई संशोधित एवं मिश्रित संस्कृति का जन्म हुआ, जिसे इण्डो–इस्लामिक संस्कृति कहते हैं।

2.2 उद्देश्य

प्रस्तुत इकाई के अध्ययन से आप जान सकेंगे कि –

- तुर्कों की सफलता और भारतीय राजाओं की विफलता के सहायक तत्व कौन–कौन थे ?

- महमूद गजनवी का भारत में बार–बार आक्रमण करने एवं धन प्राप्ति के मुख्य उद्देश्य क्या थे?
- महमूद गजनवी के एवं मोहम्मद गोरी के अभियानों में मुख्य अन्तर क्या थे?
- मोहम्मद गोरी के भारत में अभियान के उद्देश्य एवं तुर्क साम्राज्य की स्थापना एवं उद्देश्यों को जान सकेंगे।
- तुर्कों के भारतीय अभियान के परिणाम।

2.3 महमूद गजनवी का प्रारम्भिक जीवन

महमूद गजनवी का जन्म 971 ई0 में हुआ था। उसकी माता जाबुलिस्तान के सरदार की कन्या थी। उसके पिता का नाम सुबुक्तगीन था। वह एक महान योद्धा एवं विजेता था। महमूद अपने पिता की तरह योग्य एवं वीर था। उसे बाल्यकाल में इस्लामी ढंग की श्रेष्ठ शिक्षा दी गयी थी। बाल्यावस्था से ही उसमें वीरोचित गुणों और युद्धप्रियता का विकास हुआ। उसने अपने पिता के साम्राज्य विस्तार और धर्म प्रचार के सपनों को साकार कर उसकी समस्त आशाओं को पूर्ण कर दिया। किशोरावस्था में ही उसने हिरात, खुरासान, निशापुर तथा पंजाब के जयपाल के खिलाफ युद्धों में अपने पिता को सक्रिय सहयोग दिया था। वह युद्धकला एवं राजकौशल में अत्यन्त प्रवीण था। अपने पिता के शासनकाल में वह खुरासान का प्रान्तीय शासक था। सुबुक्तगीन की मृत्यु के पश्चात् गजनी के अमीरों ने उसके छोटे भाई इस्माइल को गद्दी पर बैठा दिया, किन्तु जल्द ही महमूद ने इस्माइल को युद्ध में पराजित कर गद्दी पर अपना अधिकार कर लिया।

2.4 महमूद गजनवी का राज्यारोहण

सुबुक्तगीन की मृत्यु के एक वर्ष बाद तथा गृहयुद्ध में सफलता के पश्चात् 998 ई0 में बड़े शान–शौकत के साथ महमूद गजनवी गद्दी पर आरूढ़ हुआ। राज्यारोहण के समय उसकी अवस्था 27 वर्ष की थी। उस समय उसके राज्य में अफगानिस्तान और खुरासान सम्मिलित थे। एक विशाल साम्राज्य स्थापित करने के पश्चात उसने भारत पर आक्रमण करते की योजना बनाई।

2.5 महमूद गजनवी के भारतीय सैनिक अभियान (1000 ई0–1026 ई0)

महमूद गजनवी के द्वारा भारत पर किये गये आक्रमणों की संख्या में मतभेद है। बहुत से इतिहासकारों का मत है कि उसने 12 बार आक्रमण किये, किन्तु इतिहासकार इलियट के मत में 1000 ई0 से 1026 ई0 के बीच की अवधि में महमूद ने भारत पर 17 बार आक्रमण किये थे। अधिकांश विद्वान इलियट के मत का ही समर्थन करते हैं। इन आक्रमणों का संक्षिप्त वर्णन इस प्रकार है –

1. सीमान्त दुर्ग पर आक्रमण
2. पंजाब पर आक्रमण
3. भेरा पर आक्रमण

4. मुल्तान पर प्रथम आक्रमण
5. सुखपाल (सेवकपाल) पर आक्रमण
6. आनन्दपाल पर आक्रमण
7. नारायणपुर का आक्रमण
8. मुल्तान पर आक्रमण
9. त्रिलोचनपाल पर आक्रमण
10. थानेश्वर पर आक्रमण
11. कश्मीर पर आक्रमण
12. मथुरा पर आक्रमण
13. कन्नौज, कालिंजर पर आक्रमण
14. पंजाब पर आक्रमण
15. ग्वालियर और कालिंजर पर आक्रमण
16. सोमनाथ पर आक्रमण
17. अन्तिम आक्रमण

2.5.1 सीमान्त दुर्ग पर आक्रमण

महमूद ने 1000 ई0 में पिता के प्रतिद्वन्द्वी और शत्रु जयपाल के राज्य के सीमान्त दुर्गों पर आक्रमण कर उन्हें अपने अधीन कर लिया।

2.5.2 पंजाब पर आक्रमण

महमूद का प्रथम प्रसिद्ध आक्रमण 1001 ई0 में पंजाब के शाही वंश के शासक जयपाल के विरूद्ध हुआ। जयपाल और महमूद की सेनाओं में पेशावर के निकट 28 नवम्बर, 1001 ई0 को भीषण संग्राम हुआ। जयपाल ने शत्रु सेना का वीरता से सामना किया, परन्तु विजयश्री ने वरमाला महमूद के गले में ड़ाली। जयपाल को उसके सहयोगियों के साथ बन्दी बना लिया गया। उन्हें अपमानित किया गया और शारीरिक यातनायें दी गयीं। जयपाल ने विजेता को 25 सहस्त्र दिरहम और 50 हाथी देकर अपनी मुक्ति प्राप्त की। इसके बाद महमूद जयपाल की राजधानी वैहिन्द तक पहुँचा और नगर को खूब लूटा और अपार धनराशि लेकर गजनी वापस लौट गया। अन्त में महमूद और जयपाल के बीच सन्धि हो गयी। जयपाल ने महमूद को बड़ी मात्रा में धन दिया। भविष्य में जयपाल कोई उपद्रव नहीं कर सके इसलिए महमूद ने जयपाल के पुत्र और एक पौत्र को धरोहर के रूप में अपने पास रख लिया। जयपाल इस अपमान को न सह सका और उसने चिता

की अग्नि में स्वयं को भस्म कर लिया। जयपाल के उत्तराधिकारियों को उसका यह बलिदान याद रहा और उन्होंने निरन्तर 20 वर्षों तक महमूद का घोर विरोध किया।

2.5.3 भेरा पर आक्रमण

1003 ई0 में महमूद ने झेलम नदी के तट पर स्थित भेरा नामक स्थान पर आक्रमण किया। भेरा के शासक ने चार दिनों तक बड़ी वीरता और उत्साह से महमूद की सेना से युद्ध किया, परन्तु वह पराजित हो गया। विजय के बाद महमूद ने भेरा में खूब लूटपाट की और अपार धन लेकर गजनी लौट गया। महमूद ने भेरा को अपने राज्य में मिला लिया। भेरा के शासक ने पराजय, दुःख और लज्जा के कारण आत्महत्या कर ली।

2.5.4 मुल्तान पर प्रथम आक्रमण

महमूद का दूसरा महत्वपूर्ण आक्रमण मुल्तान पर हुआ, जहाँ पर करमाथी सम्प्रदाय का फतेह दाऊद शासन करता था। करमाथी लोग शिया सम्प्रदाय के अनुयायी थे और कट्टर सुन्नी उनसे घृणा करते थे। मुल्तान को विजय करने से पूर्व महमूद ने झेलम के बायें किनारे पर स्थित भेरा नगर पर आक्रमण किया। आनन्दपाल ने उसका विरोध किया, किन्तु उसे मार्ग से धकेलते हुए महमूद 1006 ई0 में मुल्तान पर चढ़ गया और उस पर अधिकार कर लिया। मुल्तान को महमूद ने जयपाल के एक नाती सुखपाल के सुपुर्द कर दिया। जयपाल की पराजय के बाद सुखपाल को महमूद बन्धक बनाकर गजनी ले गया और उसे बलपूर्वक मुसलमान बना लिया गया था। मुसलमान लोग उसे नौशाशाह कहते थे। अवसर पाकर सुखपाल ने इस्लाम त्याग दिया और महमूद के विरूद्ध विद्रोह का झण्डा खड़ा किया, किन्तु 1008 ई0 में सुल्तान ने मुल्तान लौटकर विद्रोह को दबा दिया और सुखपाल तथा दाऊद को कैद कर लिया। इस प्रकार मुल्तान, महमूद के विस्तृत साम्राज्य का अंग बन गया।

2.5.5 सुखपाल (सेवकपाल) पर आक्रमण

सुखपाल को महमूद ने मुल्तान का शासक नियुक्त किया था। बाद में इस्लाम धर्म का परित्याग कर वह मुल्तान का स्वतंत्र शासक बन बैठा। इस पर महमूद ने कुपित होकर 1008 ई0 में सेवकपाल को दण्ड देने के लिए मुल्तान पर आक्रमण कर दिया। सुखपाल से चार लाख दिरहम दण्ड के रूप में उनसे वसूल किया। उसे उत्तरी पंजाब में खदड़ दिया गया। इसके बाद दाऊद को पुनः मुल्तान का शासक नियुक्त कर दिया गया।

2.5.6 आनन्दपाल पर आक्रमण

आनन्दपाल ने दाऊद करमाथी को सहायता दी थी, इससे महमूद बहुत कुपित हुआ। उधर अफगानिस्तान के शासक के हाथों में मुल्तान के चले जाने से आनन्दपाल के राज्य पर दो ओर से आक्रमण का भय उपस्थित हो गया था। इसलिए दोनों प्रतिद्वन्द्वियों में संघर्ष होना अवश्यम्भावी था। महमूद का विश्वास था कि पंजाब पर पूर्णतया अधिकार किये बिना भारत में आगे बढ़ना और अपार धन लूटना असम्भव है। आनन्दपाल भी स्थिति को भली—भांति समझता था। उसने एक विशाल सेना एकत्रित की। पड़ोसी राजाओं ने भी, जो तुर्कों की बढ़ती हुई शक्ति को

रोकने के इच्छुक थे, उनकी सहायतार्थ सेनायें भेजीं। इस सेना को लेकर आनन्दपाल ने पेशावर की ओर कूच किया। महमूद ने वैहिन्द के सामने के मैदान में उसका मुकाबला (1009 ई0 के लगभग) किया और उसकी सेनाओं पर भयंकर प्रहार किया। भारतीय सेना क्षत–विक्षत होकर भाग खड़ी हुई। महमूद ने उसको खदेड़ा और कांगड़ा के पास नगरकोट के किले को घेर लिया। तीन दिन के भयंकर युद्ध के बाद नगर पर शत्रु का अधिकार हो गया। महमूद को लूट में बहुत सा धन मिला, जिसमें सोना व अन्य बहुमूल्य वस्तुएँ सम्मिलित थीं। इस तरह सिन्ध से नगरकोट तक का समस्त प्रदेश गजनी सुल्तान के अधीन हो गया। महमूद का इतिहासकार उतबी लिखता है कि नगरकोट की लूट में इतना धन मिला कि जितने भी ऊँट मिल सके, उन पर उसे लाद लिया गया, फिर भी बच रहा, जिसे अफसरों में बाँट दिया गया।

2.5.7 नारायणपुर पर आक्रमण

व्यापारिक एवं सैनिक दृष्टिकोण से उन दिनों राजस्थान में नारायणपुर का छोटा सा राज्य अत्यन्त महत्वपूर्ण था। इसी नगर से होकर उत्तरी भारत में अन्य प्रमुख राज्यमार्ग भी जाते थे। अतः इस नगर पर अधिकार कर लेने से महमूद की लूट का मार्ग सुलभ और प्रशस्त हो जाता। महमूद ने नारायणपुर पर आक्रमण किया और वहाँ के शासक को परास्त कर उसके साथ मैत्रीपूर्ण सम्बन्ध स्थापित कर लिये।

2.5.8 मुल्तान पर आक्रमण

सुखपाल को परास्त कर महमूद ने दाऊद को अपने अधीन कर मुल्तान का शासक नियुक्त किया था। दाऊद ने बाद में स्वतंत्र होने का प्रयास किया। उसको सीख देने के लिए 1010 ई0 में महमूद ने दाऊद के विरूद्ध मुल्तान पर आक्रमण किये। युद्ध में महमूद को सफलता मिली। विजयोपरान्त मुल्तान को गजनी के साम्राज्य में सम्मिलित कर लिया गया।

2.5.9 त्रिलोचनपाल पर आक्रमण

आनन्दपाल के पुत्र और उत्तराधिकारी त्रिलोचनपाल के विरूद्ध महमूद ने 1013 ई0 में आक्रमण किया, किन्तु इसमें उसे विशेष सफलता नहीं मिली। अतः दूसरे वर्ष पुनः आक्रमण किया। महमूद के योग्य सैन्य संचालन के कारण त्रिलोचनपाल परास्त हुआ और वह कश्मीर भाग गया। कश्मीर के शासक और त्रिलोचनपाल की सम्मिलित सेना ने महमूद की सेना का सामना किया, किन्तु महमूद पुनः सफल हुआ। महमूद की यह अन्तिम और निर्णायक सफलता थी। इसके पश्चात् महमूद ने त्रिलोचनपाल की राजधानी नन्दन पर अधिकार कर लिया और वहाँ तुर्क शासन की स्थापना की गयी।

2.5.10 थानेश्वर पर आक्रमण

थानेश्वर में चक्रवाक स्वामी का अत्यन्त प्रसिद्ध और सम्पन्न मन्दिर था। महमूद ने 1014 ई0 में थानेश्वर पर आक्रमण करने के लिए बढ़ा। मार्ग में सतलज नदी के पूर्वी किनारे पर राजाराम नामक एक हिन्दू शासक ने महमूद का मार्ग अवरूद्ध किया। यद्यपि युद्ध में महमूद विजयी हुआ, किन्तु उसे अपार क्षति उठानी पड़ी। इस विजय के बाद वह थानेश्वर पहुँचा। थानेश्वर के शासक ने महमूद का

बड़ी वीरता से सामना किया, किन्तु परास्त होकर भाग गया। थानेश्वर में लूटपाट, हत्या और बलात्कार के नंगे नृत्य हुए। नगर और चक्रवाक स्वामी के मन्दिर को मुस्लिम सैनिकों ने जमकर लूटा। चक्रवाक स्वामी की मूर्ति को उठाकर महमूद गजनी साथ ले गया और वहाँ अपमानजनक ढंग से उसे एक सार्वजनिक चौक में फेंक दिया गया। थानेश्वर की लूट से महमूद को अपार सम्पत्ति और हाथी प्राप्त हुए।

2.5.11 कश्मीर पर आक्रमण

कश्मीर के शासक ने त्रिलोचनपाल और उसके पुत्र भीमपाल को संरक्षण प्रदान किया था। अतः महमूद कश्मीर के शासक से चिढ़ा हुआ था। उसने 1015 ई0 में कश्मीर पर आक्रमण किया, किन्तु उसे विशेष सफलता नहीं मिली। 1021 ई0 में उसने पुनः कश्मीर पर आक्रमण किया, किन्तु इस बार फिर कश्मीर को जीतने में उसे सफलता नहीं मिली। अतः उसने कश्मीर विजय की कामना का त्याग कर दिया।

2.5.12 मथुरा पर आक्रमण

सन् 1018 में महमूद ने मथुरा के कलापूर्ण देवालयों को धराशायी कर दिया तथा उनकी अपार धन–सम्पदा को गजनी ले गया।

2.5.13 कन्नौज, कालिंजर पर आक्रमण

सन् 1019 में उसने कन्नौज के राठौर वंशीय राजा जयचन्द को अपना आधिपत्य स्वीकार करने के लिए बाध्य किया और कालिंजर में राजा नन्द को हराया। इन स्थानों से भी उसने जवाहरात, भेंट आदि काफी प्राप्त की।

2.5.14 पंजाब पर आक्रमण

सन् 1021 ई0 में महमूद ने एक बार फिर पंजाब पर आक्रमण किये। इस बार उसने पंजाब में सुव्यवस्थित प्रशासन स्थापित किया, अलग–अलग भागों में अपने प्रतिनिधि शासक नियुक्त किए और सामरिक महत्व के स्थानों पर सेनाएँ रखीं।

2.5.15 ग्वालियर तथा कालिंजर पर आक्रमण

सन् 1022 ई0 में महमूद का आक्रमण ग्वालियर तथा कालिंजर पर हुआ। दोनों के शासकों ने उसकी अधीनता स्वीकार कर ली। उसने बहुत सी भेंट लेकर महमूद गजनी लौट गया।

2.5.16 सोमनाथ पर आक्रमण

भारत में महमूद का अन्तिम प्रसिद्ध आक्रमण सोमनाथ पर हुआ, जो काठियावाड़ के तट पर स्थित था। कहा जाता है कि सोमनाथ के मन्दिर के पुजारियों ने यह शेखी मारी थी कि भगवान सोमनाथ दूसरे देवताओं से अप्रसन्न हो गये हैं, जिसके कारण ही बुतशिकन महमूद उन्हें तोड़ने और लूटने में समर्थ हुआ है। ब्राह्मणों के इस अहंकार से क्रुद्ध होकर ही महमूद ने सोमनाथ पर आक्रमण करने का संकल्प किया।

17 अक्टूबर, 1024 ई0 के दिन वह एक विशाल सेना लेकर गजनी से चल पड़ा। कहा जाता है कि इससे बड़ी सेना का उसने पहले कभी संचालन नहीं किया था। 10 नवम्बर को वह मुल्तान पहुँचा। चूँकि उसे राजपूताना के दुर्गम मरुस्थल से होकर गुजरना था, इसलिए मार्ग में उसने अत्यधिक सावधानी से काम लिया। प्रत्येक सैनिक को अपने साथ सात दिन के लिए भोजन, पानी और चारा ले चलने के लिए बाध्य किया गया। इसके अतिरिक्त महमूद ने सम्पूर्ण सेना के लिए पर्याप्त भोजन और पानी का प्रबन्ध किया, जिसे 30,000 ऊँटों पर लादा गया। जनवरी, 1025 ई0 में जब सुल्तान अन्हिलवाड़ पहुँचा, तो उसे यह देखकर अत्यन्त आश्चर्य हुआ कि राजा भीमदेव अपने अनुयायियों सहित राजधानी से भाग गया है। जो लोग पीछे रह गये थे, उन्हें आक्रमणकारियों ने हराया और लूट लिया, किन्तु नगर की जनता तथा सोमनाथ मन्दिर के पुजारी अपने स्थानों पर ही डटे रहे, क्योंकि उनका विश्वास था कि भगवान सोमनाथ की उपस्थिति के कारण हम लोग पूर्णतया सुरक्षित हैं। महमूद ने बिना अधिक कठिनाई के नगर पर अधिकार कर लिया और कत्लेआम की आज्ञा दे दी। 50,000 से भी अधिक स्त्री–पुरुष मौत के घाट उतार दिये गये। सुल्तान ने स्वयं सोमनाथ की मूर्ति को तोड़कर उसके टुकड़ों को गजनी, मक्का और मदीना भिजवा दिये। वहाँ वे गलियों में और खास मस्जिद की सीढ़ियों पर डलवा दिये गये, जिससे नमाज के लिए जाने वाले मुसलमान उन्हें अपने पैरों के नीचे रौंद सकें। इस मूर्ति की गणना संसार की महान आश्चर्यजनक वस्तुओं में की जाती थी। वह मन्दिर के बीच में स्थित थी और नीचे अथवा ऊपर बिना किसी सहारे के सधी हुई थी। हिन्दुओं की उसमें अत्यधिक श्रद्धा थी और जो भी उसे आकाश में स्थित देखता था, आश्चर्यचकित हो जाता था। छत में चुम्बक पत्थर के जो टुकड़े लगे हुए थे, उन्हें महमूद ने हटवा दिया। तुरन्त ही मूर्ति पृथ्वी पर गिर पड़ी और तोड़कर उसे टुकड़े–टुकड़े कर दिया गया। कहा जाता है कि मन्दिर की लूट में 20,00,000 दीनार से भी अधिक का धन आक्रमणकारियों को प्राप्त हुआ, जिसे लेकर महमूद सिन्ध के मार्ग से गजनी लौट गया।

2.5.17 अन्तिम आक्रमण

सन् 1027 ई0 में सोमनाथ पर विजय प्राप्त करने के बाद जब महमूद अपने देश लौट रहा था, तो नमक के पहाड़ों के पास रहने वाले जाटों अथवा खोखरो ने उसे कष्ट दिया। अतः उसने सन् 1027 ई0 में उन पर चढ़ाई की और उनका कठोरतापूर्वक दमन किया।

2.6 महमूद गजनवी की मृत्यु

30 अप्रैल, 1030 ई0 को महमूद की मृत्यु हो गयी। महमूद की मृत्यु के समय गजनी का साम्राज्य अपने विस्तार की सीमा पर था। शाही राजकोष धन–धान्य से परिपूर्ण था।

2.7 आक्रमणों का महमूद गजनवी को लाभ

महमूद गजनवी को भारत आक्रमण से जो लाभ हुआ, उसे अवर्णनीय कहा जा सकता है। आक्रमण से अपार–सम्पदा के साथ ही साथ अनेक शिल्पकार अथवा करीगर हाथ आये। जिसके बदौलत उसने समरकन्द को अलंकृत एवं कलाकृत किया। उसने असंख्य लोगों को युद्ध में प्राप्त कर दास के रूप में बेच दिया। अपार धन–सम्पदा के प्राप्ति से उसे मध्य–एशिया में अपनी शक्ति विस्तार

में मदद मिली। भारतीय धन के आधार पर वह मध्य एशिया में अपनी शक्ति चरम सीमा में ले जाने में सफल रहा। भारतीय दस्तकार, कारीगर और अन्य कलाकारों ने महमूद गजनवी के साम्राज्य को कला एवं संस्कृति से सुसज्जित किया।

2.8 शहाबुद्दीन मोहम्मद गोरी (1173–1206)

'गौर' गजनी और हिरात के मध्य एक छोटा सा पहाड़ी राज्य था, जो मुख्यतः कृषि प्रधान था और मध्य एशिया में घोड़ों के लिए प्रसिद्ध था। ग्यारहवीं सदी की शुरूआत तक गौर स्वतन्त्र रहा, परन्तु महमूद गजनी ने वहाँ के शासक को हराकर उससे अपनी अधीनता स्वीकार करवाई, परन्तु गजनवियों के पतन के बाद 12वीं सदी के शुरूआत में गौरों ने अपनी सत्ता स्थापित करने की कोशिश की। अन्ततोगत्वा गजनवियों की हार हुई और गौरों की विजय। अलाउद्दीन हुसैन ने गजनी को पूर्णतः भस्मीभूत कर दिया और उसके इस कार्य के लिए वह 'जहाँसोज' या जगद्दाहल कहलाने लगा। उसके बाद सैफुद्दीन तथा उसकी मृत्यु के बाद 1163 ई0 में गियासुद्दीन–बिन–सूरी गौर का सुल्तान बना। उसने गजनी पर अधिकार कर अपने भाई शहाबुद्दीन उर्फ मुईजुद्दीन मोहम्मद को गजनी का सूबेदार नियुक्त किया, वही आगे चलकर मोहम्मद गोरी के नाम से विख्यात हुआ। अपने भाई की मृत्यु के पश्चात् गजनी के साथ–साथ गौर का भी शासक हो गया।

2.9 मोहम्मद गोरी के आक्रमणों के कारण

मोहम्मद गोरी महत्वाकांक्षी और साहसी व्यक्ति था। गजनी का शासक होने के नाते वह अपने को पंजाब का न्यायोचित अधिकारी समझता था, क्योंकि पहले पंजाब गजनी साम्राज्य का अंग रह चुका था। उसके परिवार तथा गजनवी वंश में संघर्ष चल रहा था। इस तथ्य ने भी उसे पंजाब पर आक्रमण करने के लिए उत्तेजित किया, क्योंकि उस समय पंजाब महमूद गजनवी के एक वंशज खुशरव शाह अथवा खुसरव मलिक के अधीन था। इसके अतिरिक्त ख्वारिज्म के शाह के विरूद्ध भी गोरियों का दीर्घकाल से युद्ध चल रहा था। अपने उस मुख्य शत्रु के विरूद्ध सफलता प्राप्त करने के लिए भी पंजाब पर अधिकार करना गौर वंश के लिए अत्यन्त आवश्यक था। मुल्तान के करमाथी तथा लाहौर के गजनवी इन दोनों शत्रुओं से गोरियों को भयंकर संकट उपस्थित हो सकता था, इसलिए उनका नाश करना अति आवश्यक था। वह युग ऐसा था जिसमें सैनिक यश को अधिक महत्व दिया जाता था, इसलिए मोहम्मद गोरी भी विजय तथा शक्ति की अभिलाषा से उतावला हो रहा था। सभी महत्वाकांक्षी व्यक्तियों की भांति वह भी वृहत साम्राज्य का निर्माण करके धन और प्रतिष्ठा कमाना चाहता था। वह धार्मिक मुसलमान था, इसलिए भारत से मूर्ति पूजा का नाश करने और यहां के हिन्दुओं को हजरत मोहम्मद साहब का सन्देश देने को वह अपना पवित्र कर्तव्य समझता था, किन्तु हमें यह नहीं भूलना चाहिये कि मोहम्मद गोरी का दृष्टिकोण उतना धार्मिक नहीं था, जितना कि राजनीतिक। इसलिए उसका मुख्य उद्देश्य विजय थी न कि इस्लाम का प्रचार। दूसरा उद्देश्य वांछनीय था, किन्तु उसकी पूर्ति विजय द्वारा सरलता से हो सकती थी।

2.10 सिन्ध तथा मुल्तान की विजय

मोहम्मद गोरी का पहला आक्रमण सन् 1175 ई0 में मुल्तान पर हुआ। उस प्रान्त पर उस समय करमाथी लोग शासन करते थे, जो इस्लाम द्रोही माने

जाते थे। मोहम्मद गोरी ने नगर पर अधिकार कर के उसे अपने सूबेदार के सुपुर्द कर दिया। इसके उपरान्त वह ऊपरी सिन्ध में स्थित उच्छ की ओर बढ़ा। एक कहानी प्रचलित है कि उच्छ पर उस समय एक भट्टी राजपूत राज्य करता था, उसकी रानी गोरी के कुचक्रों में फँस गयी, उसने अपने पति को विष देकर मरवा डाला तथा किला आक्रमणकारी के हवाले कर दिया, परन्तु आधुनिक अनुसन्धानों ने इस कहानी को गलत सिद्ध कर दिया है, क्योंकि यह निश्चित है कि किसी भी भट्टी राजपूत ने सिन्ध के किसी भी भाग पर कभी शासन नहीं किया और इस समय उच्छ सम्भवतः एक करमाथी मुसलमान के अधिकार में था। मुल्तान की भांति उच्छ को भी गोरी ने सन् 1175 ई0 में ही जीता और सम्भवतः धोखे से। वह सम्पूर्ण सिन्ध को जीतकर अपने राज्य में मिलाना चाहता था, इसलिए सन् 1182 ई0 में उसने निचले सिन्ध पर आक्रमण किया और वहाँ के सुम्र शासक को अपनी अधीनता स्वीकार करने पर बाध्य किया।

2.11 अन्हिलवाड़ और लाहौर पर आक्रमण

सन् 1178 ई0 में गोरी ने गुजरात की राजधानी अन्हिलवाड़ पर आक्रमण किया, किन्तु मूलराज के हाथों बुरी तरह पराजित हुआ। इससे मुसलमानों का चरित्र बल गिर गया और राजपूतों में मुसलमानों का साहस के साथ सामना करने के लिए एक नई शक्ति संचारित हुई। इस हार के बाद उसने अपना ध्यान पंजाब की ओर लगाया। सन् 1179 ई0 में उसने पेशावर जीता। सन् 1181 ई0 में उसने लाहौर पर आक्रमण किया। इस समय खुसरो मलिक ने उसका सामना किये बिना ही अपने आपको समर्पित कर दिया और उसे उसने कई उपहार दिये और युद्ध बन्दी के रूप में अपने पुत्र को भी उसे गोरी को देना पड़ा। किसी पिता के द्वारा अपने पुत्र को युद्धबन्दी के रूप में देने के इतिहास में कम ही प्रमाण मिलते हैं। इसके बावजूद भी गोरी की गतिविधियाँ वहाँ चालू रहीं। सन् 1184 में वह पुनः पंजाब आया, स्यालकोट में एक दुर्ग बनाया और वापस चला गया। उसके इस प्रकार आने–जो से खुसरो को सन्देह हुआ। उसने उसके विरूद्ध खौखरों से मित्रता करने की सोची, परन्तु गुप्तचर विभाग की सक्षमता से मोहम्मद गोरी को यह बात मालूम पड़ गई। इसलिए उसने सन् 1186 ई0 में पुनः उस पर आक्रमण कर उसे हरा दिया और बन्दी बना लिया और बाद में उसका तथा उसके पुत्र का वध कर दिया। पंजाब को अन्ततोगत्वा गोर साम्राज्य में मिला लिया गया। बाद में मोहम्मद गोरी ने भटिण्डा और सरहिन्द पर भी अपना धिकार जमा लिया। भटिण्डा में उसने मलिक जियाउद्दीन गोरी को अपना गवर्नर नियुक्त किया।

2.12 तराइन का प्रथम युद्ध (1191 ई0)

पंजाब पर अधिकार हो जाने से मोहम्मद गोरी के हौसले बहुत बढ़ गये। पंजाब विजय के तीन वर्ष बाद पूरी तैयारी के साथ मोहम्मद गोरी ने सन् 1189 ई0 में दिल्ली के राजपूत शासक पृथ्वीराज चौहान के विरूद्ध भटिंडा के दुर्ग पर आक्रमण कर दिया। जल्द ही भटिंडा पर उसका अधिकार हो गया। भला पृथ्वीराज इसे कैसे बर्दाश्त कर सकता था। वस्तुतः वह एक वीर और साहसी शासक था। एक बड़ी सेना लेकर वह दिल्ली से भटिंडा की ओर बढ़ा। सन् 1191 ई0 में थानेश्वर से चौदह मील दूर तराइन के मैदान में मोहम्मद गोरी और पृथ्वीराज की सेनाओं में भयंकर युद्ध हुआ। इस युद्ध में अनेक राजपूत शासकों ने पृथ्वीराज को सैनिक तथा आर्थिक सहायता प्रदान की। फरिश्ता के अनुसार पृथ्वीराज की सेना

में लगभग दो लाख अश्वारोही और तीन सौ हाथी थे। मोहम्मद गोरी ने वीरता के साथ राजपूतों का सामना किया। राजपूत सैनिकों ने प्रचण्ड वेग से मुस्लिम सेना के दोनों पार्श्व भाग पर भयंकर आक्रमण किया। मोहम्मद गोरी की सेना इस आक्रमण को न रोक सकी और वह अस्त–व्यस्त हो गयी। इस युद्ध में पृथ्वीराज के भाई गोविन्दराज ने मोहम्मद गोरी को घायल कर दिया, मोहम्मद गोरी के एक स्वामीभक्त सेवक ने उसे मैदान से हटा दिया। सुल्तान के हट जाने से मुस्लिम सेना का उत्साह क्षीण पड़ गया और वह युद्ध से भाग खड़ी हुई। लगभग साठ किलोमीटर तक राजपूतों ने इस भागती हुई सेना का पीछा किया। राजपूतों ने सरहिन्द और भटिंडा पर पुनः अधिकार कर लिया। मुसलमान बुरी तरह से पराजित हुए थे, किन्तु मोहम्मद गोरी ने हिम्मत नहीं हारी। तब उसने पराजय का बदला लेने और नवीन अभियान शुरू करने के लिए अपनी सामरिक तैयारियाँ शुरू कर दीं।

2.13 तराइन का दूसरा युद्ध (1192 ई0)

तराइन की हार से सुल्तान शहबुद्दीन मोहम्मद गोरी बहुत दुःखी हुआ। फरिश्ता ने लिखा है – ''बदला लेने का निश्चय कर उसने नींद और आराम को अपने लिए हराम बना दिया।'' उसने अपनी सेना को पुनः संगठित किया और लगभग 1 लाख 20 हजार सैनिकों के साथ अपनी पराजय का दाग धोने के लिए सन् 1192 ई0 में ही पृथ्वीराज से युद्ध करने लिए पुनः तराइन में आ डँटा। इस बार मोहम्मद गोरी की विजय हुई और कहते हैं कि पृथ्वीराज चौहान युद्ध में ही मर गया। हसन निजामी का कहना है कि उसे अजमेर ले जाकर मारा गया। मिनहाज–उस–सिराज के अनुसार वह युद्धभूमि से भागने में सफल हो गया था, परन्तु सरसुती नामक स्थान पर पकड़ा गया और दौजख को भेज दिया गया। चन्दबरदाई ने पृथ्वीराज रासो में लिखा है कि पृथ्वीराज को बन्दी बनाकर गजनी ले जाया गया और वहाँ अन्धा किया गया। कर्नल टाड ने केवल यह लिखा है कि पृथ्वीराज बन्दी बनाया गया और तब मौत के घाट उतार दिया। जो भी हो, उसकी पराजय तो तय है। मोहम्मद गोरी ने इस विजय से दिल्ली, अजमेर, शिवालिक की पहाड़ियाँ, हाँसी व अन्य जिलों पर अपना अधिकार कर लिया।

2.14 मेरठ और कोइल पर अधिकार

सन् 1192–1193 में पृथ्वीराज को हराने के बाद जीते हुए भारतीय प्रदेशों का प्रबन्ध सेनापति कुतुबुद्दीन ऐबक पर डालकर गोरी गजनी लौट गया। कुतुबुद्दीन ने मेरठ, बरन, कोइल (अलीगढ़, दोआब) आदि कई स्थानों को जीतकर मुस्लिम राज्य में मिला लिया।

2.15 कन्नौज विजय

जयचन्द ने समझा था कि पृथ्वीराज को गोरी के खिलाफ सैनिक सहायता न देने से गोरी उस पर आक्रमण नहीं करेगा। लेकिन सन् 1194 ई0 में ही गोरी ने जयचन्द पर चन्दावर नामक स्थान पर आक्रमण कर दिया। जयचन्द ने डटकर लोहा लिया। उसकी विजय होने ही वाली थी कि उसकी आँख में तीर आकर लगा और वह हाथी से गिर पड़ा। उसके गिरते ही राजपूत सेना में भगदड़ मच गई। मोहम्मद गोरी की पूर्ण विजय हुई। फिर मोहम्मद गोरी ने कन्नौज और बनारस पर

अपना अधिकार कर लिया। उसने नागरिकों और मन्दिरों, जो धन के खजाने थे, को लूटा। इस लूट से गोरी को इतना धन प्राप्त हुआ कि उसे 1400 ऊँटों पर लाद कर ले जाया गया। कन्नौज विजय गोरी की एक महान सैनिक सफलता थी, जिसके फलस्वरूप मेरठ और बनारस के बीच का समृद्ध प्रवेश मुसलमानों के अधिकार में आ गया। उत्तर भारत का एक और प्रतापी एवं शक्ति शाली हिन्दू राज का अन्त हो गया। मुस्लिम शक्ति का विस्तार सुगम हो गया। राजपूतों की रही सही शक्ति को गहरा आघात पहुँचा। भारत के राजनीतिक और धार्मिक केन्द्र कन्नौज तथा बनारस मुस्लिम साम्राज्य के अंग हो गये। जयचन्द की भीषण पराजय के साथ ही गहड़वाल साम्राज्य की इतिश्री हो गई और बहुत से गहड़वाल (राठौर) भागकर जोधपुर की ओर आ गए।

2.16 अन्य विजयें

सन् 1195–1196 ई0 में बयाना पर अधिकार किया गया तथा ग्वालियर के नरेशों को वार्षिक कर देने को बाध्य किया गया। तत्पश्चात बुन्देलखण्ड और कालिंजर पर अधिकार किया गया। गोरी के एक अन्य सेनानायक बख्तियार खिलजी ने चुनार तथा कर्मनासा नदी के बीच के प्रदेश को मुस्लिम राज्य में मिला लिया। वह बिहार की राजधानी ओदन्तपुरी पर टूट पड़ा तथा कई बौद्ध भिक्षुओं का वध किया, मन्दिरों और विहारों को नष्ट किया एवं पुस्तकालयों को जला दिया। बिहार के बाद बंगाल पर भी सैनिक अभियान किया और उस पर कब्जा कर लिया गया। विक्रमशिला को भी तहस–नहस कर दिया गया।

2.17 खोखरों पर आक्रमण

सन् 1205 ई0 में मोहम्मद गोरी को ख्वारिज्म (मध्य एशिया) का शासक अलाउद्दीन मोहम्मद ने बुरी तरह अंधकुई पर पराजित किया। इसका लाभ उठाकर मुल्तान के खोखरों ने गोरी के प्रतिनिधि के विरूद्ध विद्रोह कर दिया। चूँकि कुतुबुद्दीन ऐबक इस विद्रोह को दबाने में सफल रहा, अतः गोरी को सन् 1206 ई0 में एक बार फिर भारत आना पड़ा। उसने विद्रोह को बड़ी शक्ति से कुचल दिया। हजारों खोखर निर्दयतापूर्वक मौत के घाट उतार दिये गये।

2.18 गोरी की मृत्यु

खोखरों का दमन करने के बाद जब गोरी वापस लौटकर गजनी जा रहा था, तब सन् 1206 ई0 में सिन्धु नदी के तट पर दमयक नामक स्थान पर शाम की नमाज अदा करते समय उसका वध कर दिया गया। कुछ कहते हैं कि किसी असन्तुष्ट सिपाही ने उसकी हत्या की, कुछ कहते हैं कि हत्यारे खोखर थे, कुछ कहते हैं कि इस्माइली सम्प्रदाय के लोग थे, कुछ कहते हैं कि दोनों ने षड्यन्त्र कर उसका वध कर दिया। उसकी मृत्यु के बाद गोरी वंश में और कोई सुल्तान नहीं हुआ, जो उसके विस्तृत साम्राज्य को सम्भाल सकता था। परिणामस्वरूप प्रान्तीय शासकों ने स्वतन्त्र राज्य स्थापित कर लिया। बख्तियार खिलजी ने बंगाल और बिहार में अपने को स्वतन्त्र घोषित कर दिया। कुतुबुद्दीन ऐबक दिल्ली का सम्राट बन बैठा। नासिरुद्दीन कुबाचा ने अपने को सिन्ध का स्वामी घोषित कर

दिया और यल्दौज ने गजनी के राज्य को जीत लिया। गोरी वंश भारत में एक चिरस्थायी मुस्लिम साम्राज्य की स्थापना करके स्वयं लुप्त हो गया।

2.19 सारांश

इस प्रकार हम कह सकते हैं कि महमूद गजनवी एवं मोहम्मद गोरी के सैनिक अभियानों ने विदेशी (तुर्क) आक्रमण के द्वार खोल दिये, दूसरी ओर भारतीय नरेशों की राजनीतिक विखण्डता और सैनिक दुर्बलता को भी उजागर कर दिया। महमूद गजनवी के आक्रमण से भारत उतना प्रभावित नहीं हुआ, जितना कि शहाबुद्दीन मोहम्मद गोरी के विजय अभियान से। मोहम्मद गोरी के विजय अभियान ने भारत में एक मुस्लिम राज्य की स्थापना कर दी, जो कालान्तर में भारतीय राजनीति के साथ–साथ समाज और संस्कृति को अत्यधिक प्रभावित किया। उपरोक्त दोनों विजेताओं ने भारतीय राजनीति के खोखलेपन और सैनिक दुर्बलता को जाहिर कर दिया। वास्तव में इन सैनिक अभियानों ने एक नये युग की शुरुआत की। भारत के लोग अब एक धर्म, समाज और संस्कृति परिचित हुए और इससे प्रभावित होकर समाज का एक बड़ा वर्ग इस नये धर्म में दीक्षित होने लगे। जबकि मोहम्मद गोरी भारत में अपना साम्राज्य स्थापित करने का दृढ़ संकल्पित था। भारतीय राजनीतिक दशा और सामाजिक विषमता उसकी इच्छापूर्ति में सहायक सिद्ध हुई और अंततः बारहवीं शताब्दी में यहाँ मुस्लिम साम्राज्य स्थापित हो गया। इसके कालान्तर में दूरगामी परिणाम निकले और जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में प्रभाव परिलक्षित हुआ।

2.20 अभ्यासार्थ प्रश्न

प्र01 महमूद गजनवी के प्रारम्भिक जीवन और उसके सैनिक अभियानों का वर्णन कीजिये।

प्र02 महमूद गजनवी के भारत पर आक्रमण करने के कारण एवं उद्देश्य क्या थे?

प्र03 महमूद गजनवी एवं मोहम्मद गोरी के भारतीय अभियान में मुख्य अंतर क्या था ?

प्र04 मोहम्मद गोरी ने भारत में किस प्रकार मुस्लिम साम्राज्य स्थापित किया ?

प्र05 तुर्कों के आक्रमण के परिणामों पर एक संक्षिप्त लेख लिखिये।

2.21 सन्दर्भ ग्रन्थ

1. मेहता, जे.एल., मध्यकालीन भारत का वृहत इतिहास।
2. लूनिया, बी.एन., भारतीय संस्कृति।
3. सिन्हा, बिपिन बिहारी, मध्यकालीन भारतीय सभ्यता एवं संस्कृति।
4. शर्मा, एल.पी., मध्यकालीन भारत।
5. वर्मा, हरिशचन्द, मध्यकालीन भारत भाग–1।

इकाई–3

तुर्क आक्रमण के समय भारत की दशा

इकाई की रूपरेखा

3.1 प्रस्तावना

3.2 उद्देश्य

3.3 3.3.1 राजनीतिक स्थिति

3.3.2 मुल्तान और सिन्ध के राज्य

3.3.3 हिन्दूशाही राज्य

3.3.4 कश्मीर

3.3.5 कन्नौज का राज्य

3.3.6 बंगाल का पाल वंश

3.3.7 राजपूत राज्य

3.3.8 दक्षिण के राज्य

3.4 सामाजिक संगठन

3.5 धार्मिक स्थिति

3.6 सैनिक स्थिति

3.7 आर्थिक स्थिति

3.8 सारांश

3.9 अभ्यासार्थ प्रश्न

3.10 सन्दर्भ ग्रन्थ

3.1 प्रस्तावना

तुर्कों के आक्रमण के समय भारत की राजनीतिक, सामाजिक, धार्मिक एवं सैनिक दशा अत्यन्त शोचनीय थी। इस समय भारत अनेक छोटे–बड़े राज्यों में विभक्त था। इन राज्यों में एकता, सहयोग, देश–प्रेम और राष्ट्रीयता की भावना के स्थान पर ईर्ष्या, द्वेष एवं संघर्ष की भावना विद्यमान थी। वास्तव में हर्षवर्द्धन (606–647 ई0) की मृत्यु के बाद उत्तरी भारत में राजनीतिक एकता का अन्त हो गया था। इसके बाद किसी ने भी भारत को एकीकृत और एकजुट करने का प्रयास नहीं किया। यशोवर्मन (700–770 ई0) की मृत्यु के पश्चात कन्नौज पर अधिकार के लिए राष्ट्रकूट, गुर्जर, प्रतिहार एवं पाल वंश के शासकों के मध्य त्रिवर्गीय संघर्ष प्रारम्भ हो गया। इस संघर्ष में तीनों वर्गों ने अपनी शक्ति का ह्रास किया। इसके बाद 7वीं से 12वीं शताब्दी तक अनेक स्वतंत्र प्रान्तीय राज्यों का उदय हुआ। इन

शासकों के युद्धकाल को भारतीय इतिहास में ''राजपूत युग'' कहा जाता है। राजपूतों के शासन का स्वरूप प्रायः सामन्तशाही राजतन्त्र था, जिसमें शासन की वास्तविक शक्ति सामन्तों के हाथों में होती थी, जो केन्द्रीय शक्ति की निर्बलता का लाभ उठाकर स्वतन्त्र होने का प्रयास करते रहते थे। साधारण जनता राज्य के कार्यों की ओर से उदासीन हो गयी थी। उन्हें शासन के उत्थान एवं पतन से कोई मतलब नहीं रह गया था। ऐसी स्थिति में महात्वाकांक्षी तुर्क आक्रमणकारियों ने पूर्ण लाभ उठाया।

राजपूतों के सामाजिक संगठन में भी दोष थे, उदाहरण के लिये जहाँ उनमें अपने कबीले अथवा जाति के लिए अत्यधिक प्रेम और निष्ठा की भावना थी, वहीं दूसरे वर्गों के प्रति ऐसी भावना का अभाव था। परिणामस्वरूप दूसरे वर्गों की स्वामिभक्ति और निष्ठा उन्हें भी पूर्ण रूप से प्राप्त नहीं हुई। एकता और समानता की भावना समाज में नहीं थी। ब्राह्मणों को समाज में ऊँचा स्थान प्राप्त हो गया था और निम्न वर्गों, जैसे शूद्र, चाण्डाल आदि को नीची निगाह से देखा जाता था। उन्हें अछूत जाति के रूप में देखा जाता था। राजपूत अपने को योद्धा और रक्षक समझते थे, और यही कारण है कि योग्यता के स्थान पर वर्ण और जाति को प्राथमिकता दी जाती थी। संक्षेप में कहा जा सकता है कि सामाजिक एकता की नितांत कमी थी, जिसका लाभ तुर्कों ने उठाया।

3.2 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात आप जान सकेंगे कि–

- भारत में तुर्कों की सफलता के मुख्य कारण क्या थे?
- तुर्कों के आक्रमण के समय भारत की राजनीतिक, सामाजिक, आर्थिक एवं धार्मिक स्थिति कैसी थी?
- भारतीयों के तुर्कों के विरूद्ध पराजय के उत्तरदायी कारण क्या थे?
- भारतीयों के सैन्य संरचना और युद्ध प्रणाली के दोष क्या थे?
- भारतीयों के मध्य सामाजिक दोष और वर्ण व्यवस्था का खोखलापन कैसे उजागर हुआ?
- तुर्क आक्रमण के सामाजिक, राजनीतिक, धार्मिक एवं सांस्कृतिक प्रभाव।

3.3.1 राजनीतिक स्थिति

तुर्कों के आक्रमण के समय भारत की राजनीतिक स्थिति अत्यन्त दयनीय थी। कुछ अंश में तो यह अरब आक्रमणकाल की अपेक्षा अब विदेशी आक्रमण हेतु और भी अधिक अनुकूल थी। आठवीं शताब्दी के प्रारम्भ में भारत में कोई विदेशी उपनिवेश नहीं था, किन्तु दसवीं शताब्दी में यहाँ मुल्तान और मंसूरा के दो विदेशी राज्य थे। इन राज्यों की जनसंख्या के एक बड़े वर्ग ने इस्लाम को अंगीकार कर लिया था। दक्षिण भारत में भी, विशेषकर मालाबार में, अरबों के उपनिवेश थे। इन भारतीय मुसलमानों की सहानुभूति गजनी तथा मध्य एशिया से आने वाले अपने मुसलमान बन्धुओं के साथ थी।

इस समय भारत अनेक छोटे–बड़े राज्यों में बँटा हुआ था। विभिन्न राज्यों के बीच आपसी सहयोग, एकता, देशभक्ति एवं राष्ट्रीयता की भावना की नितांत कमी थी। सभी शासक अपने समक्ष दूसरे शासक को तुच्छ समझते थे और उन्हें नीचा दिखाने का अवसर ढूंढते थे। डॉ0 ईश्वरी प्रसाद ने तत्कालीन भारत को ''स्वतंत्र राज्यों का समूह'' कहकर पुकारा है। भारत एक भौगोलिक अभिव्यक्ति मात्र बनकर रह गया था।

तुर्कों के आक्रमण के समय मुल्तान तथा सिन्ध पर अरबों का राज्य था। अरब शासक नाम मात्र के लिए खलीफा का प्रभुत्व स्वीकार करते थे। भारत के हिन्दू शासक इस क्षेत्र के मुस्लिम शासकों के प्रति उदारता की नीति का पालन करते थे। अरबों तथा भारतीय मुसलमानों के साथ सह्रदयता का बर्ताव किया जाता था। उन्हें अपने धर्म का प्रचार करने तथा नये लोगों को मुसलमान बनाने की छूट थी। शेष भारत में हिन्दू राजवंशों का शासन था। यहाँ कुछ प्रमुख राज्यों का उल्लेख अनिवार्य हो जाता है।

3.3.2 मुल्तान और सिन्ध के राज्य

ये दोनों क्षेत्र 8वीं शताब्दी के आरम्भ में ही अरबों द्वारा जीत लिये गये थे, परन्तु सन् 871 ई0 के आस–पास इन्होंने खलीफा की सत्ता का परित्याग कर दिया था। यहाँ करमाथी मुसलमानों का शासन था और मुल्तान का शासक फतह दाऊद था। सिन्ध में अरबों की सत्ता के अवशेष अभी भी बने हुए हैं।

3.3.3 हिन्दूशाही राज्य

पहला महत्वपूर्ण हिन्दू राज्य चिनाव नदी के हिन्दुकुश तक फैला हुआ था। इसमें काबुल भी सम्मिलित था। इस राजवंश ने 200 वर्षों तक अकेले ही अरब आक्रमण का सफलतापूर्वक सामना किया था, किन्तु अन्त में इसके शासकों को अफगानिस्तान (काबुल सहित) छोड़ने पर बाध्य होना पड़ा और उदभण्डपुर अथवा वैहिन्द को उन्होंने राजधानी बनाया। दसवीं शताब्दी में प्रसिद्ध जयपाल इस राज्य पर शासन करता था। वह वीर सैनिक तथा योग्य शासक था। उसके राज्य की स्थिति ऐसी थी कि गजनी से आने वाले आक्रमणकारी का पहला प्रहार उसी को झेलना पड़ा। उसने तुर्क आक्रमण का दृढ़तापूर्वक सामना किया परन्तु तुर्क शक्ति के आगे उसे घुटने टेकने पड़े।

3.3.4 कश्मीर

दूसरा महत्वपूर्ण राज्य कश्मीर था। यहां के प्रसिद्ध राजा शंकर वर्मन ने कश्मीर राज्य की सीमाओं का अनेक देशों में विस्तार किया, परन्तु वह उरस (आधुनिक हजारा जिला) के लोगों से युद्ध करता हुआ मारा गया। उसकी मृत्यु के उपरान्त राज्य में अराजकता फैल गयी। इसलिए कश्मीर के ब्राह्मणों ने अपनी जाति के यशस्कर नामक व्यक्ति को सिंहासन पर बैठा दिया। उसके वंश का थोड़े समय पश्चात् ही अन्त हो गया और पर्वगुप्त ने एक नये वंश की नींव डाली। पर्वगुप्त का उत्तराधिकारी उसका पुत्र क्षेमेन्द्र हुआ। उसके समय में राज्य की सम्पूर्ण शक्ति उसकी रानी दिद्दा के हाथ में रही। अन्त में इस शक्तिशाली स्त्री ने गद्दी पर अधिकार कर लिया और स्वयं शासिका बन बैठी। उसने सन् 1003 ई0 तक राज्य किया। तदुपरान्त राजा संग्राम राजसिंहासन पर बैठा। उसने लोहर वंश

की स्थापना की। इस प्रकार जब महमूद गजनवी ने भारत पर आक्रमण किया, तो उस समय कश्मीर के शासन की बागडोर एक स्त्री के हाथों में थी।

3.3.5 कन्नौज का राज्य

लगभग सन् 836 ई0 में कन्नौज में शक्तिशाली प्रतिहार राजवंश की नींव डाली गयी थी। इस वंश में वत्सराज, नागभट्ट द्वितीय, महिपाल आदि प्रतापी शासक हुए। इनके संघर्ष बंगाल के पाल तथा दक्षिण के राष्ट्रकूट शासकों से हुए। राष्ट्रकूट शासक इन्द्र तृतीय ने प्रतिहार शासक महिपाल को पराजित कर प्रतिहारों की शक्ति पर गहरा आघात किया। बुन्देलखण्ड के चन्देल, गुजरात के चालुक्य और मालवा के परमार, जो पहले प्रतिहारों के अधीनस्थ सामन्त थे, एक–एक कर स्वतंत्र हो गये। इस वंश का अन्तिम शासक राजपाल ही था। अपने प्रभुत्व काल में प्रतिहारों ने यद्यपि सफलतापूर्वक अरबों के विस्तार को रोक कर रखा, किन्तु वे गजनी के आक्रमणकारियों से अपने देश की रक्षा करने में असमर्थ रहे।

3.3.6 बंगाल का पाल वंश

पाल वंश के शासक देवपाल ने 39 वर्ष राज्य किया। सन् 833 ई0 तथा 878 ई0 के बीच किसी समय उसकी मृत्यु हो गयी। उसके उत्तराधिकारी दुर्बल हुए और उनके समय में बंगाल राज्य का तेजी से पतन होने लगा। परवर्ती पाल राजाओं का कन्नौज के प्रतिहारों से संघर्ष छिड़ गया, जिसके कारण बंगाल को भीषण आपत्तियों का सामना करना पड़ा। 11वीं शताब्दी के प्रथम चरण में यहाँ महिपाल प्रथम ने राज्य किया, जो महमूद गजनवी का समकालीन था। उसने कुछ हद तक अपने वंश के वैभव की पुनः स्थापना की, किन्तु बंगाल के कुछ भाग पर शक्तिशाली सामन्तों ने पहले ही अधिकार कर लिया था और वे नाममात्र को ही राजाओं का प्रभुत्व स्वीकार करते थे। जिस समय उत्तर–पश्चिमी भारत में महमूद गजनवी हत्या और लूट का ताण्डव कर रहा था, उसी समय बंगाल पर शक्तिशाली तमिल सम्राट राजेन्द्र चोल का आक्रमण हुआ। इस युद्ध में बंगाल को भीषण क्षति उठानी पड़ी, किन्तु भाग्य से दूरस्थ होने के कारण वह महमूद गजनवी के आक्रमणों से मुक्त रहा।

3.3.7 राजपूत राज्य

राजपूतों की सत्ता का उत्कर्ष 8वीं शताब्दी में हुआ और तुर्क आक्रमणों तक ये उत्तरी भारत के शासक बने रहे। आरम्भ में ये प्रतिहार शासकों के अधीनस्थ सामन्तों के रूप में रहे, लेकिन प्रतिहारों की शक्ति के पतन से लाभ उठाकर इन्होंने स्वतन्त्र राज्यों की स्थापना कर ली थी। दिल्ली पर तोमर वंश का शासन था, कन्नौज और काशी पर प्रतिहार वंश का शासन था, बुन्देलखण्ड के क्षेत्रों में चन्देलों का शासन था, आधुनिक जबलपुर के समीपवर्ती क्षेत्रों में स्थित चेदी का राज्य था, जहाँ कलचुरी वंश का शासन था। मालवा में परमार वंश का शासन था। गुजरात में सोलंकी राजपूतों का शासन था, जिनकी राजधानी अन्हिलवाड़ में थी। राजस्थान के क्षेत्र में अजमेर पर चौहानों का शासन था, जबकि चित्तौड़ में गुहिलों का शासन था।

3.3.8 दक्षिण के राज्य

इस काल में दक्षिण भारत भी अनेक छोटे–बड़े राज्यों में बँटा हुआ था। इन

राज्यों के बीच भी निरन्तर संघर्ष होते रहे। सम्पूर्ण दक्षिण में अशान्ति और अव्यवस्था की स्थिति बनी रही, अतः अर्थव्यवस्था तथा सांस्कृतिक क्षेत्रों में इस काल में दक्षिण का उल्लेखनीय विकास नहीं हो पाया। दक्षिण के पूर्ववर्ती चालुक्यों और राष्ट्रकूटों में प्रभुत्व के लिए दीर्घकाल तक संघर्ष हुए। इस भांति दक्षिण के ये दोनों राजवंश शक्तिहीन हो गये थे। इसके बाद दक्षिण में पल्लव वंश की शक्ति बढ़ी, किन्तु जल्द ही उनका भी पतन हो गया। तुर्कों के आक्रमणकाल में दक्षिण में दो प्रसिद्ध राज्य थे – कल्याणी (हैदराबाद) में परवर्ती चालुक्य और तंजौर में चोल राज्य। चोल शासकों में राजेन्द्र चोल अत्यन्त प्रतापी था। उसने उत्तर तथा दक्षिण के अनेक प्रदेश जीते। चोल तथा चालुक्य शासकों का आपसी सम्बन्ध मित्रतापूर्ण नहीं था। महमूद गजनवी के आक्रमण काल में दक्षिण के ये राज्य आपसी संघर्षों में लगे हुए थे।

इस प्रकार स्पष्ट हो जाता है कि तुर्कों के आक्रमण के समय भारत अनेक छोटे–बड़े राज्यों में विभक्त था। इन राज्यों में एकता, सहयोग, देश–प्रेम और राष्ट्रीयता की भावना के स्थान पर ईर्ष्या, द्वेष एवं संघर्ष की प्रधानता थी। शासन का स्वरूप प्रायः सामन्तशाही राजतन्त्र था। युद्ध में अधिक व्यस्त रहने के कारण इन सभी राज्यों की नीति पर सैनिक आवश्यकताओं का भारी प्रभाव रहता था। अतः लोकहितकारी कार्यों की अपेक्षाकृत उपेक्षा होती थी। साधारण जनता राज्य के कार्यों की ओर से उदासीन हो गयी थी। उन्हें शासन एवं राजवंशों के उत्थान अथवा पतन से कोई मतलब नहीं रह गया था। ऐसी राजनीतिक स्थिति महत्वाकांक्षी आक्रमणकारियों की हित में गई और तुर्कों ने इसका पूरा–पूरा लाभ उठाया।

3.4 सामाजिक संगठन

हिन्दू समाज जात–पात और भेदभाव की भावना से प्रभावित था। एकता और समानता की भावना समाज में न थी। मध्यकाल के आरम्भ से ही इस व्यवस्था में अनेक जटिलतायें प्रवेश करने लगी थीं और सामाजिक बंधुत्व की भावना संकीर्ण से संकीर्णतर होने लगी थी। इस व्यवस्था के कारण ब्राह्मणों को समाज में ऊँचा स्थान प्राप्त हो गया और निम्न वर्गों, जैसे शूद्र, डोम, चंडाल आदि को नीची निगाह से देखा जाता था। परमात्मा शरण का यह विचार है क जातिवाद की प्रथा ही तुर्कों के सामने हिन्दुओं की हार का मुख्य कारण थी। समाज अलग–अलग छोटे–छोटे वर्गों में विभाजित था। उच्च वर्ग या जाति के लोगों ने बड़ी संख्या में निम्न वर्गों को उनके अधिकारों से वंचित रखते हुए अपना स्वार्थ पूरा किया। ऐसा भी देखा गया है कि वर्णव्यवस्था ने लोगों की विचारधारा को संकुचित कर दिया और उनमें परस्पर आदान–प्रदान की भावना समाप्त हो गई। जाति व्यवस्था की खाई बढ़ती चली गई।

तुर्क आक्रमण के समय वर्णव्यवस्था अपनी चरम सीमा पर पहुँच गई थी। अलबरूनी हमें सूचित करता है कि केवल ब्राह्मण को मोक्ष प्राप्त करने का अधिकार था। उच्च स्थान प्राप्त होने के अलावा ब्राह्मण को कर का भुगतान नहीं करना पड़ता था, परन्तु डॉ0 घोषाल और डॉ0 अल्तेकर ने अलबरूनी के बताये हुए आधार पर यह स्पष्ट किया है कि न तो महाभारत से, न ही नारद–स्मृति और न दक्षिण भारत की खुदाई से यह जानकारी प्राप्त होती है कि ब्राह्मणों के सभी वर्ग कर देने से मुक्त थे।

ब्राह्मण का जीवन चार आश्रमों में विभाजित था – पहला आठ से पच्चीस साल तक 'ब्रह्मचर्य', जिसमें वह वेद का अध्ययन करता था; दूसरा पच्चीस से

पचास वर्ष तक 'गृहस्थ आश्रम'; तीसरा पचास से पचहत्तर वर्ष तक 'वानप्रस्थ आश्रम' और चौथा पचहत्तर वर्ष के बाद 'सन्यास आश्रम', जब वह गृह जीवन त्याग कर देता था और सन्यास धारण करते हुए मोक्ष की इच्छा में प्रवृत्त हो जाता था। इन सभी आश्रमों में गृहस्थ आश्रम सबसे महत्वपूर्ण था, क्योंकि यह व्यक्ति से यह माँग करता था कि जिस समाज में वह रहता है, उसके प्रति अपने सामाजिक, आर्थिक एवं राजनीतिक दायित्व को वह पूरा करे।

निम्नतम वर्ग में हादी, डोम, चंडाल, बड़हातू आदि आते थे, जिनको गंदा काम सौंपा गया था, जैसे गाँव भर के मलमूत्र की सफाई। प्रशासनिक वर्ग का मुख्य कार्य यही था कि वे वर्ग की कार्य व्यवस्था पर कड़ा नियंत्रण रखें। ऐसी स्थिति में ''वे अवैध सन्तान के समान समझे जाते थे और उनको जाति बहिष्कृत समझा जाता था।''

भारत में जाति व्यवस्था ने समाज को खोखला और आधारहीन बना दिया था। छुआ–छूत की भावना के कारण समाज की दशा और शोचनीय हो गई। अलबरूनी के अनुसार अगर कोई हिन्दू, मुसलमानों का कैदी बन जाता था, तो हिन्दू समाज उसे वापस नहीं लेता था। हिन्दू नहीं चाहते थे कि किसी अपवित्र को फिर से पवित्र किया जाय। एक तरह से जाति व्यवस्था ने भाईचारे और एकता की भावना समाप्त कर दी थी। इनके विरूद्ध मुसलमानों में जातिगत एकता थी, जिसके द्वारा तुर्क शासकों ने राजपूतों की जाति व्यवस्था को कठोर आघात पहुँचाया। जाति व्यवस्था के कारण तुर्कों को युद्धों में सफलता मिली। व्यक्तिगत और जातिगत दृष्टिकोण से वर्ण व्यवस्था निन्दनीय थी। वर्णव्यवस्था के बुरे प्रभाव पर विचार करते हुए बेनी प्रसाद ने लिखा है कि ''वर्णव्यवस्था को प्रोत्साहन देने से व्यक्तिगत मूल्यों हो ह्रास होता है। यह व्यक्तित्व पर आक्रमण करता है और निम्न वर्ग का अस्तित्व समाप्त सा हो जाता है। यह स्वतंत्र अभिव्यक्ति को समाप्त कर देता है। वर्ण व्यवस्था का सिद्धान्त मनुष्य के प्रति मनुष्य की घृणा को दर्शाता है।''

3.5 धार्मिक स्थिति

धार्मिक दृष्टि से भी इसकाल में गिरावट स्पष्ट होता है। हिन्दू और बौद्ध दोनों ही धर्मों में कदाचार एवं अनाचार फैल गया था। धर्म की मूल भावना लुप्त हो गयी थी और उसका स्थान कर्मकाण्ड ने ले लिया था। वाममार्गी सम्प्रदाय लोकप्रिय हो गये थे, मुख्यतया बंगाल और कश्मीर में अपना जड़ जमा लिया था। सुरापान, माँस का प्रयोग और व्यभिचार इन वाममार्गी अनुयायियों की धार्मिक क्रियाओं में सम्मिलित थे। इनका प्रभाव समाज के अन्य वर्गों पर भी पड़ रहा था। बौद्ध–विहार, मठ और हिन्दू–मन्दिर अनाचार और भोग विलास के अड्डे बन गये थे। मन्दिरों में देवदासियों (अविवाहित लड़कियाँ, जो देवता की पूजा के लिए रखी जाती थीं) की प्रथा भ्रष्टाचार एवं व्यभिचार का एक मुख्य कारण बन गयी थी। ऐसी ही स्थिति बौद्ध–विहारों और मठों की थी। शिक्षण संस्थाएँ भी इस भ्रष्टाचार से मुक्त न रही थी। विक्रमशिला महाविद्यालय के एक विद्यार्थी के पास शराब की बोतल पायी गयी, जिसके बारे में उसने बताया कि वह उसे एक भिक्षुणी ने दी थी। इससे भी अधिक महत्वपूर्ण बात यह हुई कि उस विद्यार्थी ने अनाचार या दण्ड पाने के योग्य कोई कार्य किया था अथवा नहीं, इस प्रश्न को लेकर विद्यालय के अधिकारियों में मतभेद हो गया था। शासक और शिक्षित वर्ग पर अनैतिकता का यह प्रभाव देश की दुर्बलता के लिए पर्याप्त था। धर्म जो सत्कर्म, त्याग, देश–प्रेम और मनोबल की वृद्धि में सहायक हो सकता था, उस समय अनाचार, भोग–विलास आलस्य का कारण बना हुआ था।

समाज और धर्म की यह स्थिति भारत की सांस्कृतिक विलासिता का भी कारण थी। कला और साहित्य दोनों ही उस समय की दशा के अनुकूल बन गये थे। स्थापत्य कला, मूर्ति कला, चित्रकला आदि से भी वाशल्य और भोग–विलास की प्रवृत्ति का आभास होता है। साहित्य में 'कुटिनी–मतम' और 'समय–मत्रक' (वैश्या की आत्मकथा) उस समय के साहित्य की प्रतीक मात्र थीं। खजुराहो, पुरी आदि के मन्दिर और मूर्तियाँ उस समय की कला की रुचि का प्रतीक थीं।

3.6 सैनिक स्थिति

राजपूत राजाओं ने सैनिक संगठन को सुदृढ़ बनाने और एक स्थाई व नियमित सेना का निर्माण करने विशेष रूचि नहीं थी। शासन–प्रणाली सामन्ती ढ़ंग की थी। जिसमें सामन्तों के पास सैनिक टुकड़ियाँ होती थी और सकंटकाल में वे राजा को सैनिक सहायता देते थे। इसप्रकार युद्ध के समय राजा लोग सामन्तों।की सैनिक टुकड़ियों को एकत्रित करके ही प्रायः शत्रु से लड़ते थे। इस प्रकार के एकत्रित सैनिको में ना तो समान कौशल और ना ही अनुशासन होता था और न वे एक निश्चित ढ़ग से लड़ ही पाते थे। सैनिक दृष्टि से भारत ने अपने शस्त्रों और युद्ध–शैली में सुधार करने का कोई प्रयत्न नहीं किया था। भारतीय उस समय भी हाथियों पर निर्भर रहते थे, तलवार, कटार और भाला उनके मुख्य हथियार थे तथा उनकी युद्ध शैली रक्षात्मक अधिक व आक्रामक कम थी। उत्तर–पश्चिम सीमा पर भारतीयों ने न तो किले बनवाये थे और न ही किसी अन्य रक्षा पद्धति का निर्माण किया था, जबकि उसी दिशा से आक्रमण का भय था। इस कारण सैनिक दृष्टि से भारत दुर्बल था।

3.7 आर्थिक स्थिति

यद्यपि आर्थिक दृष्टि से भारत सम्पन्न था, किन्तु दुर्भाग्यवश उसकी सम्पन्नता भी उसके दुःख का कारण बन गयी। भारत एक धन्य–धान्य से परिपूर्ण देश था। कृषि, विभिन्न उद्योग–धन्धे तथा वाणिज्य व्यवसायों की उन्नति के कारण देश में धन–दौलत की काफी वृद्धि हो गयी थी। आम व्यक्तियों ने खूब धन संचित कर लिया था। देवालयों में आधुनिक बैंकों की भांति अपार सम्पत्ति एकत्र थी। भारत विदेशी आक्रमणकारियों के लिए 'सोने की चिड़िया' समान था। भारत की असीम सम्पत्ति की कहानी का विदेशों में भी प्रचार था। विदेशी लुटेरों के लिए यह प्रलोभन उन्हें भारत पर आक्रमण करने के लिए बाध्य कर रहा था। महमूद के भारतीय आक्रमण का प्रधान उद्देश्य भी भारतीय सम्पत्ति का अपहरण करना ही था।

एक ओर हम भारत की आर्थिक सम्पन्नता को देखते हैं, तो दूसरी ओर भारतीय सामन्ती अर्थव्यवस्था की बुराइयाँ भी देखने को मिलती है। आर्थिक दृष्टि से समाज के विभिन्न वर्गों में गहरी असमानता थी। राजा, सामन्त, दरबारी, व्यापारी तथा अधिकारीगणों का जीवन तो समृद्ध एवं विलासपूर्ण था, किन्तु दूसरी ओर गाँव के साधारण लोग, कृषक, मजदूर आदि अभाव पीड़ित नहीं रहते हुए भी सुख चैन की जिन्दगी नहीं जी सकते थे। उन्हें कठोर परिश्रम करना पड़ता था तब जाकर वे दो समय का खाना जुटा पाते थे। इस प्रकार की आर्थिक विषमता सदा ही हानिकारक सिद्ध होती है।

3.8 सारांश

निष्कर्ष के रूप में हम कह सकते हैं कि भारत में गुप्तों के पतन और हर्षवर्द्धन के शासन के उपरान्त भारत की राजनीतिक एकता समाप्त हो गई। सम्पूर्ण भारत अब छोटे–छोटे राज्यों में विभाजित हो गया था। इन राज्यों में सामन्तों का बोलबाला हो गया। इस काल में सामाजिक, धार्मिक, नैतिक एवं सैनिक दृष्टिकोण से भी भारतीय दुर्बलता एवं गिरावट उजागर हो गई, जिसका लाभ अरबों एवं तुर्कों ने उठाया। वर्ण व्यवस्था एवं सामाजिक जटिलता ने भारतीय समाज के खोखलेपन को विदेशी शक्ति के सामने उजागर कर दिया। यही कारण है कि बाद के समय में विदेशी शक्ति ने न केवल राजनीतिक व्यवस्था को परिवर्तित किया, बल्कि भारतीय समाज और संस्कृति पर भी अमिट छाप छोड़ी।

3.9 अभ्यासार्थ प्रश्न

प्र01 तुर्क आक्रमण के समय भारत की राजनीतिक व सामाजिक दशा का वर्णन कीजिये।

प्र02 तुर्की आक्रमण के समय भारत की आर्थिक एवं धार्मिक स्थिति का वर्णन कीजिये।

प्र03 तुर्की आक्रमण के समय भारतीय सैन्य संरचना का विश्लेषण कीजिये।

प्र04 तुर्कों के विरूद्ध भारतीयों के पराजय के मुख्य कारण क्या थे?

प्र05 तुर्कों के भारतीय अभियान में सफलता के क्या कारण थे?

3.10 सन्दर्भ ग्रन्थ

1. सिन्हा, बिपिन बिहारी, मध्यकालीन भारतीय सभ्यता एवं संस्कृति।
2. मेहता, जे.एल., मध्यकालीन भारत का वृहत इतिहास।
3. मित्तल, ए.के., भारत का राजनीतिक एवं सांस्कृतिक इतिहास।
4. खुराना, के.एल., मध्यकालीन भारतीय संस्कृति।
5. अहमद, इम्तियाज, मध्यकालीन भारत।

इकाई–4

पूर्व मध्यकालीन राज्य एवं त्रिकोणीय संघर्ष

इकाई की रूपरेखा

4.1 प्रस्तावना

4.2 उद्देश्य

4.3 पूर्व मध्यकालीन राज्य एवं प्रमुख वंश

4.3.1 गुर्जर प्रतिहार वंश उत्पत्ति एवं संस्थापक

4.3.2 इतिहास के साधन

4.3.3 राष्ट्रकूट वंश उत्पत्ति एवं संस्थापक

4.3.4 इतिहास के साधन

4.4 पाल वंश उत्पत्ति एवं संस्थापक

4.4.1 इतिहास के साधन

4.5 त्रिकोणीय संघर्ष

4.6 सारांश

4.7 अभ्यासार्थ प्रश्न

4.8 सन्दर्भ ग्रन्थ

4.1 प्रस्तावना

हर्षवर्द्धन (606 ई0 से 647 ई0) की मृत्यु के पश्चात् उत्तर भारत में राजनीतिक विकेन्द्रीकरण एवं विभाजन की शक्तियाँ एक बार पुनः सक्रिय हुई। दक्षिण भारत में भी विकेन्द्रीकरण की स्थिति चरम पर थी। वस्तुतः यह काल पारस्परिक संघर्ष तथा प्रतिद्वन्द्विता का काल था। हर्ष की मृत्यु के पश्चात् उत्तर भारत की राजनीतिक गतिविधियों का केन्द्र बिंदु कन्नौज बन गया। अधिकार करने हेतु विभिन्न शक्तियों में संघर्ष प्रारम्भ हुआ।

4.2 उद्देश्य

प्रस्तुत इकाई के अध्ययन से आप जान सकेंगे कि–

- किन शक्तियों के मध्य लगभग दो सौ वर्षों तक कन्नौज पर आधिपत्य हेतु निरन्तर संघर्ष होता रहा।
- त्रिपक्षीय संघर्ष ने किस प्रकार इन शक्ति को नष्ट कर इनकी कमजोरियों को उजागर किया।

- त्रिपक्षीय संघर्ष के पश्चात किस प्रकार विदेशी शक्तियों के लिए भारत विजय सरल हो गया।
- त्रिपक्षीय संघर्ष के परिणाम क्या हुऐ।

4.3 पूर्व मध्यकालीन राज्य एवं प्रमुख वंश

750 और 1000 ई0वी0 के मध्य उत्तर भारत और दक्षिण भारत में कई शक्तिशाली साम्राज्यों का उदय हुआ। इनमें से तीन वंश ऐसे थे, जिन्होंने आपस में संघर्ष किया। यह संघर्ष कन्नौज पर आधिपत्य के लिए हुआ। इनमें से एक था पाल वंश, जिसका नवीं सदी के मध्य तक पूर्वी भारत में एक शक्तिशाली राज्य था। पश्चिमी भारत और उत्तरी गंगा की घाटी में दसवीं सदी तक प्रतिहार राजवंश का प्रभुत्व था। उधर दक्षिण भारत में राष्ट्रकूटों का वर्चस्व था, जो समय–समय पर उत्तर भारत के प्रदेशों पर भी अपना आधिपत्य स्थापित कर लेते थे। वस्तुतः इन तीनों शक्तिशाली साम्राज्यों के मध्य संघर्ष चलता रहा। यद्यपि इन साम्राज्यों पर शासन राष्ट्रकूट वंश ने किया। वह न केवल उस काल का सबसे शक्तिशाली साम्राज्य था, बल्कि उसके आर्थिक तथा सांस्कृतिक क्षेत्रों ने उत्तर और दक्षिण भारत के मध्य सेतु का भी काम किया।

सातवीं सदी के पूर्वाद्ध से ही कन्नौज भारत की राजनीति का केन्द्र बिंदु रहा था। उस काल में उत्तरी भारत पर आधिपत्य का कोई भी दावा कन्नौज पर अधिकार के बिना निरर्थक था। कन्नौज तथा उसके मध्यदेश का सामरिक महत्व भी था, क्योंकि पालों के लिए मध्य भारत तथा पंजाब और प्रतिहारों एवं राष्ट्रकूटों के लिए गंगा दोआब में पहुँचने के मार्ग पर कन्नौज से ही नियंत्रण होता था। इसके अतिरिक्त गंगा–यमुना दोआब, जो प्रचुर मात्रा में राजस्व का स्त्रोत था। अतः इस पर बिना नियंत्रण किये कोई भी साम्राज्य शक्तिशाली नहीं हो सकता था।

4.3.1 गुर्जर प्रतिहार वंश उत्पत्ति एवं संस्थापक

यह एक राजपूत जाति थी। राजपूत शब्द संस्कृत के "राजपुत्र" का अपभ्रंश है। गुर्जर प्रतिहारों की उत्पत्ति का प्रश्न बहुत ही विवादास्पद है। कनिंघम इन्हें यू–ची जाति का वंशज मानते हैं और इनका सम्बन्ध कुषाण जाति से बताते हैं। इनके मत का आधार है–'ब्रोच गुर्जर' नामक एक ताम्रपत्र, जो शक सम्वत् 900 (978 ई0) का है परन्तु क्योंकि इस ताम्रपत्र की ऐतिहासिकता में सन्देह है इसलिए उस पर आधारित तथ्यों को भी पूर्णरूपेण स्वीकार नहीं किया जा सकता।

गुर्जर के समर्थन में विद्वानों ने उसे 'खजर' नामक जाति की संतान कहा है जो हूणों के साथ भारत आई थी। इस मत के समर्थक सर्वप्रथम कैम्पवेल तथा जैक्सन ने किया किन्तु यह कल्पना आधारित मत माना गया है क्योंकि विदेशी आक्रमणकारियों में खजर नामक किसी भी जाति के विषय में साक्ष्य नहीं मिलता। भारतीय इतिहासकार इन्हें भारतीय मानते हैं। के0एम0 मुंशी ने गुर्जर शब्द को स्थानवाचक बताया, जिसका उल्लेख पाँचवी–छठीं शती से मिलने लगता है। स्मिथ, ह्वेनसांग के आधार पर उनका आदि स्थान आबू पर्वत के उत्तर–पश्चिम में स्थित भीममल मानते हैं। इस प्रकार गुर्जर–प्रतिहारों की उत्पत्ति एक विवादित विषय है। इस वंश का संस्थापक नागभट्ट प्रथम (730 ई0–756 ई0) था। गुर्जर प्रतिहार वंश की स्थापना हरिश्चन्द्र नामक राजा ने की किन्तु वंश का वास्तविक प्रथम महत्वपूर्ण राजा नागभट्ट प्रथम था, जिसने अरबों से लोहा लिया था और पश्चिमी भारत

में एक शक्तिशाली राज्य की स्थापना की थी। ग्वालियर प्रशस्ति में उसे म्लेच्छों का नाशक बताया गया है।

4.3.2 इतिहास के साधन व मुख्य शासक

इस वंश के इतिहास के प्रामाणिक साधन में सर्वाधिक उल्लेखनीय मिहिरभोज का ग्वालियर अभिलेख है जो एक प्रशस्ति के रूप हैं, इसमें प्रतिहार राजवंश के शासकों की राजनैतिक उपलब्धियों तथा वंशावली को ज्ञात करने का मुख्य साधन है। साहित्यिक साधन में राजशेखर कृत–काव्यमीमांसा, कर्पूरमंजरी आदि प्रमुख हैं। इस वंश के प्रमुख शासक निम्नलिखित हैं–:

नागभट्ट प्रथम : यह प्रतिहार वंश का वास्तविक संस्थापक माना जाता है। ग्वालियर अभिलेख से पता चलता है कि उसने एक शक्तिशाली म्लेच्छ शासक की विशाल सेना को नष्ट कर दिया। यह मच्छेल संभवतः सिन्ध का अरब शासक था। इस प्रकार नागभट्ट ने अरबों के आक्रमण से पश्चिमी भारत की रक्षा की तथा उनके द्वारा रौंदे हुए अनेक प्रदेशों का जीत लिया।

वत्सराज : यह देवराज का पुत्र था। इसने कन्नौज पर आक्रमण कर वहाँ के शासक इन्द्रायुध को हराया तथा उसे अपने अधीन कर लिया। वत्सराज ने सर्वाधिक महत्वपूर्ण सफलता गौडों के विरुद्ध प्राप्त की। वत्सराज ने पाल वंश के धर्मपाल को भी पराजित किया परन्तु उसे राष्ट्रकूट वंश के ध्रुव से हार का सामना करना पड़ा।

मिहिरभोज (836 ई0–885 ई0) : रामभद्र का पुत्र और उत्तराधिकारी मिहिरभोज प्रथम इस वंश का महत्वपूर्ण शासक हुआ। राजा बनने के उपरान्त उसका पहला कार्य साम्राज्य दृढ़ीकरण था। सर्वप्रथम उसने अपने पिता के निर्बल शासन–काल में स्वतन्त्र हुए प्रान्तों को पुनः अपने अधीन किया। उसने कलचुरिचेदि तथा गुहिलोत वंशों के साथ मैत्री सम्बन्ध स्थापित किये। उत्तर–पश्चिम में उसका साम्राज्य पंजाब तक, पूर्व में गोरखपुर के कलचुरि उसके सामन्त थे तथा सम्पूर्ण अवध का क्षेत्र उसके अधीन था। भोज के शासनकाल का अरब यात्री सूलेमान बड़े उच्च शब्दों में वर्णन करता है। उसके अनुसार "इस राजा के पास बहुत बड़ी सेना है, अन्य किसी राजा के पास उसके जैसी अश्वसेना नहीं है वह अरबों का सबसे बड़ा शत्रु है, यद्यपि वह अरबों के राजा को सबसे बड़ा राजा मानता है"।

4.3.3 राष्ट्रकूट वंश उत्पत्ति एवं संस्थापक

राष्ट्रकूटों की उत्पत्ति के विषय में अनेक मत दिये जाते हैं। इस वंश के कुछ लेखों में इन्हें 'रट्ट' कुल का बताया गया है। 'वर्धा ताम्रपत्र' राष्ट्रकूटों को 'रट्टा' नामक राजकुमारी से सम्बन्धित करते हैं। इस आधार पर आर0जी0भण्डारकर का निष्कर्ष है कि राष्ट्रकूट तुंग कुल के थे। तुंग का पुत्र रट्ट था। इसी का वंश राष्ट्रकूट कहा गया। किन्तु यह निष्कर्ष असंगत लगता है, क्योंकि हमें किसी भी तुंग या रट्ट नाम के शासक की जानकारी नहीं है।

वस्तुतः राष्ट्रकूट पहले प्रशासनिक अधिकारी थे। इस शब्द का अर्थ है– 'राष्ट्र (प्रान्त) का कूट अर्थात् प्रधान'। प्राचीन काल में साम्राज्य का विभाजन कई राष्ट्रों में किया जाता था। जिस प्रकार ग्राम का अधिकारी ग्रामकूट होता था। उसी प्रकार राष्ट्र का अधिकारी 'राष्ट्रकूट' था। इन अधिकारियों की कालान्तर में एक विशिष्ट जाति बन गयी। एक लेख में दन्तिदुर्ग को यदुवंश की सात्यकि शाखा से

उत्पन्न बताया गया है। कुछ लेख इन्हें चन्द्रवंशी क्षत्रिय बताते हैं। राधनपुर के लेख इस वंश के गोविन्द तृतीय की तुलना यदुवंशी कृष्ण से की गई है। इस प्रकार राष्ट्रकूटों को क्षत्रिय मानना ही अधिक समीचीन लगता है। बादामी के चालुक्यों को अपदस्थ करने वाले राष्ट्रकूट मूलतः लट्टलूर (महाराष्ट्र के उस्मानावाद जिले में वर्तमान लाटूर) के निवासी थे। लेखों में उन्हें 'लट्टलूरपुरवराधीश्वर' कहा गया है। यह स्थान पहले कर्नाटक में था। इस कुल के लोग चालुक्यों के राज्य में जिलाधिकारी (राष्ट्रकूट) थे।

4.3.4 इतिहास के साधन एवं मुख्य शासक

प्रमुख राष्ट्रकूट लेखों का विवरण इस प्रकार हैं– दन्तिदुर्ग के एलोरा तथा सामन्तगढ़ के ताम्रपत्राभिलेख, गोविन्द तृतीय के राधनपुर, वनि दिन्दोरी तथा बड़ौदा के लेख, अमोघवर्ष प्रथम का संजन अभिलेख, इन्द्र तृतीय का कमलपुर अभिलेख, गोविन्द चतुर्थ के काम्बे तथा संगली के लेख, कृष्ण तृतीय के कोल्हापुर, देवली तथा कर्नाट के लेख। उपर्युक्त लेखों में से अधिकांश तिथियुक्त हैं। इनसे राष्ट्रकूट राजाओं की वंशावली, उनके सैनिक अभियानों, धार्मिक अभिरूचि, शासन–व्यवस्था आदि सभी बातों का ज्ञान प्राप्त हो जाता है। उक्त लेख राष्ट्रकूट इतिहास के प्रामाणिक साधन हैं। राष्ट्रकूट वंश के प्रमुख शासक निम्नलिखित हैं।

दन्तिदुर्ग : राष्ट्रकूट वंश की स्वतंत्रता का जन्मदाता प्रथम शासक दन्तिदुर्ग था। उसने बादामी के चालुक्य शासक विक्रमादित्य द्वितीय के सामन्त के रूप में अपना जीवन प्रारम्भ किया। उसने अपने स्वामी की आज्ञा से गुजरात के चालुक्य राजा जनाश्रय पुलकेशिन की ओर से अरबों से युद्ध किया तथा उन्हें पराजित किया था। दन्तिदुर्ग ने अपना विजय अभियान पूर्व तथा पश्चिम दिशा से प्रारम्भ किया ताकि चालुक्य सम्राट का कम से कम प्रतिरोध सहना पड़े। अन्ततः उज्जैन पर अपना अधिकार कर लिया। इस प्रकार दन्तिदुर्ग एक महान् विजेता तथा कूटनीतिज्ञ शासक था।

कृष्ण प्रथम : दन्तिदुर्ग के पश्चात् उसका चाचा कृष्ण प्रथम शासक बना था। उसने राजा बनते ही लाट प्रदेश में आक्रमण कर कर्क द्वितीय को पराजित किया तथा प्रदेश में अपनी स्थिति मजबूत बना ली। उसने बादामी के चालुक्य वंश का विनाश, गंगवंश के विरुद्ध सफलता, वेंगी के चालुक्य राज्य पर अधिकार हेतु प्रयास किये। इस प्रकार कृष्ण प्रथम एक योग्य तथा कुशल योद्धा सिद्ध हुआ। अपनी विजयों के कारण उसने अपनी स्थिति दक्षिण में सर्वोच्च बना ली।

ध्रुव (धारावर्ष) : अपने बड़े भाई गोविन्द द्वितीय के विरुद्ध विद्रोह कर ध्रुव ने राष्ट्रकूट शासन की बागडोर अपने हाथ में ले ली।जब कन्नौज पर अधिकार करने के लिए प्रतिहार तथा पाल राजवंशों में संघर्ष चल रहा था। उसी समय ध्रुव ने स्थिति का लाभ लेते हुए प्रतिहार राजवंश पर आक्रमण कर दिया जिसमें उसने वत्सराज को पराजित किया। इसके बाद गंगा–यमुना के दोआब में ही उसने बंगाल के पाल शासक धर्मपाल को हराया। इस विजय की पुष्टि संजन के लेख से होती है। ध्रुव ने कुल 13 वर्षों तक राज्य किया। उसी मृत्यु 793 ई0 में हुई।

4.4 पाल वंश उत्पत्ति एवं संस्थापक

यह बंगाल का राजवंश था। शशांक की मृत्यु के पश्चात् (637 ई0) लगभग एक शताब्दी तक बंगाल में अराजकता और अव्यवस्था का वातावरण व्याप्त

रहा। आठवीं शताब्दी ईसवी् के मध्य अशान्ति एवं अव्यवस्था से ऊब कर बंगाल के प्रमुख नागरिकों ने गोपाल नामक एक सुयोग्य सेनानायक को अपना राजा बनाया। गोपाल ने जिस नवीन राजवंश की स्थापना की उसे 'पाल वंश' कहा जाता है। यह एक क्षत्रिय राजवंश था जिसने बंगाल में लगभग चार सौ वर्षों तक राज्य किया। इस दीर्घकालीन शासन में राजनीतिक तथा सांस्कृतिक दोनों की दृष्टियों से बंगाल की अभूतपूर्व प्रगति हुई।

4.4.1 इतिहास के साधन एवं मुख्य शासक

पालवंश का इतिहास धर्मपाल का खालीमपुर लेख, देवपाल के मुंगेर लेख, नारायणपाल का भागलपुर ताम्रपत्राभिलेख, नारायणपाल का बादल स्तम्भ लेख, महीपाल प्रथम के बानगढ़, नालन्दा तथा मुजफ्फरपुर से प्राप्त लेखों से प्राप्त होता है। पाल वंश के प्रमुख शासक निम्नलिखित हैं –

गोपाल (750 ई0वी0–770 ई0वी0) : पालवंश के संस्थापक गोपाल का पितामह दयितविष्णु एक विद्वान था तथा उनका पिता व्यपट एक योग्य सैनिक था। गोपाल ने बंगाल में शान्ति और सुव्यवस्था स्थापित की तथा अपने शासन के अन्त तक सम्पूर्ण बंगाल पर अपना अधिकार सुदृढ़ कर लिया। वह बौद्ध मतानुयायी था तथा नालन्दा में उसने एक विहार का निर्माण करवाया था।

धर्मपाल (770 ई0वी0–810 ई0वी0) : छठी सदी के उत्तरार्द्ध में गोपाल का उत्तराधिकारी उसका पुत्र धर्मपाल पाल वंश का राजा बना। उस समय राजपूताना तथा मालवा में गुर्जर–प्रतिहार वंश का शासक वत्सराज पूर्व की ओर अपने साम्राज्य का विस्तार कर रहा था तो वहीं दूसरी ओर दक्षिण में राष्ट्रकूट शक्तिशाली थे और उनकी लोलुप दृष्टि कन्नौज पर थी। धर्मपाल को इन दोनों शक्तियों के साथ संघर्ष करना पड़ा। सर्वप्रथम प्रतिहार नरेश वत्सराज से धर्मपाल को पराजय का सामाना करना पड़ा। तत्पश्चात् वत्सराज को राष्ट्रकूट ध्रुव ने हरा दिया। धर्मपाल ने अपनी शक्ति सुसंगठित कर अपने को सम्पूर्ण उत्तर भारत का स्वामी बना लिया। धर्मपाल एक उत्साही बौद्ध था। उसके लेखों में उसे परमसौगात कहा गया है। उसने विक्रमशिला तथा सोमपुरी में प्रसिद्ध विहारों की स्थापना की। वह शास्त्रों का ज्ञाता था तथा सभी जाति के लोगों का सम्मान करता था।

देवपाल (810 ई0–850 ई0) : देवपाल धर्मपाल की राष्ट्रकूटवंशीय पत्नी रन्नादेवी से उत्पन्न पुत्र था। वह पालवंश का सबसे अधिक शक्तिशाली शासक था। बादल लेख में बताया गया है कि उसने उत्कलों को उखाड़ फेंका, हूणों के गर्व को चूर्ण किया तथा द्रविड़ और गुर्जर राजाओं के अभिमान को विदीर्ण कर समुद्रों से घिरी हुई समस्त पृथ्वी पर शासन किया। उसके शासनकाल में पाल साम्राज्य अपने उत्कर्ष की पराकाष्ठा पर पहुँच गया। उसका प्रभाव असम, उड़ीसा तथा सुदूर दक्षिण में व्याप्त था। वह भी बौद्ध मतानुयायी था। उसने ओदान्तपुरी के प्रसिद्ध बौद्धमठ का निर्माण करवाया था। जावा के शैलेन्द्रवंशीय शासक बालपुत्रदेव के अनुरोध पर देवपाल ने उसे नालन्दा में एक बौद्ध विहार के निर्माण हेतु पाँच गावँ दान में दिये। उसका चालीस वर्षों का शासन बंगाल के इतिहास में शान्ति एवं समृद्धि का काल रहा।

4.5 त्रिकोणीय संघर्ष

हर्ष के पश्चात् कन्नौज विभिन्न शक्तियों के आकर्षण का केन्द्र बन गया।

इसे वही स्थान प्राप्त हुआ जो गुप्तयुग तक मगध का था। उत्तर भारत का चक्रवर्ती शासक बनने के लिये कन्नौज पर अधिकार करना आवश्यक करना आवश्यक समझा जाने लगा। राजनैतिक महत्व होने के साथ–साथ कन्नौज नगर का आर्थिक महत्व भी काफी बढ़ गया तथा यह भी इसके प्रति आकर्षण का महत्वूपर्ण कारण सिद्ध हुआ था। व्यापार–वाणिज्य की दृष्टि से भी यह नगर काफी महत्वपूर्ण था क्योंकि यहाँ से विभिन्न दिशाओं को व्यापारिक मार्ग जाते थे। जिस प्रकार पूर्वकाल में मगध उत्तरारपथ के व्यापारिक मार्ग को नियंत्रित करता था उसी प्रकार की स्थिति कन्नौज ने भी प्राप्त कर ली। अतः इस पर अधिकार करने के लिए आठवीं शताब्दी की तीन बड़ी शक्तियों– पाल, गुर्जर–प्रतिहार तथा राष्ट्रकूट– के बीच त्रिकोण संघर्ष प्रारम्भ हो गया जो आठवीं–नवीं शताब्दी के उत्तर भारत के इतिहास की सर्वाधिक महत्वपूर्ण घटना है।

आठवीं शती के अन्त में गुर्जर–प्रतिहार नरेश वत्सराज (780–805 ई0) राजपूताना और मध्य भारत के विशाल भू–भाग पर शासन करता था। बंगाल के पालों का एक शक्तिशाली साम्राज्य स्थापित हुअ। वत्सराज का पाल प्रतिद्वन्दी धर्मपाल (770–810 ई0) था। वत्सराज और धर्मपाल का समकालीन राष्ट्रकूट नरेश ध्रुव (780–793 ई0) था। वह भी दक्षिण भारत में अपना राज्य सुदृढ़ कर लेने के पश्चात् राजधानी कन्नौज पर अधिकार करना चाहता था। अतः कन्नौज पर आधिपत्य के लिए प्रथम संघर्ष वत्सराज, धर्मपाल तथा ध्रुव के बीच हुआ

सर्वप्रथम कन्नौज पर वत्सराज तथा धर्मपाल ने अधिकार करने की चेष्टा के परिणामस्वरूप दोनों मं गंगा–यमुना के दोआब में युद्ध हुआ। युद्ध में धर्मपाल की पराजय हुई। इसका उल्लेख राष्ट्रकूट शासक गोविन्द तृतीय के राधनपुर लेख (808 ई0) में हुआ है जिसके अनुसार 'मदान्ध वत्सराज ने गौड़राज की राजलक्ष्मी को आसानी से हस्तगत कर उसके दो राजछत्रों को छीन लिया'। इस प्रकार वत्सराज ने कन्नौज पर अधिकार कर लिया तथा वहाँ का शासक इन्द्रायुध उसकी अधीनता स्वीकार करने लगा। इसी समय राष्ट्रकूट नरेश ध्रुव ने विन्ध्यपर्वत पार कर वत्सराज पर आक्रमण किया। वत्सराज बुरी तरह परास्त हुआ तथा वह राजपूताना के रेगिस्तान की ओर भाग खड़ा हुआ। राधनपुर लेख में कहा गया है कि उसने वत्सराज के यश के साथ ही उन दोनों राजछत्रों को भी छीन लिया जिन्हें उसने गौड़ नरेश से लिया था। ध्रुव ने पूर्व की ओर बढ़कर धर्मपाल को भी पराजित कर दिया। संजन लेख के अनुसार उसने 'गंगा–यमुना' के बीच भागते हुए गौड़राज की लक्ष्मी के लीलारविन्दों और श्वेतछात्रों को छीन लिया। परन्तु इन विजयों के पश्चात् ध्रुव दक्षिण भारत लौट गया जहाँ 793 ईसवी में उसकी मृत्यु हो गयी।

ध्रुव के उत्तर भारत के राजनीतिक दृश्य से ओझल होने के बाद पालों तथा गुर्जर–प्रतिहारों में पुनः संघर्ष प्रारम्भ हो गया। इस समय पालों का पलड़ा भारी था। खालीमपुर अभिलेख मे वर्णन मिलता है कि धर्मपाल ने कान्यकुब्ज के राजा का अभिषेक किया। इसे भोज, मत्स्य, मद्र, कुरू, यदु, यवन, अवन्ति, गन्धार तथा कौर के राजाओं ने अपना मस्तक झुकाकर धन्यवाद देते हुये स्वीकार किया था। इस विवरण से स्पष्ट है कि कन्नौज के राजदरबार में उपस्थित उक्त सभी शासक धर्मपाल की अधीनता स्वीकार करते थे। परन्तु उसकी विजयें स्थायी नहीं हुई। गुर्जर–प्रतिहार वंश की सत्ता को जीता तथा कन्नौज पर आक्रमण कर चक्रायुध को वहाँ से निकाल दिया। नागभट्ट कन्नौज को जीतने मात्र से संतुष्ट नहीं हुआ, अपितु उसने धर्मपाल के विरूद्ध भी प्रस्थान कर दिया। मुंगेर में काव्यात्मक विवरण इस प्रकार प्रस्तुत करता है–'बंगनरेश अपने गजों, अश्वों एवं

रथों के साथ घने बादलों के अन्धकार की भांति आगे बढ़कर उपस्थित हुआ किन्तु त्रिलोकों को प्रसन्न करने वाले नागभट्ट ने उदीयमान सूर्य की भांति उस अन्धकार को काट डाला'। इस विवरण से स्पष्ट है कि युद्ध में धर्मपाल की पराजय हुई। भयभीत पालनरेश ने राष्ट्रकूट शासक गोविन्द तृतीय (793–814 ई0) से सहायता मांग नागभट्ट पर आक्रमण किया। संजन ताम्रपत्र से पता चलता है कि उसने नागभट्ट द्वितीय को पराजित किया तथा मालवा पर अधिकार कर लिया। धर्मपाल तथा चक्रायुध ने स्वतः उसकी अधीनता स्वीकार कर ली। गोविन्द आगे बढ़ता हुआ हिमालय तक जा पहुँचा परन्तु वह उत्तर में अधिक दिनों तक नहीं ठहर सका। उसकी अनुपस्थिति का लाभ उठाकर दक्षिण के राजाओं ने उसके विरूद्ध एक संघ बनाया जिसके फलस्वरूप उसे शीघ्र ही अपने गृह–राज्य वापस जाना पड़ा।

भोज प्रथम के बाद उसका पुत्र महेन्द्रपाल प्रथम शासक हुआ जिसने 910 ई0 तक शासन किया। बिहार तथा उत्तरी बंगाल के कई स्थानों से उसके लेख मिलते हैं जिनमें उसे 'परमभट्टारकपरमेश्वरमहाराजाधिराजमहेन्द्रपाल' कहा गया है। इनसे स्पष्ट है कि मगध तथा उत्तरी बंगाल के प्रदेश भी पालों से गुर्जर–प्रतिहारों ने जीत लिया। इन प्रदेशों के मिल जाने से प्रतिहार–साम्राज्य अपने उत्कर्ष की पराकाष्ठा पर पहुँच गया।

इस प्रकार साम्राज्य के लिए नवीं शताब्दी की तीन प्रमुख शक्तियाँ– गुर्जर–प्रतिहार, पाल तथा राष्ट्रकूट–में जो त्रिकोणात्मक संघर्ष प्रारम्भ हुआ था, उसकी समाप्ति हुई। देवपाल की मृत्यु के बाद पाल उत्तरी भारत की राजनीति में ओझल हो गये तथा प्रबल शक्ति के रूप में उनकी गणना न रही। अन्तोगत्वा प्रतिहारों की सफलता के साथ युद्ध समाप्त हुआ। ऐसा ज्ञात होता है कि प्रतिहार शासक महिपाल प्रथम (912–943 ई0) के समय में राष्ट्रकूट राजाओं इन्द्र तृतीय तथा कृष्ण तृतीय ने कन्नौज नगर पर आक्रमण किया तथा थोड़े समय के लिए प्रतिहारों के अधिकार को चलायमान कर दिया। किन्तु राष्ट्रकूटों की सफलता क्षणिक रही और उनके हटने के बाद वहां प्रतिहारों का अधिकार पुनः सुदृढ़ हो गया। अब प्रतिहारों की गणना उत्तर भारत की सर्वाधिक महत्वपूर्ण शक्ति के रूप में होने लगी।

4.6 सारांश

सारांश के रूप में हम कह सकते हैं कि उत्तर भारत स्थित कन्नौज पर अधिकार एवं स्वामित्व हेतु पाल, प्रतिहार एवं राष्ट्रकूट के मध्य त्रिकोणीय संघर्ष ने इन्हें आंतरिक रूप से कमजोर कर दिया। यह सत्य है कि कन्नौज का अपना व्यापारिक, आर्थिक एवं सामरिक दृष्टि से महत्व था और उस पर स्वामित्व से काफी लाभ पहुँचता, परन्तु निरन्तर युद्ध में व्यस्त रहना कहीं अधिक हानिकारक सिद्ध हुआ। तीनों क्षेत्रीय शक्तियों की आपसी कमजोरी का लाभ विदेशी शक्तियों ने उठाया। पहले अरब और बाद में तुर्कों ने इस अवसर का लाभ उठाते हुए भारत में एक नये राजवंश की शुरूआत की। जिसका दूरगामी परिणाम निकला। अब भारतीयों की सत्ता और शासन सदा के लिए समाप्त हो गया और उनके स्थान पर तुर्कों का पदार्पण हुआ।

इस त्रिकोणीय संघर्ष ने यह नहीं बतलाया कि कौन राज्य करेगा बल्कि यह अवश्य सिद्ध कर दिया कि हम में से कोई भी राज्य नहीं करेगा। इस संघर्ष के पश्चात् एकीकृत भारत का सपना धूमिल हो गया और सम्पूर्ण भारत

सामन्तवादी अथवा जागीरदारी प्रथा का शिकार हो गया। कालान्तर में इसका हानिकारक परिणाम निकला और भारत विदेशी शक्ति के अधीन हो गया।

4.7 अभ्यासार्थ प्रश्न

प्र01 पाल, प्रतिहार एवं राष्ट्रकूट का परिचय दीजिए एवं इनके मध्य त्रिकोणीय संघर्ष के कारणों का विश्लेषण कीजिये।

प्र02 पूर्व मध्य काल की राजनीतिक दशा का वर्णन कीजिए।

प्र03 त्रिकोणीय संघर्ष के परिणाम की चर्चा कीजिए।

प्र04 पूर्व मध्यकाल में कन्नौज के व्यापारिक, आर्थिक एवं सामरिक महत्व का उल्लेख कीजिए।

4.8 सन्दर्भ ग्रन्थ

1. झा, द्विजेन्द्रनारायण एवं श्रीमाली, कृष्णमोहन, प्राचीन भारत का इतिहास।
2. श्रीवास्तव, के.सी., प्राचीन भारत का इतिहास एवं संस्कृति।
3. खन्ना एवं बंसल, प्राचीन भारत का इतिहास।
4. शर्मा, एल0पी0, प्राचीन भारत।
5. सिन्हा, बिपिन बिहारी, प्राचीन भारतीय इतिहास।

इकाई–5
भारतीय राजवंशों की अवनति

इकाई की रूपरेखा

5.1 प्रस्तावना

5.2 उद्देश्य

5.3 राजनीतिक कारण

- 5.3.1 भारतीय नरेशों के मध्य राजनीतिक एकता अभाव
- 5.3.2 जागीरदारी अथवा सामन्ती व्यवस्था
- 5.3.3 राजनीतिक, प्रशासनिक एवं अन्य दोष
- 5.3.4 राजपूतों में कूटनीतिज्ञता का अभाव

5.4 सामाजिक दुर्बलता

5.5 धार्मिक कारण

5.6 आर्थिक कारण

5.7 सैनिक कारण

5.8 अन्य कारण

5.9 सारांश

5.10 अभ्यासार्थ प्रश्न

5.11 सन्दर्भ ग्रन्थ

5.1 प्रस्तावना

7वीं से 12वीं शताब्दी के मध्य भारत में अनेक स्वतंत्र क्षेत्री राज्यों का उदय हुआ। इस काल को भारतीय इतिहास में राजपूत युग के नाम से जाना जाता है। इस काल में राजपूतों ने अपने उच्च आदर्श, अदम्य साहस, असीम उत्साह, देशभक्ति तथा अलौकिक वीरता का परिचय दिया। उन दिनों राजनीतिक शक्ति के रूप में केवल राजपूत राज्यों का ही महत्व था। राजपूतों के कार्यों एवं नीतियों ने भारत में सामन्तशाही संस्थाओं को जन्म दिया। बाद में यह सामन्त अधिक शक्तिशाली हो गये और स्वतन्त्र राज्य के लिए चुनौतियाँ उत्पन्न करने लगे। दूसरी ओर जो आगे चलकर उनकी अवनति का कारण बन गये। भारतीय राजवंश अवनति की ओर अग्रसर थे, जिसका मुख्य कारण यहाँ राजनीतिक एकता का अभाव था। भारतीय शासक आपस में परस्पर संघर्ष किया करते थे। प्रत्येक महत्वाकांक्षी शासक अपने पड़ोसियों पर आक्रमण कर उन्हें पराजित करने का प्रयत्न करता था। शासन का स्वरूप सामन्तवादी होने के कारण वास्तविक शक्ति सामन्तों के हाथों में होती थी, जो केन्द्रीय शक्ति की निर्बलता का लाभ उठाकर स्वतन्त्र होने का प्रयत्न करते थे। साधारण जनता राजनीतिक विषयों से उदासीन हो गयी थी। ऐसी स्थिति में भारतीय राजवंशों का पतन अवश्य था। इसके अतिरिक्त वर्णव्यवस्था के कारण शासन एवं देश की रक्षा का भार केवल राजपूतों

पर था। इससे समाज के अन्य वर्ग राजकीय दायित्व एवं कर्तव्यों से दूर होती चली गई। उनमें राजा, राज्य और राज्यभक्ति की भावना जाती रही, जिसके परिणाम घातक साबित हुए। दूसरी ओर विदेशी चुनौती दिन–प्रतिदिन बढ़ती चली गई। राजनीतिक दुर्बलता, सामाजिक विषमता तथा धार्मिक भिन्नता ने भारतीयों के खोखलेपन को उजागर कर दिया। इसका लाभ विदेशी आक्रमणकारी, विशेषकर तुर्कों ने उठाया।

भारतीय नरेशों, विशेषकर राजपूत राजाओं की कुछ कमियाँ भी थी। उनका सैन्य संगठन एवं संचालन तुर्कों की अपेक्षा दोषपूर्ण था। विदेशी आक्रमणकारियों के विरूद्ध उनकी कोई खास रणनीति नहीं थी, जिस कारण बार–बार उन्हें पराजय का सामना करना पड़ा। उनके अन्दर आपसी मतभेद बहुत थे तथा एकता के अभाव में कभी एकजुट होकर विदेशी आक्रमणों का सामना नहीं कर पाये। आंतरिक कलह और संघर्ष के कारण आपस में निरन्तर लड़ते रहते थे, जिस कारण उनकी शक्ति क्षीण होती चली गई। भारतीय नरेशों के मध्य दूरदर्शिता एवं कूटनीतिज्ञता का भी सर्वथा अभाव था, जिसका खामियाजा उन्हें अपना राज्य खोकर चुकाना पड़ा। दूसरी ओर सामन्तवादी एवं जागीरदारी व्यवस्था ने भारतीय राजाओं एवं राजवंशों को अन्दर से कमजोर कर दिया था। वे अब सामन्तों पर निर्भर थे। अपने अस्तित्व की रक्षा के लिए आपस में संघर्ष करते रहते थे। इन कारणों से भारतीय राजवंशों की अवनति तीव्र गति से होने लगी और उनका स्थान शनैः शनैः तुर्कों ने लेना प्रारम्भ कर दिया।

5.2 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात आप जान सकेंगे कि–

- तुर्क आक्रमण के समय भारत की राजनीतिक, सामाजिक, आर्थिक एवं धार्मिक नीति कैसी थी।
- भारतीय राजवंशों की अवनति के मुख्य कारण क्या थे?
- राजपूतों की सैनिक व्यवस्था के दोष।
- तुर्कों की सफलता के प्रमुख कारण क्या थे?
- तुर्कों की रणनीति, कूटनीति एवं सैन्य संगठन के सम्बन्ध में।

5.3 राजनीतिक कारण

5.3.1 भारतीय नरेशों के मध्य राजनीतिक एकता अभाव

हिन्दू साम्राज्य प्राचीन आदर्शों से गिर चुका था और भारतीय नरेशों में पारस्परिक ईर्ष्या का भावना व्याप्त थी। वे सदैव आपस में ही लड़ते रहते थे। उनमें राष्ट्रीय एकता की भावना का अभाव था। सम्पूर्ण देश छोटे–छोटे राज्यों में विभक्त था जो पारस्परिक संघर्ष में अपनी शक्ति नष्ट कर रहे थे। ऐसे संकट के समय, जब भारत की शस्य–श्यामला भूमि पर विदेशी आक्रान्ताओं के निरन्तर धुँआधार आक्रमण हो रहे थे और देश जीवन–मरण के संघर्ष में जुटा हुआ था, इस विश्रृंखलता ने शोचनीय स्थिति पैदा कर दी। देश असहाय हो गया। राजपूतों के असंगठित राजतंत्र को उखाड़ फेंकने में संगठित, अनुशासित और एकता–युक्त मुस्लिम विजेताओं को अधिक कठिनाई नहीं हुई और उन्होंने अपने साम्राज्य की नींव डाल दी। यह तो

ठीक है, परन्तु इतिहास से हमें पता चलता है कि हिन्दू राजा भी आपस में संघ बनाते थे और पृथ्वीराज द्वारा बनाया हुआ संघ एक उदाहरण है। यह संघ बहुत ही शक्तिशाली था। जयचन्द ने भी उत्तरी भारत के राजाओं से सहायता प्राप्त की। आगे, यदि हम मुसलमानों की राजनीतिक स्थिति का अध्ययन करें, तो हमें ज्ञात होगा कि उनमें भी पारस्परिक झगड़े थे। यू.एन. घोषाल ने राजनीतिक एकता के अभाव को हिन्दुओं की हार का एकमात्र कारण नहीं माना है। निःसंदेह राजपूतों की हार का एकमात्र कारण उनके पारस्परिक युद्ध तथा ईर्ष्यालु स्वभाव नहीं था।

5.3.2 जागीरदारी अथवा सामन्ती व्यवस्था

तुर्कों के हाथों पराभव का एक बहुत ही महत्वपूर्ण कारण राजपूतों की जागीरदारी या सामन्ती प्रथा थी, जिसने भारत को, जैसा कि आर.सी. दत्त का कहना है, राजनीतिक पतन की अन्तिम अवस्था पर पहुँचा दिया। सामन्ती ढंग की शासन प्रणाली की वजह से राज्य अनेक जागीरों में विभाजित थे। प्रत्येक जागीरदार अपनी 'जागीर' का स्वामी होता था तथा उसकी रक्षा और उसके सम्मान में वृद्धि करना अपना प्रमुख कर्तव्य समझता था। इस सामनती प्रथा के कारण एक ओर तो राजपूतों की पारस्परिक प्रतिस्पर्धा को प्रोत्साहन मिलता था और दूसरी ओर राज्य की शक्ति और सुदृढ़ता भी इन जागीरदारों या सामन्तों की स्वामीभक्ति की आज्ञाकारिता पर निर्भर रहती थी, युद्ध आदि संकट के समय सामन्तों की सैनिक टुकड़ियों के बल पर ही राजा संकट का मुकाबला करता था। दूसरे शब्दों में, राजपूत राजा की सेना विभिन्न सामन्तों की सेना का अजायबघर होता था, जिसमें अनुचित अनुशासन, संगठन, एकता एवं नेतृत्व और कुशल सैन्य संचालन का अभाव होता था। राजपूत सामन्त अपने राजा से विशिष्ट सम्मान की आकांक्षा करते थे और राजा भी शक्तिशाली सामन्तों को नाराज करने से भय खाता था, यद्यपि संकट के समय राजा के प्रति अपनी भक्ति प्रदर्शित करने के लिए सामन्त सदैव उत्सुक रहते थे और प्राणों का मोह छोड़कर उसके लिये युद्ध करते थे, तथापि रूष्ट होने पर वे अपने सैनिकों सहित युद्ध से पृथक होकर राजा के स्थिति कमजोर भी कर सकते थे। सामन्ती व्यवस्था राज्य की आर्थिक, राजनीतिक और प्रशासनिक एकता के मार्ग में एक शक्तिशाली अवरोधक थी। इस प्रथा के कारण देश की शक्ति छोटे–छोटे ठिकानों में बँट गई और शत्रु के विरूद्ध सम्पूर्ण सामूहिक शक्ति का प्रयोग नहीं किया जा सका। जयपाल और पृथ्वीराज को तुर्क आक्रमणकारियों के विरूद्ध जो सहयोग प्राप्त हुआ था, वह वास्तव में संगठित शक्तिशाली राजाओं का सहयोग न होकर उत्तरी भारत के छोटे–छोटे राजाओं, रायों और सामन्तों का सहयोग था, अतः संख्या में तुर्क सैनिकों से लगभग दुगने से अधिक होते हुए और शूरवीरता में किसी प्रकार कम न होने पर भी राजपूत पराजित हुए।

सामन्ती प्रथा इस दृष्टि से भी शासन व्यवस्था और राज्य की शक्ति को क्षीण करने वाली सिद्ध हुई कि इसमें राजा को सामन्तों से कुछ निश्चित धन प्राप्त होता था और प्रायः धन लोलुप राजा नजरानों, भेंटों आदि के रूप में भी धन बटोरने में लगे थे। स्पष्ट ही ऐसी शासन प्रणाली कभी सुव्यवस्थित और संगठित नहीं हो सकती थी। सामन्ती प्रथा ने व्यक्तिगत अधिकार की भावना को प्रोत्साहन दिया, जिससे पारस्परिक फूट और राग–द्वेष को बल मिला और राज्य की शक्ति निर्बल हुई। व्यक्तिगत अधिकार की भावना की प्रबलता के कारण ही ऐसी राजनीतिक शक्तियों का संगठन नहीं हो सका, जो राज्य की सामूहिक समस्याओं को सुलझाने में सक्षम हो सकती। सामन्ती प्रथा के कारण ही राजपूत राजाओं के पास संगठित और नियमित सेनाओं का अभाव बना रहा, जिसके कारण न तो वे

तुर्कों की संगठित सैनिक शक्ति का मुकाबला ही कर सके और न सीमान्त प्रदेशों की रक्षा के बारे में ही निश्चित हो सके। अलग–अलग सामन्तों के अधीन उनके अपने–अपने सैनिकों के रहने के कारण एवं अनुशासित सैनिक तन्त्र का निर्माण नहीं हो सका। सामन्ती प्रथा ने बहुत कुछ ऐसा निष्क्रिय वातावरण बना दिया कि राजा लोग सामन्तों और प्रजा से प्राप्त धन के बल पर वैभव और विलास में डूबे रहे और सामन्त भी अपने–अपने ठिकानों में ऐसे ही जीवन के अभ्यस्त बन गये। यद्यपि उनकी तलवारों को जंग नहीं लगा, तथापि वे शिथिल होने से भी नहीं बच सकी। सामन्ती प्रथा के कारण समुचित गुप्तचर व्यवस्था को संगठित नहीं किया जा सका। संक्षेप में सामन्ती प्रथा ने ऐसे बहुमुखी कारणों को जन्म दिया जो राजपूतों के पराभव और तुर्की सत्ता की स्थापना में सहायक बने।

5.3.3 राजनीतिक, प्रशासनिक एवं अन्य दोष

यद्यपि तुर्कों की शासन प्रणाली दोष रहित नहीं थी, तथापि उनके राजनीतिक एवं प्रशासनिक ढांचे में कुछ ऐसी विशेषतायें थीं, जिनसे उन्हें राजपूतों के विरूद्ध विशेष सफलता मिली। तुर्क जातियों में शासक को निर्वाचित किया जाता था। अतः प्रत्येक योग्य और शक्तिशाली मुसलमान के लिये राजपद प्राप्त करना सम्भव था। तुर्कों के सैनिक, चाहे वे गुलाम हों या स्वतन्त्र तुर्क, इस विश्वास से लड़ते थे कि व्यक्तिगत पराक्रम और साहस के बल पर वे सुल्तान के उच्चतम पद तक पहुँच सकते हैं, जबकि दूसरी ओर राजपूत शासक वंश परम्परागत राजतन्त्रात्मक शासन प्रणाली में विश्वास करते थे। अतः राजपूत सैनिकों में प्रायः उतना जोश नहीं रहता था, जितना कि तुर्क सैनिकों में। एक गलत परम्परा यह भी थी कि राजपूत राजा अपनी सेवा में प्रायः ब्राह्मणों और क्षत्रियों को ही नियुक्त करते थे तथा असैनिक कर्मचारी वर्ग भी मुख्यतः इन्हीं लोगों का था। स्थिति यह थी कि यदि किसी सैनिक या सेनापति की मृत्यु हो जाती थी, तो बाप के बाद ज्येष्ठा के नियमानुसार बेटे को उसके स्थान पर नियुक्त कर दिया जाता था। यह व्यवस्था असन्तोषजनक थी, क्योंकि प्रायः उत्तराधिकारी को लोगों का पूरा सहयोग नहीं मिल पाता था। राजपूतों के प्रशासन का यह गम्भीर दोष था कि साधारण जनता न तो शासन कार्य में हाथ बंटाने की अधिकारिणी थी और न युद्ध में भाग लेने की ही। राजाओं और सामान्य प्रजा में घनिष्ठ सम्पर्क नहीं था और प्रजा राजनीतिक प्रश्नों के बारे में उदासीन रहती थी। इस राजनीतिक उदासीनता ने तुर्क आक्रान्ताओं के कार्य को अधिक सुगम बना दिया।

5.3.4 राजपूतों में कूटनीतिज्ञता का अभाव

राजपूत युद्ध भूमि में सदआचरण और परम्परा का पालन करते थे। वे गिरे हुए विपक्षी पर कभी अस्त्र नहीं चलाते थे। राजपूत अपनी आन पर मर–मिटना शान समझते थे। ऐसा करना आत्मसम्मान का द्योतक हो सकता है, परन्तु राजनीतिक दृष्टि से यह अनुपयुक्त है। उन्हें युद्ध जीतने के बजाय सदाचार और वीरगति को प्राप्त करने की अधिक चिंता होती थी।

5.4 सामाजिक दुर्बलता

भारतीयों की पराजय का एक अन्य कारण था जाति व्यवस्था, छुआ–छूत, ऊँच–नीच की भावना और स्त्रियों की दयनीय स्थिति। तुर्कों के आक्रमणों से पहले उसकी दुर्बलता प्रकट नहीं हुई थी, परन्तु इन आक्रमणों के आरम्भ होते ही उसकी

दुर्बलता नग्न हो गयी। ब्राह्मणवाद के पुनरुत्थान ने जाति व्यवस्था, छुआ–छूत और ऊँच–नीच की भावना को प्रोत्साहन दिया। राजपूतों ने भी इसमें सहयोग दिया। ऐसी स्थिति में धर्म और शासन दोनों ने सामाजिक कुरीतियों को दूर करने के स्थान पर उनका समर्थन किया। अन्तर्जातीय विवाह, खान–पान और जाति परिवर्तन बहुत जटिल हो गये। समाज एक–दूसरे से पूर्णतया पृथक विभिन्न वर्गों में बँट गया। निम्न जातियों की स्थिति बहुत गिर गयी और विभिन्न पद–दलित और निम्न जातियों को नगरों से बाहर रहने के लिए बाध्य किया गया। छुआ–छूत इतनी अधिक बढ़ गयी कि जो व्यक्ति एक बार जाति और धर्म से पृथक हो गया अथवा किसी बाध्यता के कारण विधर्मियों के सम्पर्क में हो गया, उसके लिए अपने समाज और धर्म में पुनः स्थान पाना असम्भव हो गया। स्त्रियों की स्थिति में भी गिरावट आ गयी। अल्पायु विवाह होने लगे, स्त्री शिक्षा कम हो गयी, लड़की का जन्म दुखद माना जाने लगा, उच्च जातियों में विधवा–विवाह असम्भव हो गये और सम्भवतः झूठे दम्भ, जबरदस्ती लादी गयी नैतिकता, पुनर्विवाह का न होना, आदि के कारण सती प्रथा आरम्भ हुई। ऐसा गतिहीन और विभाजित समाज राजनीतिक और सैनिक शक्ति को संचित करने योग्य न था। हिन्दुओं का बहुसंख्यक वर्ग देश की राजनीति और भाग्य के प्रति उदासीन हो गया। डॉ0 आर.सी. मजूमदार ने लिखा है – ''विदेशियों के विरूद्ध जनता का कोई विद्रोह नहीं है और न उनकी प्रगति को रोकने के लिए सम्मिलित प्रयत्न किये जाते हैं। जब आक्रमणकारी उनकी लाशों के ऊपर गुजर रहा होता है, उस समय भारतीय एक अपंग शरीर की भांति असहाय होकर उसे देखते रहते हैं।'' डॉ0 के.ए. निजामी ने लिखा है कि जाति व्यवस्था ने राजपूत राज्यों की सैन्य शक्ति को दुर्बल किया क्योंकि युद्ध करना एक विशेष वर्ग का कर्तव्य समझा गया। उन्होंने लिखा है – ''भारतीयों की पराजय का मुख्य कारण उनकी सामाजिक व्यवस्था और अन्यायपूर्ण जाति भेद है, जिन्होंने उनके सम्पूर्ण सैनिक संगठन को आरक्षित और दुर्बल बना दिया। जाति–भेद और बन्धनों ने सामाजिक और राजनीतिक एकता की भावना को पूर्णतः नष्ट कर दिया।'' डॉ0 के.एस. लाल ने लिखा है– ''जाति–भेदों पर आधारित समाज से शत्रुओं को गुप्त देशद्रोहियों का मिलना बहुत सरल था। यह एक ऐसा कारण था जिससे 15 वर्षों में ही उत्तर भारत के सभी महत्वपूर्ण नगर विजेताओं के हाथों में चले गये। युद्धों में मुसलमानों को कठिन संघर्ष करना पड़ता था, परन्तु उसके पश्चात सभी कुछ सरल हो जाता था, क्योंकि नगरों और गाँवों में उनका विरोध करने वाला कोई न था।''

5.5 धार्मिक कारण

धर्म एक प्रबल प्रेरणा शक्ति है। धर्म के नाम पर ही मुसलमानों ने जोखिम भरे अभियान किये। लेनपूल ने लिखा है कि– ''उनके धर्म की कट्टरता ही आत्म–रक्षा का साधन थी। वे समझते थे कि ईश्वर के दूत बन कर आये हैं और हिन्दुओं को शिक्षा द्वारा अथवा तलवार द्वारा अपने धर्म में परिवर्तित कर अपने छोटे सम्प्रदाय को बड़ा बना लेंगे।'' के.ए. निजामी ने इस सन्दर्भ में धर्म को विशेष महत्वपूर्ण स्थान नहीं दिया है, परन्तु लगता है कि यह तुर्कों के धर्म का जोश ही था जिसने उन्हें असाधारण रूप से दृढ़ आक्रमणकारी बना दिया। दूसरी ओर हिन्दू धर्म 11वीं सदी तक भारतीयों के लिये प्रेरक शक्ति नहीं रहा, क्योंकि धर्म की मूल भावना के स्थान पर उनमें धार्मिक कर्मकाण्डों और मत–मतान्तरों की प्रधानता हो गया। अहिंसा के सिद्धान्त ने भी शायद हिन्दुओं को प्रतिकूल रूप से प्रभावित किया और अब धर्म ने भारतीयों में भाग्यवादिता का निष्क्रिय अन्धविश्वास भी पैदा कर दिया, जिससे हिन्दू अकर्मण्य हो गये; उनमें शिथिलता आ गई। उनकी राजनीतिक

और सामरिक बुद्धि कुण्ठित हो गई। ज्योतिषियों की भविष्यवाणियों और नियति की अटलता में विश्वास करने वाले हिन्दू इतने लापरवाह हो गये कि कई बार तो मुस्लिम आक्रांताओं की विजय बहुत ही सुगम हो गई। लक्ष्मणसेन की पराजय और इख्तियारूद्दीन बख्तियार खिलजी की विजय इसी प्रकार की भावना का स्पष्ट परिणाम थी। भारतीय जनता धार्मिक अन्धविश्वासों में इतनी ग्रस्त थी कि तुर्कों के शासन से असन्तुष्ट होने पर भी यह सोचकर हाथ पर हाथ धरे बैठे रहती थी कि सब कुछ भगवान की इच्छा या उनके पूर्व पापों का परिणाम है। लोगों में धार्मिक उत्साह नहीं रहा तथा धर्म के नाम पर मर–मिटने की तमन्ना बहुत कम क्षेत्रों में विद्यमान थी। धार्मिक अन्धभक्ति ने कायरता को प्रोत्साहन दिया और लोग प्रायः इस विश्वास में डूबे रहे कि देवताओं की कृपा से उनका कोई बाल भी बांका नहीं कर सकेगा। ईश्वरी प्रसाद का कथन है कि वह शक्ति और जोश किसी उद्देश्य की सिद्धि के लिये अत्यावश्यक है, वह उनमें नहीं था और इसी कारण उनमें साहस, जोश तथा आत्मबलिदान की योग्यता नहीं थी।

मुस्लिम सैनिक इस प्रकार की धार्मिक अन्धविश्वास जनित कायरता से दूर थे। वे तो जेहाद का नारा लगाकर प्राणपण से युद्ध करते थे और विश्वास रखते थे कि जीवित रहने पर वे भारत की सम्पदा और उर्वरा भूमि का उपयोग करेंगे और यदि मर गए तो शहीद बन कर जन्नत का सुख भोगेंगे। इस तरह जहाँ धर्म ने भारतीय समाज को सैनिक दृष्टि से शिथिल बनाने में योगदान दिया, वहीं तुर्कों को अधिकाधिक साहसी बनाया।

5.6 आर्थिक कारण

तुर्क आक्रमणकारियों के आक्रमण का प्रमुख कारण आर्थिक भी था। राजपूत राज्य समृद्ध एवं सम्पन्न थे। इसके इलावा मन्दिरों में विपुल वैभव संचित था, जिसको आक्रमणकारी प्राप्त करना चाहते थे। यह सच है कि इस समय की आर्थिक असमानता भारतीय समाज की सबसे बड़ी कमजोरी थी, परन्तु इससे भी अधिक दुखद बात यह है कि भारतीयों ने इस आर्थिक सम्पन्नता का सदुपयोग नहीं किया। इस आर्थिक सम्पन्नता का उपयोग सैनिक शक्ति के विस्तार के लिये, उसे नये अस्त्र–शस्त्रों से सुसज्जित करने के लिए नहीं किया, बल्कि वह राजपरिवारों और मन्दिरों में एकत्रित होकर व्यभिचार को बढ़ावा देता रहा और धन–लोलुप विदेशी आक्रमणकारियों को लुभाता रहा। यही सब प्रमुख कारण थे जिसके परिणामस्वरूप राजपूतों को पराजित होना पड़ा।

5.7 सैनिक कारण

सैनिक कारणों ने भी राजपूतों के पराजय में सहयोग दिया। राजपूत राजा यश अर्जित करने के चक्कर में कभी भी बुद्धिमत्तापूर्ण युद्ध नहीं लड़ सके। वे कभी भी अपने को या अपनी सेना को आकस्मिक परिस्थितियों के लिए तैयार नहीं रखते थे। फलतः एक युद्ध में पराजित होते ही उनकी सारी शक्ति नष्ट हो जाती थी। दूसरे शब्दों में हम कह सकते हैं कि राजपूत सदा रक्षात्मक नीति अपनाते थे आक्रामक नहीं। युद्धक्षेत्र में उनकी सैन्य संचालन पद्धति भी तुर्कों की अपेक्षा कमजोर थी। वे सदैव प्राचीन प्रणाली के अनुसार शत्रुओं पर सीधा प्रहार करते थे, परन्तु तुर्क हमेशा ही अपनी एक सुरक्षित पंक्ति छोड़ देते थे, जो खतरनाक मौकों पर उनके काम आयी एवं जिसने इतिहास को ही बदल दिया। राजपूतों का सैनिक संगठन भी तुर्कों के अपेक्षा दोषपूर्ण था। उनकी सेना में गुप्तचरों एवं अश्वों का

अभाव था, जबकि तुर्क इनके बल पर काफी लाभ उठाते थे। तुर्कों के पास विकसित अस्त्र–शस्त्र एवं बारूद थे, परन्तु राजपूत इनसे अनभिज्ञ थे। तुर्क सेना अत्यन्त गतिशील थी। यह गतिशीलता उनके घोड़ों के कारण थी। उन्होंने लोहे के रकाब का प्रयोग किया और घोड़े की काठी पर बैठकर शत्रु सेना पर तेजी से तीरों की बौछार करने में माहिर थे। दूसरी ओर राजपूत अपने पुराने हथियारों के बल पर ही तुर्कों का मुकाबला करते रहे। राजपूतों के पास अपनी स्थायी एवं सुसंगठित सेना भी नहीं थी। इन्हें भाड़े के सैनिकों एवं सामन्तों की सेना पर ही निर्भर रहना पड़ता था, जिसे युद्ध के मौके पर संगठित किया जाता था। जिससे राजपूतों की यह सेना तुर्कों की सुसंगठित सेना के समक्ष ठहर नहीं पायी।

5.8 अन्य कारण

कतिपय राजपूत सेनानायकों का व्यक्तित्व उनके प्रतिद्वन्द्वी मुस्लिम सेनानायकों के समान प्रभावशाली न होने से भी राजपूतों की आक्रमणकारियों के हाथों पराजित होना पड़ा। राजपूतों में महमूद गजनवी और मुहम्मद गोरी जैसे उच्च कोटि के सेनानायकों की कमी थी। कुछ राजपूत राजा उच्च कोटि के सेनानायक थे, लेकिन देश–काल का ध्यान न रख केवल वंश की मर्यादा के लिये मर–मिटने की सैनिक मूर्खता से बच नहीं सके। राजपूत नरेशों का अपना कोई संघ या संगठन भी नहीं था जिससे कि वे बाहरी आक्रमण के समय एक जुट होते। पृथ्वीराज चौहान एक योग्य सेनापति था पर उसमें दूरदृष्टि की कमी थी और इसीलिये उसने मुहम्मद गौरी के साथ युद्ध को भी अपने ही क्षेत्र में लड़ने की ओर शत्रु को आगे बढ़ जाने की भारी गलती की। जब पहली लड़ाई में सुल्तान घायल हो गया था, तो उसे सुल्तान को जीवित जाने नहीं देना चाहिये था। यही नहीं, चौहान शासक ने युद्ध से पहले की रात में भी असाधारण लापरवाही दिखाई। वह स्वयं विलास में डूबा रहा और अपनी सेना को भी उसने वैसा ही करने दिया। इसके गम्भीर परिणाम हुए और तराइन का दूसरा युद्ध निर्णायक सिद्ध हुआ, जिसने उत्तर भारत में मुस्लिम शासन की नींव डाली।

तुर्क आक्रमणकारी लूटपाट, हत्या, आगजनी, बलात् धर्म परिवर्तन आदि कार्यों से चारों ओर आतंक फैला देते थे। अतः हिन्दू जनता उनका विरोध करने से भय खाती थी। हिन्दुओं के मन में डर बैठ गया और वे विरोध करने से भय खाती थी। वे समझतें थे कि विरोध करने पर विजेता के हाथों उन्हें यातनायें भोगनी पड़ेंगी या मौत के घाट उतरना पड़ेगा। जिस प्रकार तेजी से एक के बाद एक राजपूत राजाओं का पतन हुआ, उससे भी बहुसंख्यक हिन्दू जनता के दिल पर आक्रमणकारियों का आतंक बैठ गया। उनकी यह धारणा हो गई कि तुर्क लोग अजेय हैं और इसलिए उनका सामना करना निरर्थक है। इसी खिन्न परिस्थिति में उन्होंने महाभारत के निर्देशों को गलत समझा और अराजकता को टालने के लिए समर्पण की नीति अपनाई। उन्होंने उन निर्देशों की आत्मा को नहीं समझा। इस वहज से अराजकता को दूर करने के लिये उन्होंने अपने स्वतन्त्रता तथा प्रभुत्वता की भी आहुति दे दी।

राजपूतों को अपनी तलवारबाजी पर भरोसा था तथा वे युद्ध को अपनी शूरता और प्रवीणता दिखलाने का दंगल मात्र समझते थे। इसके विपरीत मुसलमान युद्ध को गम्भीरता से लेते थे। वे आधुनिक अस्त्र–शस्त्र से भी सुसज्जित थे जबकि राजपूत परम्परागत हथियार एवं तकनीक से युद्ध करते थे। भारतीय नरेशों ने अपना धन और सम्पत्ति अस्त्र–शस्त्र के बजाए कलात्मक भवन, मठ, मंदिर इत्यादि के निर्माण में व्यय किया जो उनके लिए घातक सिद्ध हुआ।

यद्यपि मुसलमानों में उत्तराधिकार प्रथा न होने से बादशाह के मरने के बाद गद्दी के लिए झगड़े शुरू हो जाते थे, लेकिन साथ ही सबसे बड़ा गुण यह था कि हमेशा शक्तिशाली व्यक्ति ही गद्दी पर रह सकता था। दूसरी ओर राजपूतों में उत्तराधिकार प्रथा के कारण प्रायः अयोग्य और निकम्मे व्यक्ति भी शासन करते थे, जो विदेशियों का मुकाबला करने में असमर्थ होते थे।

राजपूतों की पराजय में कुछ आकस्मिक कारणों ने भी योग दिया। उदाहरणार्थ, जब महमूद गजनवी के विरूद्ध आनन्दपाल का पलड़ा निर्णायक रूप से भारी था और हिन्दू सेना के प्रबल आघात से भयभीत महमूद गजनवी पीछे हटकर युद्ध बन्द करने की सोच ही रहा था कि एकाएक आनन्दपाल का हाथ भयभीत होकर रणक्षेत्र से भाग निकला और युद्ध का पासा पलट गया। हिन्दू सेना ने इसे पलायन का संकेत समझा और तुर्क न केवल जीते, बल्कि दो दिन और दो रात तक भागते हुए हिन्दू सैनिकों का पीछा करते रहे। इसी प्रकार यदि चन्दावर के युद्ध में जयचन्द की आँख में तीर न लगता, तो कदाचित मुहम्मद गौरी उसको पराजित न कर पाता। राजपूत सेना में सेनानायक अथवा राजा के घायल अथवा युद्ध में मारे जाने पर सारी सेना निष्क्रिय और हतोत्साहित हो जाती थी जबकि तुर्कों में यह बात नहीं पाई जाती थी।

5.9 सारांश

संक्षेप में हम कह सकते हैं कि भारतीय राजवंशों की अवनति के अनेक कारण उत्तरदायी थे। राजनीतिक रूप से वे बिखरे हुए थे और आपस में संघर्ष करते रहते थे। उनके मध्य एकता और एकजुटता की नितान्त कमी थी, जिसके परिणामस्वरूप उन्हें निरन्तर पराजय मिलती रही। तत्कालीन सामाजिक संरचना और सामाजिक दोषों ने भी विदेशी आक्रमण में सहयोग दिया। सैनिक दृष्टिकोण से भी राजपूत सेना तुर्कों की तुलना में कमजोर थी। आक्रामक नीति का पालन करते हुए तुर्क सेना नये अस्त्र–शस्त्र और अश्वारोही सेना से प्रहार करते थे, जबकि राजपूत सेना परम्परावादी और पुरानी युद्ध पद्धति से रक्षात्मक युद्ध करती थी। तुर्क सेना में धार्मिक जोश और नई ऊर्जा थी, जबकि राजपूत सेना अन्धविश्वासें से घिरी हुई थी। उपरोक्त कारणों के अलावा सामन्तवादी और जागीरदारी प्रथा ने भी भारतीय राजवंशों के पतन में उल्लेखनीय भूमिका निभाई। अन्ततः 12वीं शताब्दी तक भारतीय राजवंशों के गौरवमयी इतिहास पर विराम लगना प्रारम्भ हो गया। अब उनकी जगह तुर्कों ने ले लिया। तुर्कों के आगमन से न केवल भारतीय राजवंशों का पतन हुआ, बल्कि भारतीय समाज और संस्कृति भी अछूता नहीं रहे।

5.10 अभ्यासार्थ प्रश्न

प्र01 भारतीय राजवंशों की अवनति के समय राजनीतिक दशा का वर्णन कीजिये।

प्र02 तुर्कों की विजय और राजपूतों की हार के मुख्य कारणों की समीक्षा कीजिये।

प्र03 राजपूतों व तुर्कों की सैनिक व्यवस्था में मुख्य अन्तर बताइये।

प्र04 राजपूतों की पराजय में सामाजिक एवं धार्मिक दशा के योगदान का वर्णन कीजिये।

प्र05 भारतीय राजवंशों के पतन के उत्तरदायी कारणों का विश्लेषण कीजिये।

5.11 सन्दर्भ ग्रन्थ

1. शर्मा, एल.पी., मध्यकालीन भारत, लक्ष्मीनारायण अग्रवाल।
2. श्रीवास्तव, आशीर्वादीलाल, भारत का इतिहास।
3. श्रीवास्तव, के.सी., प्राचीन भारत का इतिहास तथा संस्कृति।
4. सिन्हा, बिपिन बिहारी, मध्यकालीन भारतीय सभ्यता एवं संस्कृति।
5. वर्मा, हरिशचन्द, मध्यकालीन भारत भाग–1।

MAHY-113 (भाग–1)

भारत का राजनैतिक इतिहास :
घटनायें एवं प्रक्रियाएँ
(1206 ई0–1947ई0)

उत्तर प्रदेश राजर्षि टण्डन मुक्त
विश्वविद्यालय, प्रयागराज

खण्ड – 2

दिल्ली सल्तनत की स्थापना

इकाई – 1 **55–66**

दिल्ली सल्तनत का विस्तार एवं सुदृढ़ीकरण

इकाई – 2 **67–76**

प्रारभिक तुर्की वंश के शासन एवं नीतिया

इकाई – 3 **77–94**

खलजी वंश के शासक एवं नीतियाँ

इकाई – 4 **95–118**

तुगलक वंश के शासक एवं नीतियाँ

इकाई – 5 **119–130**

सैय्यद वंश तथा अफगान राज्यों (लोदी एंव सूर) की स्थापना

उत्तर प्रदेश राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय उत्तर प्रदेश प्रयागराज

परामर्श समिति **MAHY-113**

प्रो0 सीमा सिंह — कुलपति, उ0प्र0 राजर्षि टण्डन विश्वविद्यालय, प्रयागराज

डा0 पी0पी0 दूबे — कुलसचिव, उ0प्र0 राजर्षि टण्डन विश्वविद्यालय, प्रयागराज

पाठ्यक्रम निर्माण समिति (अध्ययन बोर्ड)

प्रो0 संतोषा कुमार — आचार्य इतिहास एवं प्रभारी निदेशक, समाज विज्ञान विद्याशाखा, उ0प्र0 राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, प्रयागराज

प्रो0 हेरम्ब चतुर्वेदी — आचार्य एवं पूर्व विभागाध्यक्ष, इतिहास विभाग, इलाहाबाद विश्वविद्यालय, प्रयागराज

प्रो0 संजय श्रीवास्तव — आचार्य, इतिहास विभाग, इलाहाबाद विश्वविद्यालय, प्रयागराज

डॉ0 सुनील कुमार — सहायक आचार्य, प्राचीन इतिहास, समाज विज्ञान विद्याशाखा उ0प्र0 राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, प्रयागराज

लेखक

डॉ सेराज मोहम्मद — आचार्य, इतिहास, श्री देवसुमन उत्तरखण्ड विश्वविद्यालय, गढ़वाल, उत्तराखण्ड

सम्पादक

प्रो0 हेरम्ब चतुर्वेदी — आचार्य एवं पूर्व विभागाध्यक्ष, इतिहास विभाग, इलाहाबाद विश्वविद्यालय, प्रयागराज

(इकाई 1–5)

पाठ्यक्रम समन्वयक

डॉ0 सुनील कुमार — सहायक आचार्य, प्राचीन इतिहास, समाज विज्ञान विद्याशाखा उ0प्र0 राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, प्रयागराज

© उ0प्र0 राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, प्रयागराज 2021

ISBN : 978-93-94487-88-8

सर्वाधिकार सुरक्षित। इस सामग्री के किसी भी अंश को उ0प्र0 राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय की लिखित अनुमति के बिना किसी भी रूप में, मिमियोग्राफी (वक्रमुद्रण) द्वारा या अन्यथा पुनः प्रस्तुत करने की अनुमति नहीं है। पाठय सामग्री में मुद्रित सामग्री के विचारों एवं आकड़ों आदि के प्रति विश्वविद्यालय, उत्तरदायी नहीं है।

इकाई–1
दिल्ली सल्तनत का विस्तार एवं सुदृढ़ीकरण

इकाई की रूपरेखा

1.0. उद्देश्य
1.1. प्रस्तावना
1.2. सल्तनत पूर्व तुर्क आक्रमण
1.3. कुतुबद्दीन ऐबक
1.4. शम्सुद्दीन इल्तुतमिश
1.5. रजिया
1.6. मुईजुद्दीन बहरामशाह
1.7. अलाउद्दीन मसूदशाह
1.8. नासिरूद्दीन महमूद
1.9. बलबन
1.9.1. राजत्व का सिद्धान्त
1.9.2. चालीस के मण्डल का विनाश
19.3. गुप्तचर विभाग का गठन
1.9.4. सेना का पुनःगठन
1.9.5. विद्रोहो का दमन
1.9.6. मंगोल आक्रमण
1.10. सारांश
1.11. शब्दावली
1.12. बोध प्रश्न के उत्तर

1.0. उद्देश्य

- इस इकाई के अन्तर्गत सल्तनत की स्थापना की आरम्भिक जानकारी मिलती है।
- सल्तनत में इल्तुतमिश के योगदान को समझ जा सकता है।
- सल्तनत के समस्त सुल्तान सलतनत को स्थायितत्व प्रदान करतें है।

1.1. प्रस्तावना

11 .12 वीं शताब्दी में तुर्को की भारत विजय ने अंततः 13 वीं शताब्दी के आरम्भ में तुर्की राज्य ,दिल्ली सल्तनत की स्थापना का मार्ग प्रशस्त किया। 1206–1290 तक भारत में शम्सी,बलबनी, पठान, शासक ,आरभिक तुर्क सुल्तान, तुर्क ममलूक दासता से मुक्त कहा जाता है। इन सभी को गुलाम पठान या इल्वारी कहना ठीक नहीं है। क्योकि न तो वे पठान थें ओर नही गुलाम। इन्हें इल्बारी भी कहना अनुचित हैं क्योकि सिर्फ इल्तुतमिश के विषय में ही यह निश्चित तौर पर ज्ञात होता हैं कि वह इल्वारी कबीला का था , बाकि सभी इस वंश से सम्बन्ध नही रखते थे। इसलिए अनेक आधुनिक इतिहासकार दिल्ली के इन आरम्भिक शासको को आदि तुर्क के नाम से सम्बोधित करते है। यह ज्यादा उपयुक्त लगता है।

1.2. सल्तनत पूर्व तुर्क आक्रमण

हिन्दुस्तान में सुल्तान महमूद गजनवी (999–1030ई0) के बाद के 150 वर्षो में राजपूत राज्यों का उत्थान , जाति प्रथा का तीव्रीकरण के बाद के 150 वर्षों में राजपूत राज्यों का उत्थान , जाति प्रथा का तीव्रीकरण तथा गंगा के मैदानी क्षेत्र पर बढ़ता हुआ तुर्क दबाव देखने को मिला। इस शक्तियों से देश के राजनीतिक और सामाजिक जीवन में जो नवीन परिस्थिति उत्पन्न हुई, उससे ही गोरी वंश द्वारा हिन्दुस्तान पर विजय के लिए मार्ग प्रशास्त हुआ। राजपूतों की नीति ने सांमतशाही संस्थाओं को जन्म दिया जाति प्रथा से समाज कई वर्गो में विभाजित कर दिया। और सामूहिक नागरिकता की भावना का गला घोट दिया जबकि तुर्कियों की छानबीन की गतिविधियों ने भारतीय स्थिति की आधारभूत कमजोरी प्रकट की और बड़े पैमाने पर सैनिक कारवाई के लिए सुविधा उपलब्ध कर दी।

बारहवी शताब्दी के मध्य तक तुर्की कबीला एक दल विधर्मी था। सेलजुंक तुर्कों को उखाड़ फेका। इस प्रकार जो स्थान रिक्त हुआ उसमें दो नई शक्तियॉ ख्वारिज तथा गोर का उदय हुआ। ख्वारिज्म सामाज्य का आधार इरान तथा गोर साम्राज्य उत्तर पश्चिम अफगानिस्तान था।गोरी आरम्भ में गजनी के सांमत थे परन्तु शीघ्र ही अपने कंधो से सांमत का भार उतार फेका गोरियों की शक्ति संगठित हुई उसने अपने भाइयों से किये गये दुर्व्यवहार के बदले के रूप में सारी गजनी को जला कर खाक में मिला दिया इस कार्य के लिए जहॉसोज सोच, विश्वभस्मक की अवांक्षनीय उपाधि मिली। ख्वारिज्म शासको के कारण गोरी मध्य एशिया में अपनी स्थिति संगठित नहीं कर पाये। इन दोनो में झगड़ो की जड़ खुराशान था जो ख्वारिज्म के शासन के अन्तर्गत था। इससे गोरियों को भारत की ओर अपना रूख करने के अतिरिक्त कोई चारा नहीं था। अलाउद्दीन के पश्चात् सैफुदीन मोहम्मद उत्तराधिकारी बना। पर एक झगड़े में उसकी मृत्यु हो गयी। ततपश्चात बहाउद्दीन शाम के दो पुत्र गयासुद्दीन 1163 ई से लेकर 1203 ई तथा शहाबुरद्दीन जो बाद में मुइज्जुद्दीन मुहमद बिन साम का खिताब के साथ सिहासन का उत्तरधिकारी हुआ शहाबुद्दीन का मानना था कि लाहौर के गजनबी सुल्तान गोरी शासकों के समय उनपर आक्रमण कर सकते हैं तथा सुल्तान के इस्माइलिया शियाओं से भी विरोध की आशंका थी। अतः गोर साम्राज्य की रक्षा के लिए सुल्तान और पजाब पर अधिकार करना एक अनिवार्य आवश्यकता थी। उसकी दूसरी धारण यह थी कि अरबों और तुर्कों ने अब तक धार्मिक प्रभाव बनायें रखने में कोई विशेष सफलता नही पायी थी। शहाबुद्दीन भारत वर्ष में स्थायी मुस्लिम

साम्राज्य स्थापित करना चाहता था। इन्ही उद्देश्यों को मन में वशीभूत किये वह भारत पर आक्रमण क्रने की एक सुव्यवस्थित योजना बनाने लगा। सुल्तान शहाबुद्दीन का प्रथम भारतीय अभियान 1175 ई में अपने छल–प्रपंच से उच्छ के अमेघ किले की किले बन्दी को भेदकर उस पर अपना अधिकार कर लिया। 1178 ई में गुजरात के वीर राजाओं के समक्ष उसकों अपने घुटने टेकने पड़े। फिर भी उसने अभियानो में कोई कमी नहीं आने दिया और 1179 ई 0 में स्यालकोट में एक किला स्थापित किया। 1181 ई में उसने लाहौर पर आक्रमण किया वहॉ गजनवी शासक खुसरों मलिक शासन कर रहा था जिसका सामना शहाबुद्दीन न कर सका और अन्ततः उसको संधि करनी पड़ी। 1184 –85 में शहाबुद्दीन ने लाहौर पर अधिकार कर खुसरों मलिक को नगर की चाहर दीवारी के भीतर बैठने को विवस कर दिया। उधर शहाबुद्दीन भारतीय साम्राज्य में अन्तिम कील गाड़नें 1186 ई मे आ पहुँचा शहाबुद्दीन का अगला अभियान तबरहिंद (भटिण्डा) की गद्दी थी। इस पर अधिकार स्थपित कर शहाबुददीन ने मलिक जियाउद्दीन तूलकी तवरहिन्द का शासक नियुक्त कर उसकी रक्षा के लिए 12000 अश्वारोही प्रदान किय। भटिण्डा अभियान के बाद शहाबुद्दीन गोर लौटने की तैयारी में था। उसी समय उसकों ज्ञात हुआ कि पृथ्वीराज आगे बढ रहा है। शाहबुददीन अपने सेना समेत 1191 ई0 में भटिण्डा के पास तराइन नामक रण स्थल में आ पहॅुचा दोनों सेनाओं के मध्य युद्ध हुआ जिसमें शहाबुदद्दीन पराजित हुआ। तराईन का युद्ध शहाबुद्दीन अपनी हार को भूल नही सका था। उसने अपनी अभियान को सफल बनाने के लिए एक वर्ष की गहन तैयारी के बाद 1192 ई में भारत की ओर कूच किया। दोनों सेनाओं के मध्य घमासान युद्ध हुआ,परन्तु शहाबुद्दीन के रण कौशल के आगे पृथ्वीराज की एक न चली इसी मध्य खाण्डेराव मारा गया। यह देखकर पृथ्वी राज अपना उत्साह खो बैठा और हाथी के हौद से उतरकर घोड़े पर सवार होकर भागा परन्तु सरस्वती के पास पकड़ा गया। शहाबुद्दीन को इस युद्ध मे सफलता मिली इस युद्ध के पश्चात तुर्को के भारत भूमि में साम्राज्य स्थापित करने का मार्ग प्रशस्त हो गया। इस प्रकार दिल्ली का साम्राज्य भी तोमर वंश के सुपूर्द कर दिया। 1194 ई0 में शहाबुद्दीन ने एक बार फिर भारत की ओर रूख किया। चन्दावर नामक स्थान पर कन्नौज ओर बनारस के गहड़वाल वंशी शासक जयचन्द्र के साथ युद्ध हुआ जिसमे हिन्दू शासक की पराजय हुई। 1195–96 में शहाबुद्दीन ने बयाना तथा ग्वलियर पर आक्रमण कर अपना आधिपत्य स्थापित किया। 1197 ई0 में शहाबुद्दीन गुजरात के शासक भीमदेव द्वितीय को पराजित कर उसकी राजधानी को लूटा व हॉसी होते हुए दिल्ली और आया। 1202–03 ई0 में शहाबुद्दीन के बड़े भाई ग्यासुद्दीन का देहावसान हो गया। इसके बाद शहाबुद्दीन मुईजुद्दीन सम्पूर्ण गोर,गजनी एवं दिल्ली का शासक बन गया। परन्तु शीघ्र ही कुछ घटनाओं ने उसकी स्थिति संकट में डाल दी। 1203 ई0 में उसकों ख्वारिज्म के शाह अलाउद्दीन महमूद के हाथों शिकस्त मिली। लेकिन इस युद्ध का तात्कालिक परिणाम यह निकला कि शहाबुद्दीन की पराजय से उत्साहित होकर भारत में उसके कई विरोधियों ने बगवत कर दी भारत में 1205 ई में सभी विद्रोहों को दबाया और खोखरों को बुरी तरह से पराजित किया। 15 मार्च 1206 को लाहैार से गजनी के रास्ते में दम्यक में हत्यारों के एक दल ने उसे छुरा भोंककर मार डाला।

1.3. कुतुबुद्दीन ऐबक

शहाबुद्दीन के समय उसकी तीनों प्रमुख विश्वासपात्र गुलामों ताजुद्दीन यल्दौज नासिररूदीन कुबाचा ओर कुतुबुद्दीन ऐबक की स्थिति समान थी। अतः इनके मध्य उत्तरधिकार का युद्ध अनिवार्य था। इनमें शहाबुद्दीन के सबसे योग्य

और प्रिय कुतुबुद्दीन का युद्ध अनिवार्य था। इनमें शहाबुद्दीन के सबसे योग्य और प्रिय कुतुबुद्दीन ऐबक अनौपचारिक रूप से 25 जून 1206 ई0 को उत्तरधिकारी नियुक्त हुआ जब कि ऐबक औपचारिक रूप से 1208–9 में सुल्तान बना। 1206 ई0 के बाद कुतुबुद्दीन ऐबक साम्राज्य विस्तार की इच्छा का परित्याग कर अपने विजित प्रदेशों की सुरक्षा की ओर ध्यान लगाया। वह अपनें भीतरी प्रदेशों को प्रशासकीय संगठन का निश्चित स्वरूप देने को उतावला था। यह तभी संभव था जब शहाबुद्दीन के दास ओर मलिक उसकी सहायता करते। कुतुबुद्दीन ऐबक ने ग्यासुउद्दीन महमूद यल्दौज कुबाचा एंव अलीमर्दान की बड़ी कुशलता से सामना किया और स्थिति के अनुसार शक्ति नम्रता और अनुनय–विनय का सहारा किया। वह शहाबुद्दीन द्वारा विजित भारतीय प्रदेशें को स्वतन्त्र बनाये रखने के लिए प्रयासरत रहा और वह भी उस स्थिति में जब गजनी से लखनौती तक के शहाबुद्दीन मुईजुद्दीन के साम्राज्य के प्रत्येक भाग अनिश्चितता के वातावरण से गुजर रहा था क्योकि शहाबुद्दीन के सभी अधिकारियों में अराजकता एंव महत्वकाक्षां आ गयी।इस विकट समय में राज्यों की अक्षुणता बनाये रखना कठिन था। 1210 ई0 में चौगान खेलने समय वह घोड़े से गिरा और काठी की उठी नोक उसकी पसलियों में धुस गयी। जिससे उसकी तत्काल मृत्यु हो गयी।

कार्य–कुतुबुद्दीन ऐबक का भारतीय अभियान के मध्य किये गय कार्यो का अवलोकन किया जाय तो ज्ञात होता है कि वह अपना जीवन एक विजेता के समान व्यतीत किया। उसने जो छाप जनमानस के मनों में छोड़ी वह विनाशं और विध्वंश का नही बल्कि न्याय एंव उदारता की थी। उसके इस कार्य के लिए लाखों का दान देने वाला की उपधि से नवाजा गया। किन्तु इसके साथ–साथ वह लाखों लोगों की हत्याऍ करने के लिए भी बदनाम था। कुतुबुद्दीन ऐबक की अचानक मृत्यु ने अमीरों ओर मलिकों में अशान्ति का संचार किया। आम जनमानस में शान्ति और सैनिकों के हदय में असन्तोष कायम रखने के लिए आरामबख्स को आरामशाह की उपाधि देकर लाहौर में कुतुबुद्दीन ऐबक का उत्तराधिकारी नियुक्त किया गया। नये सुल्तान की अयोग्यता ने दिल्ली के सरदारों में षडयन्त्र की भावना जागृत की। उसको पदच्च्युत करने के लिए शम्सुद्दीन इल्तुतमिश को आमंत्रित किया गया। जो बदायूॅ का इक्ता था। इल्तुतमिश ने अपनी सामन्त शक्ति के साथ जूद के मैदान में आरामशाह को परास्त किया। उसका शासनकाल आठ माह रहा उसके शासन काल में कोई महत्वपूर्ण घटना नही घटी।

1.4. शम्सुद्दीन इल्तुतमिष

इल्तुतमिश इलबारी जनजातीय तुर्क था। उसका पिता ईलमखॉ एक जनजातीय सरदार था। उसका आरम्भिक जीवन सुख समृद्धि का था।साथ ही प्रकृति ने उसे आकर्षक व्यक्तितत्व तीक्षण वुद्धि और सरल स्वभाव वाला व्यक्ति बनाया था। इस कारण वह अपने अपने भाइयों का कोपभाजन हो गया। दो बार खरीद–ब्रिकी के बाद जमालुद्दीन नामक व्यापारी उसे गजनी के बाजार में ले आ के बोली लगायी, किन्तु जमालुउद्दीन को एक हजार स्वर्ण मुद्राओं इसके बाद शहाबुद्दीन ने उसे गजनी में बेचने पर रोक लगा दी। इसी मध्य कुतुबुद्दीन की नजर उस पर पड़ी ऐबक ने शहबुद्दीन से उसे खरीदने की अनुमति मॉगी। सुल्तान ने ऐबक से कहा कि उसका व्यापारी उसको दिल्ली ले जाकर बेच सकता हैं। इस प्रकार ऐबक ने इल्तुतमिश को दिल्ली के बाजार से तमागजरूमी ओर इल्तुमिश को एक लाख जीतल मे।खरीदा ओर उसे सीधे सर जानदार के पद पर नियुक्त किया। उसके बाद उसे अमीर शिकार के पद पर जा पहुचा ग्वालियर

अभियान की सफलता के बाद उसे अमीर बनाया गया। इसके अतिरिक्त शीघ्र ही उसे वरन एवं अन्य प्रदेशों का दायित्व भी प्रदान किया गया। जिन पर इल्तुतमिश ने कुशलता से शासन किया। जिससे प्रसन्न होकर ऐबक ने उस बदायूॅं का शासक बना दिया। 1206 ई0 में खोखरों के अभियान के मध्य मुईजुद्दीन के साथ ऐबक और इल्तुतमिश दोनों थे। इस अभियान में इल्तुतमिश के असाधारण उत्साह और साहस ने मुईजुद्दीन को प्रभावित किया। जिससे मुईजुद्दीन ने उसको दासत्व से मुक्त कर अमीरूल उमरा का प्रतिष्ठित पद प्रदान किया।

शम्सुद्दीन इल्तुतमिश जब राज सिंहासन पर बैठा उस समय शैशव दिल्ली सल्तनत का अस्तित्व पर खतरा मंडरा रहा था। उसके समक्ष बाह्य एंव आन्तरिक कठिनाइयाँ अंकुरित हो रही थी। सामान्य ढंग से इल्तुतमिश ने अपने शासन को तीन भागों में बाँटा नासिरूद्दीन कुबाचा ने सिन्धं में स्वतन्त्र सता स्थपित कर पंजाब का अपने अधिपत्य में लेना–चाहता था। यल्दौज गजनी पर अधिकार स्थापित कर अब वह समस्त भारतीय प्रदेशों पर अपना पुराना दावा करने लगा। इस लिए इल्तुतमिश यल्दौज के प्रभाव को रोकने के लिए आगे बढ़ा यल्दौज पहले से ही युद्ध के लिए तैयार था। दोनों के मध्य तराईन के ऐतिहासिक मैदान में युद्ध हुआ,। जिसमें यल्दौज पराजित हुआ। तत्पश्चात उसे बन्दी बनाया गया और बदायूॅं ले आकर हत्या कर दी गई। नासिरूद्दीन कुबाचा लाहौर ओर पंजाब तक अपनी सीमा बढानें में लगा था। कुबाचा की बढ़ती महत्वकांक्षा इल्तुतमिश के लिए असहनीय थी। इस लिए इल्तुतमिश कुबाचा के विरूद्ध कार्यवाही करने का निश्चय किया और 1217 ई0 में इल्तुतमिश की सेना का सामना किए बिना ही वह भाग खड़ा हुआ। उसका पीछा किया गया। और चेनाव पर स्थित मंसूरा के निकट उसकों युद्व के लिए वाध्य किया गया जिसमे वह पराजित हुआ। इल्तुतमिश का लाहौर पर अधिकार हो गया ओर उसने वहा अपने पुत्र नासिरूद्दीन महमूद की नियुक्ति की। इसी बीच मध्य एशिया में मंगोलो के भयंकर मार काट मचा रखी थी ख्वारिज्म शाह का बड़ा पुत्र जलालुद्दीन मंगवरनी चंगेज खॉ के चुंगल से भागकर सिन्ध घाटी तक आ पहुॅचा। मंगवरनी की पीछा करते–करते चंगेज खॉ भारत आ पहुँचा। चंगेंज खॉ इल्तुतमिश के पास अपना दूत भेजा कि वह मगवरनी की सहायता न करें जिससे इल्तुतमिश सहायता देने से इनकार कर दिया। इस प्रकार 1228 ई में मगवरनी भारत से चला गया। उसके चले जाने से भारत पर मंगलों का आक्रमण टल गया।

पश्चिम से निश्चित होकर इल्तुतमिश अन्य इलाकों की ओर ध्यान दिया। बंगाल और विहार में इवाज नामक एक व्यक्ति ने सुल्तान जियासुद्दीन की पदवी धारण करके अपनी आजादी का ऐलान कर दिया था। वह एक उदार ओर योग्य शासक था। उसने जनहित के लिए काफी निर्माण कार्य करवाए थें। गयासुद्दीन अपने पडोसी शासकों के प्रदेशों पर हमला करता रहता था। लेकिन पूर्व वंगाल के सैन शासक ओर उड़ीसा तथा कामरूप के हिन्दू शासकों का बोलवाला अपने–अपने प्रदेशें में कायम रहा। 1226–27 ई0 में इवाज लखनौती के निकट इल्तुमिश के बेटे नासुरूद्दीन मुहम्मद के खिलाफ लड़ता हुआ मारा गया। बंगाल और विहार एक बार फिर दिल्ली सल्तन्त के अधीन आ गया लेकिन इस प्रदेशें को सम्भालना कठिन था वे दिल्ली की सता को बार–बार चुनौती देते रहे। लगमग इसी समय इल्तुमिश ने ग्वलियर ओर बयाना पर फिर से कब्जा करने के लिए कदम उठाए। अजमेर और नागौर पर उसकी सता कायम रही। उसने रणथभौर और जालौर पर आक्रमण करके वहॉ अपना प्रभत्व पुनः स्थपित किया।

इल्तुतमिश मध्यकालीन भारत के अत्यन्त महानशासकों में एक था। भारत में मुस्लिम सत्ता का प्रारम्भ वस्तुः इल्तुतमिश से प्रारम्भ होता है। इल्तुतमिश ने ही सल्तनत को एक राजधानी, संप्रभुता–सम्पन्न राज्य,एक राजतंत्रात्मक प्रकार की शासन व्यवस्था और तुर्कान–ए–चाहलगनी या चालीस अमीरों का समूह नामक शासक या अमीर वर्ग जो इस काल का एक प्रवर शासक वर्ग था उसने अपने साम्राज्य को असंख्य छोटी–छोटी इक्ताओं में विभक्त योग्य भूमि का लगान निधारित किया। सल्तनत की प्रशानतन्त्र में इक्ता व्यवस्था की महत्वपूर्ण भूमिका थी। इल्तुतमिश ने इस संस्था का प्रयोग भारतीय समाज की सामन्तवादी व्यवस्था को समाप्त करने तथा साम्राज्य के दूर दराज के भागों को केन्द्र के साथ संयुक्त करने के एक साधन के रूप में प्रयुक्त किया।

मध्य कालीन मुद्रा प्रणाली के इतिहास में इल्तुतमिश का शासन काल एक युगान्तकारी काल के रूप मे स्वीकार किया जाता है। उसने सल्तनत कालीन दो प्रकार के मूल सिक्कों चॉदी का टंका ओर तॉबें के जीतल का प्रचलन किया। उसने मध्यकालीन प्रशासनीय संस्थाओं की नीव डाली जिनका उसके उत्तरधिकारियों के शासन काल में विकास हुआ।

<u>बोध प्रश्न</u>

1. तराईन का प्रथम युद्ध 1191 ई0 में हुआ।
2. इल्तुतमिश ने सल्तनत को इक्ताओं में विभाजित किया।
3. इल्तुतमिश गोरी का गुलाम था।

प्रश्न– इल्तुतमिश की मुद्रा प्रणाली के विकास करने के सन्दर्भ में 250 शब्द लिखिए।

....
....
....
....
....
....
....
....

1.5. रजिया

1236 ई0–40 ई0 – अपने जीवन के अंतिम वर्षो में इल्तुतमिश उत्तराधिकार के प्रश्न को लेकर परेशान था। वह अपने जीवित बेटो में से किसी को भी गद्दी के लायक नही समझता था। काफी सोच–विचार के बाद अपने अपनी बेटी रजिया को दिल्ली की गद्दी पर बैठने के लिए नामजद करने का फैसला किया। उसने अमीरों और उलेमाओं को इस नामजदगी पर रजामंद कर लिया। तथापि बेटों के मुकाबले बेटी को तरजीह देकर उसे उत्तराधिकार नामजद करना एक नया कदम था। रूक्नुद्दीन फिरोज आठ माह शासक रहा उसकी मॉ शाह तुर्कान रजिया अपने वादे को मनवाने के लिए रजिया को अपने भाइयों और

शक्तिशाली तुर्क अमीरों के खिलाफ संघर्ष करना पड़ा और वह केवल तीन वर्ष शासन कर पायी। यद्यपि उसका शासन अल्पायु सावित हुआ तथापि उसकी कई दिलचस्प विशेषता थी रजिया के शासन काल में सत्ता के लिए राजतन्त्र ओर उन तुर्क सरदारों कें मध्य संधर्ष आरम्भ हुआ जिन्हे कभी–कभी चहलगानी या चालीसा कहा जाता है। इल्तुतमिश इन सरदारों के साथ बहुत आदर से पेश आता था उसकी मुत्यु के बाद सता के मद में चूर थें उदधत सरदार अपनी किसी कठपुतली को गद्दी पर बैठाना चाहते थे। जिससे वे अपने इशारों पर नचा सके परन्तु उन्हें जल्दी ही पता चल गया कि रजिया भले ही स्त्री थी लेकिन वह उनकी कठपुतली बनने को तैयार नही थी।

दिल्ली के नागरिकों ने पहली बार अपने उत्तराधिकार के मामले पर निर्णय लिया था। परिणाम स्वरूप रजिया ने भी जनवादी दृष्टिकोण अपनाकर दिल्ली के लोगों से कहा कि यदि वह उनकी अपेक्षाओं को पूरा न कर पाए तो गद्दी से हटा दिया जाय। राजग्ददी पर उसके आरूढ़ होने और किसी महिला को शासक के रूप में स्वीकार करने तुकी अमीर वर्ग ने अपने पौरूष और अपनी मानसिक दृढता एवं विशालता का परिचय दिया था।रजिया के सिंहासनरोहण से राज्य के मामलों में मुस्लिम धर्माचार्यो या उलेमाओं की प्रभावहीनता भी स्पष्ट होती है।

रजिया का शासन साढ़े तीन वर्षो तक चला। उसने चतुर कूटनीतिज्ञ और युद्वनीतिज्ञ के रूप में स्वयं को अच्छी तरह प्रस्तुत किया। अपने शासन के आरम्भ में उसने इल्तुतिमश के भूतपूर्व वजीर जुनैदी के नेतृत्व में प्रान्तीय शासकों के गठबन्धन को समाप्त कर दिया लेकिन प्रशासन का पुनगर्ठन तथा हर प्रकार के कार्यो पर सीधे नियन्त्रण रखने के उसके प्रयासों का काफी विरोध हुआ। उसने पर्दा करना छोड दिया। पुरूषों की भॉंति पोशाकों का काफी विरोध हुआ। उसने पर्दा करना छोड दिया पुरूषों की भाति पोशाकें पहनने लगी तथा जनता के बीच हाथी पर जाने लगी जो कि कट्टर मुस्लिम दृष्टि से एक गम्भीर अपराध था। उसके विरूद्ध दूसरी गम्भीर शिकायात यह थी कि उसने एक अवीसीनियाई व्यक्ति जलालुद्दीन याकूत को पदोन्नत करके शाही अस्तबल का प्रमुख अमीर–ए–आखुर के रूप में नियुक्त कर दिया। जिस पर अभी तक केवल तुर्की अधिकारियों को ही नियुक्त किया जाता था। संस्थापित जातिय विशेषाधिकारों पर रजिया के इस स्पष्ट प्रहारों के विरूद्ध विरोध ने शीघ्र ही विद्रोहों का स्वरूप ग्रहण कर लिया। पहला विद्रोह लाहौर के गवर्नर कबीर खॉ द्वारा किया गया। रजिया ने स्वयं उसके खिलाफ मोर्चा लिया ओर विद्रोह को कुचल दिया। उसके 15 दिनों के ही भीतर भटिण्डा के गवर्नर अल्तुनिया ने भी विद्रोह कर दिया। रजिया ने सीधे भटिण्डा की ओर कूच किया लेकिन अल्तुनिया ने उसे पराजित कर बन्दी बना लिया और उससे विवाह कर लिया। विवाह क बाद दोनों सेना का नेतृत्व करते हुए दिल्ली की ओर बढे लेकिन इसी बीच दिल्ली के असन्तुष्ट अमीरों ने इल्तुतमिश के दूसरे पुत्र बहराम शाह को गद्दी पर बैठा दिया। जब रजिया अपने पति के साथ दिल्ली की ओर बढ़ी रही थी तभी बहराम ने परजित कर दिया अपने सैनिको द्वारा परित्याग कर दिये जाने पर उसे लुटेरों ने मार डाला। समकालीन इतिहासकार मिनहाज ने उसे राजाओं के लिए आवश्यक सराहनीय गुणें एंव योग्यतां से युक्त एक महान शासिका के रूप में वर्णित किया। रजिया के पतन का मुख्य कारण यह नही था कि उसने तुर्की सामाजिक परम्पराओ का उल्लंघन करके अरूढिवादी ढ़ग से शासन करना प्रारम्भ कर दिया था अपितु तुर्की अमीरों के सत्ता पर एकाधिकार एंव उनकी शक्ति को चुनौती देकर रजिया ने आत्म–विनाश कर लिया।

बोध प्रश्न–

1. रजिया पहली महिला शासिका थी।
2. रजिया कया कुवा एवं कुलाव पहनती थी।
3. रजिया का पति अल्तुनिया था।

1.6. मुईजुद्दीन बहरामशाह

सुल्ताना रजिया जब तवरहिंदा के दुर्ग में बंदी का जीवनयापन कर रही थी उधर 21 अप्रैल 1240 ई0 को इल्तुतमिश के तीसरे पुत्र मुईजुद्दीन बहराम शाह की ताजपोशी हो रही थी। 05 मई 1240 ई0 कों अमीरों और सरदारों ने बहराम के प्रति अपनी निष्ठा आर्पित की बहराम के शासन काल में तुर्क सैनिक अमीरों का प्रभुत्व स्थापित होना लगा था जिससे सुल्तान और अमीरों में संधर्ष की स्थिति कायम हो गयी। इसी मध्य मंगोलो के आक्रमण ने लाहौर को संकट में डाल दिया विद्रोहा में सुल्तान बहरामशाह को 13 मई 1242 ई0 मं कत्ल कर दिया गया।

1.7. अलाउद्दीन मसूदशाह

बहराम शाह के कत्ल के बाद रूक्नद्दीन फिरोजशाह के पुत्र अलाउद्दीन मसूदशाह को 1242 तुर्क अमीरों ने राजगद्दी पर बैठा गया। इस समय तक चेहलगानियों का प्रभाव अधिक हो गया था। शासन प्रबन्ध संगठित न होने से दिल्ली के सुल्तानों की प्रतिष्ठा समाप्त होने लगी, और बंगाल और मुल्तान अपने को स्वतन्त्र घोषित कर लिए 1245 ई0 में उच्छ पर मंगोलो का आक्रमण हुआ तुलनात्मक दृष्टिकोण से देखा जाय तो बहराम एवं अलाउद्दीन मसूद शाह का शासन प्रबन्ध अशान्ति एंव अस्थिरता का काल रहा। चहलगानी दल के प्रमुख वलबन की शक्ति संगठित होने लगी थी। एक षडयन्त्र में 10 जून 1246 ई0 में सुल्तान को कारागार में डाक दिया जहाँ उसकी मृत्यु हो गयी।

1.8. नासिरूद्दीन महमूद

अमीरों ने इल्तुतमिश के पौत्र नासिरूद्दीन महमूद को सिंहासन पर बैठाया। मिनहाज ने सुल्तान नासिरूद्दीन को एक सन्त स्वभाव वाला शासक माना है। क्योंकि अपने दो दशक के शासन काल में वह भी उस समय जब दिल्ली सल्तनत अराजकता और विद्रोह की ज्वालामुखी पर बैठा हो अपनी सादगी और कुरान की हस्तलिपि बेचकर अपनी जीविका अर्जित करना और राजनीतक जीवन से दूर भागना चाहता था। सुल्तान की गद्दी पर बैठने के तीन वर्ष पश्चात् ही तुर्की अमीरों में अग्रणी गयासुद्दीन बलबन ने अपनी पुत्री का विवाह सुल्तान से कर दिया। इसके बदले सुल्तान ने उसे नायव–ए–मामलकात के पद पर नियुक्त कर दिया और उलुग खाँ (प्रधान 'खान') को उपाधि प्रदान की। 1253–54 के संक्षिप्त अन्तराल को छोड़कर बलबन। सल्तनत का वास्तविक शासक बना रहा। नासिरूद्दीन महमूद के शासन के दौरान बलबन का सबसे अधिक महत्वपूर्ण योगदान प्रान्तों में अपने सुल्तान की सत्ता एवं प्रभुत्व को सुद्ढ करना था। नासिरूद्दीन के शासन के अन्तिम कुछ वर्षों के बारे में कोई समकालीन विवरण

उपलब्ध नहीं है। लेकिन चौदहवी शताब्दी के इतिहासकार इमामी और इब्नबतूता स्पष्ट रूप से बताते है कि सुल्तान की हत्या बलबन ने की थी।

1.9. बलबन (1266—1287)

गयासुद्दीन बलबन सम्भवतः भूतपूर्व सुल्तान का हत्यारा था और उसने अपने लिए राजगद्दी का अपहरण किया था। उसके गद्दी पर बैठते है, इल्तुतमिश के परिवार की सुल्तानों की परम्परा का अन्त हो गया। अपने राज्यारोहण के तत्काल बाद उसे दिल्ली तथा सल्तनत के अन्य प्रदेशों में कानून और व्यवस्था की पुनर्स्थापना की अत्यन्त गम्भीर समस्या का सामना करना पड़ा। उसने कानून और व्यवस्था नीति के मार्गदर्शी सिद्धान्त के रूप में दृष्टीकरण को चुना क्योंकि विद्रोही हिन्दू अधीनस्थ शासक दिल्ली सल्तनत की अधीनता से मुक्ति का प्रयास कर रहे थे। और मंगोल आक्रमणकारी दिल्ली की ओर आगे बढ़ रहे थे। बलबन ने अपने नियन्त्रण वाले क्षेत्रों पर अधिकार बनाए रखने में अपनी सारी शक्ति लगा दी और अपनी साम्राज्यवादी महत्वाकांक्षाओं को कभी उभरने नहीं दिया।

1.9.1. राजत्व का सिद्धान्त

बलबन सल्तनत का पहला सुल्तान था, जिसने राजत्व या राजपद के सिद्धान्त का विस्तार से विवेचन किया उसने शाही ताज को एक उच्च एवं गौरवपूर्ण पीठ पर प्रतिष्ठापित करने और अमीर वर्ग एंव सुल्तान के मध्य संघर्ष तथा कलह की समस्त संभावनाओं को समाप्त करने के लिए राजस्व की विचारधारा का प्रतिपादन अत्यावश्यक माना। उसने अपने राजत्व की विचारधारा सम्बन्धी मूल तत्वों को फारस के सदसानी वंश से ग्रहण किया था। जहाँ राजत्व को उच्चतम् संभावित स्तर पर प्रतिष्ठित किया गया था। उसने इस विचार धारा के द्वारा लोगों को विश्वास दिलाया कि राजत्व या सुल्तान पृथ्वी पर खुदा या ईश्वर का प्रतिनिधि (नियावत—ए—खुदाई) है और प्रतिष्ठा की नजर से उसका स्थान पैगम्बर के बाद दुसरा है। सुल्तान खुदा की प्रतिछाया (ज़िल्ले—ए—इलाही) और ईश्वरीय खुदाई मार्गदर्शन एवं क्रान्ति का पुंज होता है। पृथ्वी पर ईश्वर का प्रतिनिधि के रूप में वह स्पष्ट करना चाहता था कि वह 'ईश्वरीय आदेश' से शासन करता है और कानून से ऊपर है तथा शासक के रूप में अपने अधिकार और कर्त्तव्यों का निर्वहन करने के लिए किसी सांसारिक सत्ता के प्रति वह जवाबदेह नहीं है। बलबन ने ईरानी आदर्श पर अपने राजदरवार का गठन किया था। और सस्सानी के शाही शिष्टाचारों तथा विधि—विधानों का अत्यन्त सावधनी पूर्वक अनुकरण करता था।

1.9.2. चालीस के मण्डल का विनाश

चालीस के मण्डल का नाश—गद्दी पर बैठने से पूर्व बलबन तुर्की अमीर वर्ग (चालीस या तुर्कान—ए—चाहलगनी) का सक्रिय सदस्य रह चुका था तथा इल्तुतमिश के परिवार के प्रति चालीस की निष्ठा और उसकी वास्तविक शक्ति से वह अवगत था। इन दोनों आपदाओं से आत्मरक्षा करने के लिए उसने इल्तुतमिश के परिवार के एक—एक सदस्य की निर्ममता पूर्वक हत्याएँ करा दी और जिस तुर्की अमीर वर्ग का वह कभी सदस्य रह चुका था। उसका उसने पूरी तरह से सफाया कर दिया।

1.9.3. गुप्तचर विभाग का गठन

गुप्तचर विभाग का गठन–बलबन केन्द्रीयकृत राजनीतिक सत्ता ये विश्वास करता था। अधिकांश सरकारी नियुक्तियाँ सीधे उसी के अनुमोदन से की जाती थी। अपने निरंकुश शासन के अवाध संचालन के लिए उसने कुशल तथा निष्ठावान गुप्तचर प्रणाली का गठन किया।

1.9.4. सेना का पुनःगठन

सेना का पुनःगठन –सीस्तानी एवं तुर्की एवं तुर्की सैनिकों की भर्ती करके गठित बलबन की सेना दर्शनीय मात्र थी। भारतीय लोगों चाहे वे हिन्दू हो या मुसलमान के लिए बलबन की सेना में अधिकारियों के रूप में पदोन्नति या नियुक्ति प्राप्त करने की कोई संभावना नहीं थी, क्योंकि बलबन ने मुख्यतः विदेशी सैनिकों को भर्ती कर अपनी सेना का गठन किया था। उसकी सेना का उस समय सैन्य शक्ति परीक्षण हुआ।

1.9.5.विद्रोहों का दमन

विद्रोह का दमन– जब 1275 ई बंगाल के गवर्नर तुगरिल ने बलबन के विरूद्ध विद्रोह कर दिया। तुगरिल के विरूद्ध दो अभियानों की लगातार विफलताओं के उपरान्त बलबन ने स्वयं लखनौती की ओर कूच किया जो मध्यकालीन बंगाल की राजधानी था। बलबन ने बड़ी क्रूरता से तुगरिल के विद्रोह का दमन किया और उसके स्थान पर अपने छोटे पुत्र बुगरा खाँ को बंगाल का गवर्नर नियुक्त किया। वृद्धावस्था में बंगाल के विरूद्ध किए गए सैनिक अभियान का स्थापित करने में तीन वर्ष लग गए और तीन वर्ष तक बंगाल में व्यस्त रहने के बाद ही दिल्ली वापस आ सका।

1.9.6. मंगोल आक्रमण

मंगोल आक्रमण – बलबन नें मंगोल आक्रमणों के विरूद्ध उत्तर–पश्चिमी सीमान्त को सुरक्षित रखने के लिए कठोर कदम उठाये उसने अपने ज्येष्ठ शहजादे मुहम्मद को सीमान्त की सम्पूर्ण सुरक्षा का दायित्व सौपा, जिसने कुछ समय तक बड़ी वीरतापूर्वक मंगोलों से सीमान्त की सुरक्षा की परन्तु मंगोलों के एक प्रबल आक्रमण का सामना करते हुए शाहजादा मुहम्मद मारा गया। वही बलबन का उत्तराधिकारी होने वाला था। उसकी मृत्यु बलबन एवं उसके वंश के लिए मरणान्तक आधात सिद्ध हुई। शहजादे मुहम्मद की मृत्यु के एक वर्ष के भीतर ही वलबन की मृत्यु हो गई और उसे चार वर्ष बाद ही इल्बरी वंश का भी अन्त हो गया।

बलबन की मृत्यु के बाद उसका पौत्र कैकुवाद उसका उत्तराधिकारी हुआ, जो अत्यन्त विलासी एवं कामुक व्यक्ति था। परिणाम स्वरूप सम्पूर्ण प्रशासन अराजकता ग्रस्त हो गया और राज दरबार अमीरों की उच्च्व आंकाक्षा एवं सघर्षों की गिरफ्त में आ गया। अमीरों के एकगुट का नेता आरिज–ए–मुमालिक मलिक फिरोज (जो बाद में सुल्तान जलालुद्दीन फिरोज के नाम से प्रसिद्ध हुआ) था, जिसने कैकुबाद की हत्या करके राजगद्दी पर स्वयं अधिकार कर लिया।

बोध प्रश्न–

1. चेहलगानिया का नेता रजिया थी।
2. चालीस गुलामों के दल का नाश–रजिया ने किया।
3. नौरोज प्रथा बलबन ने शुरू की।

प्रश्न– बलवन के राजत्व के सिद्धान्त को 250 शब्दों में लिखों।

....
....
....
....
....
....
....
....

1.10. सारांश

तीस वर्षो के अल्पकाल में ही दिल्ली में दूसरी बार राजवंश का परिवर्तन हुआ खिलजियों ने सल्तनत की सीमा में काफी विस्तार किया एवं कानून व्यवस्था की स्थापना की थी परन्तु सारे कार्य अस्थायी साबित हुए। अलाउद्दीन के साथ ही इस वंश का गौरव समाप्त हो गया और उसकी मृत्यु के चार वर्ष बाद ही खलजियों की सता विलुप्त हो गयी।

1.11. शब्दावली

तुतिए हिन्द–भारत का तोता

लाख बख्स–लाखों का दान देने वाला

नियामत–ए–खुदाई–प्रतिनिधि

जिल–ए–इलाही–प्रतिछाया

1.12. बोध के प्रश्न के उत्तर

1	(X)	2.	(√)	3.	(X)
2.	(√)	2.	(√)	3.	(√)
3.	(x)	2.	(X)	3.	(√)

इकाई–2

प्रारभिक तुर्की वंश के शासन एवं नीतियाँ

इकाई की रूपरेखा

2.0. **उद्देश्य**

2.1. **प्रस्तावना**

2.2. **राज्य का स्वरूप**

- **2.2.1** खलीफा से सम्बन्ध
- **2.2.2** उलेमा वर्ग

2.3. **केन्द्रीय प्रशासन के पदाधिकारी**

- **2.3.1.** वजीर
- **2.3.2.** आरिज
- **2.3.3.** दीवान–ए–रसालत
- **2.3.4.** दीवान–ए–मुमालिक
- **2.3.5.** सद्र–उस–सुदूर
- **2.3.6.** काजी–उल–कुजात
- **2.3.7.** अन्य विभाग एवं पदाधिकारी

2.4. **प्रान्तीय प्रशासन**

2.5. **खालसा भूमि**

2.6. **सैनिक संगठन**

2.7. **वित्तीय व्यवस्था**

- **2.7.1.** खराज
- **2.7.2.** उश्र
- **2.7.3.** जजिया
- **2.7.4.** खम्स
- **2.7.5.** जकात

2.8. **न्याय व्यवस्था**

2.9. **सारांश**

2.10. **शब्दावली**

2.11. **बोघ प्रश्न के उत्तर**

2.0. उद्देश्य

- ❖ आरभिक राजा की दुर्बलता के बारे में जानकारी प्राप्त होती है।
- ❖ तुर्को के शासन के बारे में जानने का अवसर मिलता है।
- ❖ कर केन्द्रीय व प्रान्तीय शासन व्यवस्था कैसी थी।

2.1. प्रस्तावना

हिन्दुस्तान में मुहम्मद गोरी द्वारा स्थापित राज्य का फैलाव उसके उत्तराधिकारी गुलाम सुल्तानों के शासन काल में उतना ही बना रहा। यदि कोई परिवर्तन हुआ भी तो उसके फलस्वरूप वह सिमटा ही रहा। इसमें कोई वृद्धि नही हुई। सल्तनत के अन्तर्गत बसने वाले हिन्दु शासकों ने बारम्बार इस युग में तुर्की प्रभुत्व का जुआ उतार फेकने का प्रयत्न किया। सुल्तानो को प्रतिवर्ष विद्रोही हिन्दुओं तथा विरोधी किसानों का दमन करने के लिए सैनिक यात्राऍं करनी पडती थी। इन परिस्थितियों में गुलाम सुल्तानों के सामने समस्या यह थी कि पूर्व के राज्य की रक्षा कैसे की जाय प्रत्येक शासन काल में सल्तनत की सीमाएं धटती बढती रहती थी। सामान्य रूप में उसकी सीमाएं उत्तर मे हिमालय की तराई से दक्षिण मे।एक टेडी मेडी रेखा बंगाल से सिन्ध तक जाती थीं। जिसके अन्तर्गत उत्तरी बंगाल, उत्तरी विहार, बुन्देलखण्ड का कुछ भाग ग्वालियर, रणथम्भौर, अजमेर तथा नागपुर आ जाते थे। और जो जैसलमेर मे उत्तरी भाग से होती हुई आगे चलकर सिन्ध कों गुजरात से अलग करती थी। पूरब में ढाका के पश्चिम तक आधा बंगाल दिल्ली सल्तनत का अंग था। उत्तर पश्चिम सीमा झेलम तक पहुॅचती थी,किन्तु कभी–कभी सिकुडकर व्यास तक ही रह जाती थी हमेशा लाहौर, सिन्ध और मुल्तान सल्तनत के अन्तर्गत बने रहे। नमक की पहाडियों का प्रदेश जम्मू व कश्मीर और पंजाब के उत्तर पूर्वी तथा उत्तर पश्चिम कोना दिल्ली राज्य की सीमाओं के बाहर थें। हिन्दू सामान्त राज्य करते थें इन पर दिल्ली सल्तनत कभी पूर्णतया विजय नही कर पायी।

2.2. राज्य का स्वरूप

दिल्ली सल्तन के शासकों आचरण भी कुरान के नियमों द्वारा होता था। वह अपने निजी जीवन में ही नही बल्कि शासन के सम्बन्ध मे भी इन नियमों का पालन करता था। यदि वह कुरान के नियमों के अनुसार अपना शासन नहीं चलाता तो वह अपनी प्रजा द्वारा अनुमोदित सुल्तान नही रहता था। इसलिए भारत मे दिल्ली सुल्तानों का आदर्श इस्लामी राज्य कहा जा सकता है। देश की समस्त जनता कों मुसलमान बनाना देशी धर्मों को मूलोच्छेदन करना व जनता को मुहम्मद का धर्म स्वीकार करने के लिए वाध्य करके दार **उलहर्ब** को **दार–उल–इस्लाम** में परिवर्तित करना ही दिल्ली के अधिकांश सुल्तानों का लक्ष्य था।

दिल्ली सल्तनत सैनिक राज्य था। और जनता की इच्छा पर नही बल्कि शक्ति पर आधारित था समस्त भूमि पर शक्तिशाली तुर्की सैनिको का अधिकार था। देश के अन्दर सामरिक महत्व के स्थान पर सेनाए नियुक्त कर दी गयी। सीमाओं पर किलों का निमार्ण किया गया और उनमें तुर्की सैनिक नियुक्त किये गये। विदेशी होने को कारण सरकार के केवल दो कार्य थें, एक लगान वसूल करना

और दूसरा शक्ति व व्यवस्था बनाये रखना। आमजन मानस के हितो।से उनका कोई लेना देना नही था। जब तुर्कों ने हमारे देश को जीता तो अन्य मुस्लिम विजेताओं के समान तीन चीजों को चुनने को कहा **पहला** इस्लाम को स्वीकार करना **द्वितीय** बहुसंख्यक आमजन ने जजिया देकर दलित प्रजा के समान जीवन विताये बहुसंख्यक आमजन ने जजिया देकर जीवित रहने का अधिकार प्राप्त किया एवं **तीसरा** मृत्यु को स्वीकार करें। इन गैर मुसलमानों को **"जिम्मी**" की संज्ञा से सम्बोधित किया गया। इन जिम्मियों पर अनेक प्रतिबन्ध लगायें गये जैसे–नौकरियों, नागरिक अधिकरों, न्याय तथा कर के सम्बन्ध में उनके साथ मुसलमानों जैसा व्यवहार नही किया जाता था।

2.2.1. खलीफा से सम्बन्ध

इस्लामी प्रभुत्व के सिद्धान्त के अनुसार संसार के सभी मुसलमानों का चाहे वे कही भी हो एक शासक होता हैं और उसे 'खलीफा कहते है। उन दिनों जब खलीफा की शक्ति अपनी चरम सीमा पर थी तो खलिफा के लिए विभिन्न प्रान्तों में सूबेदारें की नियुक्ति करता था जब कोई सूबेदार स्वतंत्र शासक बन जाता तब भी वह अपने आप को स्थायित्व देने के लिए वह खलीफा के नाम का सहारा लेकर अपने को खलीफा का अधीनस्थ सहायक या सांमन्त घोषित करता परन्तु व्यवहारिक दृष्टि से एक स्वतंत्र शासक के समान ही व्यवहार करता था।

महमूद गजनवी को बगदाद के अब्बासी खलीफा ने सुल्तान की उपाधि प्रदान की थीं। मुहम्मद गोरी ने अपने सिक्कों पर खलीफा का नाम खुदवाया था। हिदुस्तान के आरम्भिक तुर्क सुल्तानों का हित भी इसी मे था, कि लोग उन्हे खलीफा द्वारा नाम निर्देशित समझें। इल्तुतमिश दिल्ली का पहला सुल्तान था, जिसने खलीफा से सुल्तान की खिलअत प्राप्त की थी।उसने अपने सिक्को।पर बगदाद के खलीफा के नाम को खुदवाया। गुलाम वंश के पूरे युग में इल्तुतमिश के किसी भी उत्तराधिकारी को इस प्रकार इस्लामी राज्य के प्रमुख से खिलअत नही प्राप्त हुई। फिर भी इस वंश के सभी शासक अपने को खलीफा का नायब मानते हैं।

दिल्ली सल्तनत की प्रशासनिक व्यवस्थता भारतीय एवं अरबी फारसी व्यवस्थाओं की सम्मिश्रण थी जिसमें खलीफा को वैधानिक रूप से सर्वोच्च अधिकार प्राप्त थे और सुल्तान उसके प्रतिनिधि के रूप में शासन करता था। परन्तु व्यवहारिक रूप से सुल्तान और उसकी सल्तनत का खलीफा से कोई लेना देना नही था। सुल्तान केवल औपचारिकता वस खलीफा के प्रति सम्मान प्रदर्शित करता थां।

प्रशासन में सुल्तान सर्वोच्च था। वह सर्वोच्च सेनाध्यक्ष, सर्वोच्च विधि निर्माता, और सर्वोच्च न्यायाधिकारी होता था, उसकी शक्तियाँ व्यापक थी उसकी शक्ति का आधार उसकी सेना थी। जिसके द्वारा उसकी स्वयं रक्षा और उसकी इच्छाओं का क्रियान्वयन होता था।

यद्यपि सुल्तान सर्वोच्च एवं पूर्णतया निरंकुश था, परन्तु फिर भी उस पर व्यक्तिगत नियमों, प्रभावशाली मंत्रियों सेना, उलेमा तथा इस्लाम का नियन्त्रण था। उसका प्रमुख कर्तव्य राज्य एवं प्रजा की सुरक्षा करना , प्रशासनिक व्यवस्था बनाये रखना, धर्मानुकूल आचरण करना, एवं इन्साफ करना था। वास्तव में सुल्तान केन्द्रीय प्रशासन में धुरी के समान था। जिसके द्वारा समस्त प्रशासनिक गतिविधियाँ नियन्त्रित एवं संचालित होती थी।

उमरा वर्ग–

राजकीय शक्ति पर व्यावहारिक नियन्त्रण रखने हेतु केवल दो ही कारण थें, अमीर वर्ग का दबाव तथा उलेमाओं का प्रभाव,। 13 वी शताब्दी में अमीर वर्ग में विदेशी मूल के लोग थें, लेकिन वे दो समूहो।के थें तुर्की दास अमीर और गैर –तुर्की अमीर वर्ग जो कुलीन वर्ग के विदेशी थें तथा धन –दौलत की तलाश मे।मध्य व पश्चिम एशिया से भारत आए थें। अमीरों के दो वर्गो में तुर्की अधिक शक्तिशाली थे तथा उनका राज्य में बड़े– बड़े पदो।पर एकाधिकार था। इतिहासकार बरनी के अनुसार इल्तुतमिश के पास चालीस शक्तिशाली तुर्की दास अमीर थे जिनका उसकी मृत्यु के बाद बहुत अधिक प्रभाव रहा।

2.2.2. उलेमा वर्ग

इस्लामी धर्माचार्यो तथा शरीयत कानून के व्याख्याकारों का एक अत्यन्त महत्वपूर्ण वर्ग था। जिनके साथ सुल्तान को मिल जुल–कर रहना पडता था। जिससे कि राज्य के कार्यो का निर्वाध रूप से संचालन होता था।

शरीयत के मान्य व्याख्याकार होने के कारण उलेमा दो अत्यन्त महत्वपूर्ण कार्य करते थे। पहला.वे धार्मिक विषयों को प्रभावित कर वाले नीतिगत मामलों में सुल्तान के सलाहकार थे। दूसरे राज्य के न्यायिक पदो पर उसका वास्तविक एकाधिकार था धर्म और कानून से घनिष्ठ रूप से सम्बन्ध होने पर भी एक वर्ग के रूप में उलेमा अमीरों की तुलना में कम स्वार्थी नही थे। सांसारिक लाभों के प्रति उत्सुक उलेमा प्रायः राजनीतिक मामलों मे उलझे रहते थें। उलेमाओं के एक वर्ग से इल्तुतमिश के मतभेद थे। बलबन के शासन के दौरान उलेमाओं को कुछ सीमा तक राजनीतिक संरक्षण प्राप्त हुआ।

2.3. केन्द्रीय प्रशासन के पदाधिकारी

सुल्तान मंत्रियों और अधिकारियों के एक वर्ग की सहायता से शासन करता था केन्द्रीय सरकार के मुख्य स्तम्भ मंत्री अथवा शाही दीवान थे। जो सल्तनत के प्रशासन का आधार स्तम्भ थें जिनके उपर सल्तनत का सम्पूर्ण प्रशासनिक ढाँचा टिका हुआ था जो निम्नवत है।

2.3.1. वजीर

यह सुल्तान का प्रमुख सहयोगी एवं सलाह कर्ता था। जिसे ख्याजाजहाँ की उपाधि मिलती थी। वह वितीय विभाग जिसमें दीवान–ए–इसराक, लेखा परीक्षा, दीवान–ए–विजारत राजस्व विभाग दीवान ए इमारत लोक निर्माण विभाग, दीवान–ए–अमीर–कोही, कृषि विभाग के मंत्रियों का प्रभारी था इसके साथ ही वह सरकार की सम्पूर्ण मशीनरी का भी अध्यक्ष होता था

वजीर का मुख्य कार्य नागरिक सेवको की नियुक्ति और उनके कार्यो का निरीक्षण करना था। वह राजस्व एकत्र करने के लिए उत्तरदायी था वह व्यय के विभिन्न विभागों द्वारा प्रस्तुत हिसाबों की जॉच करता था। वह किसी भी समय सुल्तान से

मिल सकता था। संक्षेप में यह कहा जाता कि सुल्तान के बाद सल्तनत का सर्वोच्च अधिकारी वजीर ही था।

2.3.2. आरिज–ए–मुमालिक

यह सैन्य विभाग का मंत्री एवं प्रधान अधिकारी था एवं इसका कार्यालय दीवान–ए–आरिज कहलाता था। यह सेना में सैनिको की भर्ती करने सैनिको एवं धोडो का निरीक्षण करने उनका हुलिया रखने का कार्य प्रमुख रूप से यही करता था। सल्तनत चूँकि सैनिक सरकार थी अतः इसका पद महत्वपूर्ण था।

2.3.3. दीवान–ए–रसालत

ऐसा जान पडता है कि विदेशी तथा कुटनीतिक पत्र व्यवहार का कार्य ये करते थे।।जो राजदूत विदेश भेजे जाते थें या विदेशों से यहाँ।आते थें।उनसे सम्पर्क बनाने का कार्य दीवान–ए–रसालत का था।

2.3.4. इंशा–ए–मुमालिक

इस विभाग को 'दीवान–ए–इंशा कहा जाता था। यह विभाग स्थानीय प्रशासन की देखभाल के अतिरिक्त शाही पत्र व्यवहार का प्रबन्ध करता था।शाही घोषणाओं और पत्रों के मसविदे तैयार करना ,सुल्तान के फरमानों को जारी करना तथा सुल्तान के कार्ये का विवरण लिखना इसका प्रमुख कार्य होता था। इसका कार्य गुप्त प्रकृति के होने के कारण इस विभाग का पदाधिकारी सुल्तान का अत्याधिक विश्वासपात्र होता था।

2.3.5. सद्र–उस–सुदूर

यह धर्म विभाग एवं दान –विभाग का अध्यक्ष होता था। मस्जिदों, मजारो, मकबरों, खानकाहों ,मदरसों ,मकतबों आदि के निर्माण एवं उनकी रक्षा के लिए यही उत्तरदायी होता था।

2.3.6. काजी–उल–कुजात

यह न्याय विभाग का अध्यक्ष होता था। प्रायः जो व्यक्ति सद्र–उस–सुदूर होता था। उसे ही यह विभाग सैापा जाता था। यह साम्राज्य की समस्त न्यायिक व्यवस्था पर नियन्त्रण रखता था तथा न्यायिक मामालो को।निपटाने मे सुल्तान की सहायता करता था।

2.3.7. अन्य विभाग एवं पदाधिकारी

इस प्रमुख विभागों के अतिरिक्त सुल्तान के अधीन अन्य पदाधिकारी भी थे। जो उसके विभिन्न कार्यो के देखते थें। इनमें 'वकील–ए–दर' शाही महल की देखभाल के अतिरिक्त सुल्तान की व्यक्तिगत सेवा की देखभाल किया करता था। सरजांदार अमीर–ए–शिकार सुल्तान के व्यक्तिगत अंगरक्षको।का मुखिया था 'अमीर –ए–आखूर' शाही अश्वशाला का प्रधान एवं 'शहना–ए –पील' हस्तिशला का प्रधान होते थें। इन सबके के अतिरिक्त सुल्तान बडी संख्या में गुलामों को भी रखाता था। जो उसकी व्यक्तिगत सेवा करते थे।

बोध प्रश्न–

1. सभी मुसलमानों का एक शासक होता था जिसे खलीफा कहते है।

2. शासको का आचरण कुरान के नियमों के द्वारा नियन्त्रित होता था।

3. मुहम्मद गोरी अपने सिक्को।पर खलीफा का नाम खुदवाया था।

प्रश्न– दिल्ली सल्तनत में खलीफा के महत्व को 100 शब्दों मे लिखे।

....
....
....
....
....
....
....

2.4. प्रान्तीय प्रशासन

13 वीं सदी में दिल्ली सल्तनत को अनेक सैनिक क्षेत्रों में विभाजित किया गया था जिसे उस समय इक्ता कहा जाता था। इक्ता प्रधान अधिकरी ''मुक्ता'' या ''वली'' कहलाता था। लेकिन बाद में जब सल्तनत का विस्तार हुआ तब प्रान्त बनाए गयें। सूबेदार तथा इक्तादारों या मुक्ताओं की नियुक्ति उनकी योग्यता के आधार पर सुल्तान द्वारा की जाती थी इनका प्रमुख कार्य अपने प्रान्तो में शासन व्यावस्था के साथ शान्ति बनाए रखना, विद्रोहो का दमन करना करों की वसूली करना तथा न्यायिक –प्रशासन करना था। केन्द्र में सुल्तान की सहायता के लिए इन्हे सदैव सैनिक सेवा के लिए तैयार रहना पडता था।सुबेदार या मुक्ता अपने कार्यो में सहायता देने के लिए अनेक अधिकारियों की नियुक्ति करता था। जिससे प्रमुख रूप से ''नाजिर'' एवं ''वकूफ'' प्रमुख थें। ये राजस्व वसूलने का कार्य करते थें इनके अतिरिक्त प्रान्तीय शासन में '**साहिबा–ए–दीवान**' का एक महत्वपूर्ण पद होता था। जिसकी नियुक्ति केन्द्रीय वजीर की सिफारिश पर सुल्तान करता था। यह राज्य की आय का व्यौरा रखता था। और उसका सारा व्यौरा सुल्तान को भेजता था। वह सुल्तान के प्रति उत्तरदायी था। प्रान्तों में केन्द्रीय प्रशासन की तरह ही काजी एवं कुछ अन्य पदाधिकारी होते थे।

2.5. खालसा भूमि

गवर्नरों द्वारा शासित प्रान्तों के अतिरिक्त केन्द्रीय शासित प्रदेश भी थे जिनका प्रबन्ध केन्द्रीय सरकार करती थी। इस क्षेत्रों को **खालसा क्षेत्र** कहा जाता था। इसकें राजभूमि एवं सुरक्षित क्षेत्र भी कहा जाता था। इस क्षेत्र का राजस्व सीधे केन्द्रीय राजस्व वसूल करता था। इन क्षेत्रों के किसान अपने गाँवों के मुखिया द्वारा सीधे सरकार को लगान देते थें।

2.6.सैनिक संगठन

शासन का सबसे महत्वपूर्ण विभाग सैन्य संगठन का था। सुल्तान की शक्तियाँ उसके बल पर निर्भर थी किन्तु आश्चर्य की बात यह है कि राजधानी में

ऐसी कोई फौज नही थी, जिसे स्थायी सेना का नाम दिया सके। सुल्तान की सेंवा के लिए कुछ अंगरक्षक थें जो **सरे जाँदार** नामक पदाधिकारी की अधिनता मे कार्य करते थें।। किन्तु युद्ध के लिए प्रान्तीय गवर्नरों या मुक्तियें द्वारा भेजी गयी सेंनाओं पर ही निर्भर रहना पडता था। तुर्क लोग जब भारत में आये उस समय वे लडाकू सैनिक थे, लेकिन सैनिक जब शासक बन गये तब भी उनकी सैनिको।की स्थायी सेना की संख्या महसूस हुई। सल्तनत के विस्तार के साथ सुल्तान के अंगरक्षकों की संख्या बडी और एक विशाल स्थायी सेना का केन्द्र बिन्दु बन गया। सैन्य विभाग का प्रधान आरिज–ए–मुमालिक कहलाता था। इसका कार्य सेना का संगठन संचालन अनुशासन नियन्त्रण आदि करना होता था।

सल्तनत सेना का स्वरूप राष्ट्रीय नही था। उसमें तुर्क, अफगान, ताजिम ,मंगोलों ,हिन्दू आदि सभी वर्गों के लोग थें, जो धन के लालच मे लडते थें। उनमें एकता बनाए रखने का एकमात्र सूत्र सुल्तान का व्यक्तित्व था। सेना के मुख्य रूप से 3 अंग थे।

1. पैदल जिसमें अधिकांश धनुर्धर थें।
2. घुडसवार,
3. हाथी

सबसे अधिक महत्व घुडसवार सेना का था। प्रत्येक सवार के पास दो तलवारें एक भाला और धनुष बाण होते थें। सैनिक कवच पहनते थें। और घोडे को भी फौलादी बख्तर पहनायें जाते थे।

अश्वरोही मूलरूप से 3 भागों में बॉटें जाते थें।

1. मुर्रतब दो घोडे वाला सैनिक।
2. सवार –एक घोडे वाला सैनिक।
3. दो अस्पा–जिसके पास एक फालतू घोडा होता था। सुल्तान हाथियों पर बहुत अधिक विश्वास करते थें तथा हाथी रखना सुल्तान का विशेषाधिकार माना जाता था।

सल्तनत काल में सैन्य संगठन पर पर्याप्त ध्यान दिया जाता था। सुल्तान सेंना का प्रधान सेनापति होता था। दीवाने–आरिज या आरिजे–मुमालिक सेनापति का कार्य नही करते थें। उनका कार्य संगठन एवं कभी–कभी आक्रमण के लिए सैनिकों को छॉटता था। इस युग में रजिया ही एक सुल्तान थी जिसके समय में सेनापति नियुक्त हुआ था। पर उसकी मृत्यु के बाद यह पद समाप्त हो गया। सैनिको का वेतन प्रायः जागीर रूप में दिया जाता था, व कभी–कभी नगद वेतन देने की प्रथा भी थी।

सल्तनत काल में सैनिक संगठन सुव्यवस्थित नही था। सुल्तान की सेना और हिन्दू सेनाओं की तुलना की जाय तो भारतीय नरेशों की सेनाएँ अधिक सुयोग्य थी। क्योकि उसमें धार्मिक सुदृढता मातृत्व की भावना तथा एकता का

आधिपत्य था। मुसमान लोग इस देश के लिए परदेशी थे। यही श्रेष्ठता का मुख्य आधार था।

2.7. वित्त व्यवस्था

दिल्ली सल्तनत की आय के प्रमुख पाँच साधन थे। जिनका शरियत में उल्लेख किया गया है।

2.7.1. खराज

यह भूमिकर था। जो हिन्दू सामान्तों एवं किसानो से वसूल किया जाता था। खेती की उपज व राज्य कर का अनुपात हमेशा एक समान नही होता था। खराज अनुमान एवं हिन्दू युग के राजस्व लेखों के आधार पर लिया जाता था।

2.7.2. उश्र

यह भी एक भूमिकर था। यह उस भूमि से वसूल किया जाता था। जो मुसलमानों के अधिकार में होती थी। यह उपज का दशांश लिया जाता था। जब अधिक संख्या में गैर मुसलमानों ने इस्लाम स्वीकार कर लिया तो इसके हानि होने लगी। इसलिए इस भूमि कर में परिवर्तन आवश्यक बन गया।

2.7.3. जजिया

मुस्लिम सरकारें गैर मुसलमानों की जीवन और सम्पति की रक्षा के बदले में उनसे जजियाँ वसूल करती थी। विभिन्न वर्ग के लोगो।के लिए जजिया की दरें भिन्न भिन्न होती थी। पर इसे प्रति व्यक्ति से वार्षिक आधार पर वसूल किया जाता था। महिलाओं, बच्चों, साधु सन्तों आदि को जजिया अदा करने से मुक्त रखा गया था।

2.7.4. खुम्स

काफिरों के विरूद्ध युद्ध में जो लूट का धन प्राप्त होता था। उसका 1/5 राजकोष में व 4/5 भाग सैनिको।में बाँट दिया जाता था।

2.7.5. जकात

जकात नामक कर मुसलमानों पर लगाया जाता था और आय का 1/40 भाग की दर से वसूल किया जाता था। इसे मुसलमानों के हित के कार्यो पर खर्च किया जाता था।

इन करों के अतिरिक्त बाहर से आने वाले माल पर भी चुंगी वसूल की जाती थी। मुस्लिम व्यापारियों से 2–5 प्रतिशत एवं गैर मुसलमानों से 5 प्रतिशत वसूल किया जाता था नदियों के घाटों, सडको।तथा पुलों पर भी एक से दूसरे स्थान को जाने वालों व्यापारिक वस्तुओं पर अनेक प्रकार के कर लगायें जाते थें। शरियत के अनुसार पृथ्वी में मिले हुए धन तथा खानों पर भी सुल्तान का अधिकार होता था। इन साधनो।से सुल्तान को प्रतिवर्ष भारी आय होती थी। सुल्तान की आय का प्रमुख साधन हिन्दू प्रान्तों की लूट थी। जिसमें लाखें रूपया मिलता था। सुल्तान के निजी व्यय के लिए राजकीय आय में से धन नही दिया जाता था। राज्य के सम्पूर्ण आय पर उसी का अधिकार था।

2.8. न्याय व्यवस्था

दिल्ली सल्तनत का स्वरूप यद्यपि सैनिक या परन्तु न्याय प्रशासन को अत्यधिक महत्व दिया गया था। व्यवस्था की रूप रेखा इस समय बडी सरल थी धार्मिक मामलों को दीवानी एवं फौजदारी मामलों से अलग रखा जाता था दीवानी एवं फौजदारी के मामलों में सुल्तान अकेला या अपीलीय न्यायाधीश होता था। प्रायः न्याय करने में मुक्ति का सहयोग लिया करता था।

सुल्तान के बाद काजी–उल–कुजात का पद न्याय व्यवस्था में सर्वोच्च था। इसका कार्यालय ही साम्राज्य का प्रमुख न्यायालय होता था। लेकिन 1248में सद्र –ए– जहॉं के पद के निमार्ण के साथ ही काजी–उल–कु जात अपनी उच्च स्थिति को खो बैठा और सद्र–ए–जहाँ न्यायपालिका का अध्यक्ष बन गया।

प्रान्तों तथा प्रमुख नगरों में काजी रहते थें। उनकी नियुक्ति प्रमुख काजी करता था। दादेवक व अमीरे दाद नाम का अन्य पदाधिकारी भी थे जो आज के सिटी मजिस्ट्रेट के बराबर होते थें। हिन्दूओं के मुकदमों के फैसले पंचायतों में होते थें किन्तु जिनमें हिन्दू और मुसलमान दोनों शामिल होते उनके फैसले काजी किया करता था। कोतवाल नगर में पुलिस विभाग के अध्यक्ष होता था। पुलिस पदाधिकारी होने के साथ ही साथ वह मुकदमों की प्रारम्भिक छानबीन कर के काजी को सुपूर्द करता था। दण्डविधान अत्यन्त कठिन था। यातनाऍं तथा अंगछेदन का दण्ड सामान्य था। गुलाम मुसलमानों ने आम जनमानस के जीवन में कम से कम हस्तक्षेप करने की नीति का अनुसरण किया। राज्य की ओर से गाँवों में न्याय का कोई प्रबन्ध नही थां। लोग अपने निजी पंचायतों पर ही निर्भर थे।

बोध प्रश्न–

1. वजीर सरकार की सम्पूर्ण मशीनरी का अध्यक्ष होता था।
2. उलेमा इस्लामी धर्माचायों तथा शरीयत कानून का व्याख्याकार होता था।
3. सद्र–उस–सुदूर को दीवान –ए– इंसा कहा जाता था।

प्रश्न– केन्द्रीय प्रशासन कैसा था इसका उल्लेख करिये।

....
....
....
....
....
....
....
....

2.9. सारांश

वास्तव में दिल्ली सल्तनत सैनिक राज्य था। देश पर आधिपत्य कायम रखने के लिए उसने।सामरिक महत्व के अनेक स्थानों पर अधिपत्य कायम रखना और राजस्व वसूल करना मुख्य कार्य समक्षा जाता था वह साधरण जनता की सांस्कृतिक नैतिक ,शारीरिक, तथा भौतिक समृद्धि की चिन्ता नही करनी थी। इस

प्रकार का राज्य सांस्कृतिक राज्य कहलाने का अधिकारी नही हो सकता लगभग 85 वर्षो तक शासन करने के बाद भी ये लोग भारत भूमि पर विदेशी ही थे।

2.10. शब्दावली

उलेमा–इस्लामी व्याख्याकार

शाहना–ए–पील –हस्तिशाला

अमीर–ए–आखूर–अश्वशाला

खालसा–भूमि–राजभूमि (सुरक्षित क्षेत्र)

2.11. बोध प्रश्न के उत्तर

बोध प्रश्न एक का उत्तर	1. सही	2. सही	3. सही
बोध प्रश्न दो का उत्तर	1. सही	2. सही	3. गलत

इकाई–3

खलजी वंश के शासक एवं नीतियाँ

इकाई की रूपरेखा

3.0. उद्देश्य

3.1. प्रस्तावना

3.2. फीरोज खिलजी का राजनीतिक उत्कर्ष

- **3.2.1.** फिरोज के विरूद्ध विद्रोह
- **3.2.2.** फिरोज की गृह नीति
- **3.2.3.** फिरोज की विदेश नीति
- **3.2.4.** फिरोज का पतन

3.3. अलाउद्दीन खिलजी

3.4. अलाउद्दीन का राजत्व सिद्धान्त

3.5. अलाउद्दीन का प्रशासनिक सुधार

- **3.5.1.** केन्द्रीय प्रशासनिक व्यवस्था
- **3.5.2.** न्याय व्यवस्था
- **3.5.3.** गुप्तचर विभाग
- **3.5.4.** डाक व्यवस्था
- **3.5.5.** सैनिक सुधार
- **3.5.6.** प्रान्तीय एवं स्थानीय प्रशासन

3.6. राजस्व व्यवस्था

3.7. बाजार एवं मूल्य–नियन्त्रण

- **3.7.1.** मंडी
- **3.7.2.** सरा–ए–अदक
- **3.7.3.** घोडों, दासों व पशुओं का बाजार
- **3.7.4.** सामान्य बाजार
- **3.7.5.** सामाजिक सुधार

3.8. अलाउद्दीन का सैनिक अभियान की विदेश नीति

- **3.8.1** मंगोलो से सम्बन्ध
- **3.8.2.** राजपूतों से सम्बन्ध
- **3.8.3.** गुजरात से सम्बन्ध
- **3.8.4** .रणथम्भौर विजय

3.8.5 मेवाड पर आक्रमण

3.8.6. मालवा एवं अन्य विजय

3.9. अलाउद्दीन की दक्षिण विजय

3.9.1. देवगिरी

3.9.2. वारंगल

3.9.3. द्वारसमुद्र

3.9.4. बाबर

3.0. उद्देश्य

- ❖ इस इकाई में खिल्जी साम्राज्य के अध्ययन के बारे में जानकारी मिलती है।
- ❖ खिल्जीयों के शासन प्रबन्ध के बारे में जानकारी मिलती हैं।
- ❖ अलाउद्दीन की गृहनीति का मूल में क्या दिया था।
- ❖ इस इकाई के माध्यम से अलाउद्दीन की बाजार व्यवस्था से समाज को सामाजिक जीवन सरल बनता है।

3.1. प्रस्तावना

बीस वर्षो तक मंत्री के रूप में बीस वर्षो तक शासक के रूप में इस प्रकार चालीस वर्षो तक शासन करने पश्चात 80 वर्षीय बलबन को मग्रहदय मृत्यु का अलिंगन करना पड़ा जिस समय सुल्तान मृत्यु शैय्या पर पड़ा था, उसने राज्य के प्रमुख अमीरो को शहीद युवराज मुहम्मद के पुत्र कैखुमरो के राज्यारोहण का समर्थन करने को कहा। किन्तु राजनीति नैतिक सम्बन्धों को नही जानती और जैसे ही 1287 ई० में वलवन की ऑख वंद हुई उसकी इच्छा कोवाख पर ताख कर कोतवाल फखरूउद्दीन के षडयन्त्रों के कारण कैखुसरो को मुल्तान भेज दिया और वुगरा खॉ के पुत्र कैकुवाद को सुल्तान मुईजुद्दीन कैकुवाद की पदवी के साथ गद्दी पर बैठा दिया गया। डा० के० एस० लाल के शब्दो में ''मुई जुद्दीन का हृदय उदार था, स्वभाव परिष्कृत और व्यक्तित्व आकर्षक था। किन्तु उसकी युवास्था उसकी सबसे बड़ी शत्रु थी।'' सजग बलबन बड़ी कडाई से उसकी देखभाल की थी। बरनी के शब्दो में ''कैकुवाद का जीवन काल में न तो किसी सुन्दर चेहरे को देखा था न ही कभी मदिरा को होठो से लगाया था। ''इस प्रकार जब उसने अचानक अपने को पूर्णतः मुक्त व विशाल साम्राज्य का स्वामी पाया तो उसने अपने को आत्मत्रुष्टि और युवावस्था की चंचलता में डुबो किया परिणामस्वरूप बलवन के द्वारा स्थापित कुशल प्रशासनतंत्र टूट कर बिखर गया। और लोगों के हृदय में प्रभुसत्ता का भय, गुप्तचरो का आतंक और शासक के प्रति भक्ति जाती रही। फरिस्ता लिखता है'' मलिक–उल–उमरा फखरूद्दीन के भतीजे और दामाद मलिक निजामुद्दीन ने यह देख कर कि सुल्तान सदैव ही सुरा–सुन्दरी में व्यस्त रहता है और एक दिन राज्य उसके हाथ से निकल जायेगा

शासन की बागदोर पूरी शक्ति से अपनी मुठठी में करने का निश्चय कर लिया ऐसी परिस्थितियों में सुल्तान ने सामाना के नायव और दरवार के सरजॉदर जलालुद्दीन की रोज खलजी को बुला भेजा। उसके आ जाने पर उसे शायस्ता खान की पदबी वरन की जागीर और युद्ध मंत्री का कार्य दिया गया और बलबन के दो अमीर मालिक एतमार कच्छन को बारबक और मलिक एतमार को वकील–ए–दर बनये गये। इस अन्तरिम व्यवस्था के द्वारा प्रगमगाते हुए प्रशासन को चलाने का प्रयास किया गया। इस प्रकार दिल्ली दरवार में मंत्री होने के अतिरिक्त फिरोज सामान्त हिन्दुस्तान में विखरे हुए विशाल खली कवीले का प्रमुख भी था फिरोज खिलजी का राजनीति उत्कर्ष तुर्क अमीर सशंकित हो उठे। उनमें ये देश और इर्ष्या की भवना प्रबल हो गई। सार स्वरूप दिल्ली दरवार स्पष्टतः दो दलो में बट गया। एक दल का नेता फिरोज व दूसरे का एतमुर सुर्खा इसी महय सुल्तान नासिरूद्दीन महमूद पर पक्षाघात का आक्रमण हुआ और बीमार होकर वह किल सूरी के महल में मृत्यु हो गयी तुर्की अमीरो ने इस परिस्थीतिक काम उठाकर मलिक कच्छन और सुर्खा ने नासिरूद्रदीन ने अल्पवयस्क पुत्र क्यूमर्स को शम्सुद्दीन द्वितीय के नाम से गद्दी पर बैठा दिया। तुर्क अमीरों ने खलजियों के दमन की योजना बनी।

जिस समय यह षड्यन्त्र हो रहा था, उस समय फिरोज मूगल पहाड़ी पर शाही सेना का निरीक्षण कर रहा था। तुर्को ने फिरोज को दरवार में क्यूमर्स के सामने उपस्थित होने का आदेश भिजवाया लेकिन उसने इसकी अवहेलना की। अतः कच्छन स्वम् संदेश लेकर गया, फिरोज ने उसकी हत्या करवा दी। अब तुर्को और खिलजियों और उनके समर्थकों के मध्य खुला युद्ध आरम्भ हो गया। क्यूमर्स को खलजियो ने बन्दी बना लिया। एतमूरा सुखी और उसके समर्थक मारे गये। कैकुबाद की भी हत्या कर दी गयी। फिरोज कैमूर्स को पुनः गद्दी पर आसीन किया और स्वयं उसका संरक्षक बन बैठा। करीब तीन महीने तक इस पद पर बना रहा इसी मध्य फिरोज ने क्यूमर्स को बन्दी बना कर जेल मे डाल दिया। जेल मे ही कैमूर्स की मृत्यु हो गयी। कैमुर्स की मृत्यु के बाद फिरोज खलजी स्वयं ही किलखूरी के महल में 13 जून 1290 ई० को सुल्तान बन बैठा। इसके साथ ही दिल्ली में राजसत्ता तुर्को के हाथों से निकलकर खलजियों के हाथों में चली गई

3.2. फिरोज खिलजी का राजनीतिक उत्कर्ष

अब फिरोज किलखूरी के महल से निकलकर दिल्ली जाने की योजना बनायी, दिल्ली के कोतवाल एंव अभ्य व्यक्तियो के आमंत्रण पर वह दिल्ली पहुचा। दिल्ली पहुचकर उसने बलबन के प्रति श्रद्धा एंव विनम्रता प्रकट की और दिल्ली के सिंहासन पर वैठने से मना कर दिया। उसने अमीरो से भाव विहवल शब्दों में कहा '' तुम जानते हो कि मेरे पूर्वजो में कोई भी शासक नही था जिससे राजत्व का अभिमान और गौरव मुझे विरासत में मिलते सुल्तान बलबन यहॉ बैठते थे। और मैने उसकी सेवा की है। उस शासक के भय और गौरव ने मेरे हृदय को अभी नही त्याग है। यह महल बलबन ने बनवाया था जब वह खान था और यह उसकी उसके पुत्र एंव सवंधिये की सम्पति है। दिल्ली की जनता एवं इससे अत्याधिक प्रभावित हुए। उसने शासन में अनावश्यक हस्तक्षेप और कूट नीति का त्याग कर दिया। परिणाम स्वरूप सुल्तान का भय एवं आतंक समाप्त हो गया अमीरों के मंसूबे पुनः राज्य में विद्रोहों का तॉता लगा गया।

बोध प्रश्न–

1. जलालुद्दीन के समय देवगीरी का था एक रामचन्द्र था।
2. ईरानी फकीर सीदी मौला को हाथी के पैरों तले कुचला गया।
3. खिलजी वंश के सुल्तान तुर्क थे।

प्रश्न– फिरोज खलजी के प्रमुख विद्रोही का उल्लेख 100शब्दों में कीजिए–

....
....
....
....
....
....
....
....

3.2.1. फिरोज के विरूद्ध विद्रोह

सुल्तान बनते ही फिरोज का विद्रोहों का भी सामना करना पड़ा। 1290 ई मे कडा एवं मानिकपुर के सुबेदार मलिक छज्जू ने विद्रोह किया। उसने सुल्तान मुर्गीसुद्हीन की उपाधि ग्रहण की अपने नाम के सिक्के चलवाये। अवध के सुबेदार अमीर उनकी हातिम खॉ और बलवन के समय के राज्य के पूर्वी भागों के कुछ अन्य सरदार भी उससे मिल गये। दोआब के कुछ हिन्दू सरदार भी उसके साथ हो गये। विद्रोह की सूचना मिलने के बाद फिरोज ने अपने पुत्र अर्ककी खॉ को मलिक छज्जू को रोकने के लिए भेजना, साथ में सुल्तान सामने पेश किया गया बार मलिक की दशा देखकर सुल्तान द्रवित हो उठा ओर उसे क्षमा दान देकर मुल्तान भेज दिया गया उसने स्पष्ट रूप से कहा कि वह अपने सम्बंधियों में किसी के लिए अमानुशिक नर संहार करने वाले राजत्व के बहके उसकी मानवता बदलना चाहे वह स्थान रिक्त कर सकता है। यद्यापि फिरोज की यह नीति एक शासक के अनुकूल नही थी लेकिन मलिक व उसके समर्थकों ने फिर विद्रोह नही किया। सुल्तान फिरोज की उदार नीतियों की प्रतिक्रिया खलजी अमीरों में भी हुई। ऐसी ही एक गोष्ठी मलिक ताजुदृदीन कूची के घर पर बनी सुल्तान को जब इसकी सूचना मिली तो उसने कूची व उसके समर्थकों को बुलाकर भावुकतापूर्ण भाषण दिया ले लेकिन कोई कडी कार्बन ही नही की।

जलालुद्दीन के विरूद्ध एक अन्य विद्रोह का प्रदान सीदी मौला नामक एक फारसी दरवेंश ने किया। इतिहासकार बरनी के अनुसार वहा पर हो हिन्दू अधिकारियों हथिया पायक और निरंजन कोतवाल ने सुल्तान की हत्या करने सीदी मौला को सुल्तान बनाने का षडयन्त्र रचा। सुल्तान को इस षडयन्त्र की सूचना मिल गई। सारे षडयंन्त्रकारी पकड़े गए। हाथिया और निरंजन को प्राणदंड दिया गया। काजी जलाल और बलबनी अधिकारियां को निर्वासिन कर दिया गया। इतने षडयन्त्रों के बावजूद सुल्तान ने अपनी उदारता की नीतियों बदलाव नही किया। शीघ्र ही उनकी गुरशास्य ने षड्यन्त्र कर फिरोज खलजी की हत्याकर स्वयं सुल्तान बन बैठा।

3.2.2. फिरोज की गृहनीति

फिरोज ने उदार नीति एंव दया पूर्व व्यवहार के आधार पर अपने विरोधियों एंव दिल्ली की जनता का समर्थन प्राप्त करने का प्रयास किया। उसने खिलजी अमीरों के साथ–साथ तुर्की अमीरों को भी उच्च प्रशासनिक पद सौपे तथा उनका सहयोग प्राप्त किया। उनके पूर्व पदाधिकारी दिल्ली के कोतवाल मलिक फखरूद्दीन वजीर ख्वाजा खातिर कडा और मानिकपुर के सूबेदार मलिक छूज्जू को अपने पद पर बना रहने दिया ही गया। सिराजुउद्दीन सावी और मंडहार के राजपूत राजा को क्षमादान तो किया ही गया साथ ही उन्हें तोहफा भी प्रदान किया गया। जैसे – फिरोज के बडे बेटा इख्यितारूद्दीन को खान–ए–खानाना का पद देकर दिल्ली के निकटवर्ती क्षेत्रों का प्रशासन बनाया। मॅझले पुत्र को अरकली खॉ की उपाधि देकर मुल्तान का सुल्तान बनाया। छोटे पुत्र को कद्रखॉ की उपाधि मिली भाई को भगरेश खॉ को आरिजे ममालिक भतीजा अलुग खॉ की उपाधि मिली। भाई को मगरेश खॉ को आरिजे ममालिक भतीजा उलग खॉ को आसूरवक एवं अलाउद्दीन को अमीर–एन्तुजुक एवं अहमद चाचा की बारबक का पद दिया गया। फिरोज की उदारता और मुक्च हाथों से पदो। के बॅटवारे ने फिरोज के समर्थन न जनमत तैयार कर दिया। लोग भूल गये कि फिरोज ने बलबन के दो उत्तराधिकारियों की हत्या कर गद्दी पर अधिकार किया था। अब दिल्ली का आमजन मानस फिरोज की समर्थक बन गयी।

3.2.3. फिरोज की विदेष नीति–

फिरोज युद्ध एवं रक्तपात से घृणा करता था। तथा शांतिपूर्ण जीवन व्यतीत करना चाहता था। फिरोज का सबसे यह महत्वपूर्ण अभियान रणथम्भौर के चौहान राजपूतो के विरूद्ध था चौहान ने हम्मीर देव के नेतृत्व में अपनी शक्ति बढा ली थी। इसलिए सुल्तान न रणथम्भौर पर विजय करने की योजना बनाई। उसने रणथम्भोर के प्रसिद्ध दुर्ग पर आक्रमण करने के लिए प्रस्ताव किया रास्ते में क्षैन का दुर्ग का घेरा उठाना पडा। फिरोज के समय मंगोल नेता हलकू के पौत्र अब्दुल्ला का आक्रमण 1292 ई0 में हुआ फिरोज ने सिन्ध नदी के किनारे अब्दुल्ला को पराजित किया। उसने फिरोज बारली मंगोलो को दिल्ली में रहने की आज्ञा मिल गई फिरोज ने अब्दुल से अपनी पुत्री का विवाह कर दिया। दिल्ली में जो मंगोल रह गये वे लोग इस्लाम धर्म स्वीकार कर यहॉ की संस्कृति में रच बस गये। फिरोज की मंगोल नीति दिल्ली की राजनीति में मंगोलों के प्रभाव को बडा दिया जो सल्तनत के लिए अच्छा रहा। फिरोज की आज्ञा प्राप्त कर अलाउद्दीन खिलाजी ने 1292 ई 0 में मालवा पर आक्रमण का इसे लूटा। साथ ही देवगिरी के राजा रामचन्द्र देव पर भी आक्रमण कर वे हिसाब संम्पति लूटी।

3.2.4. फिरोज का पतन

देवगिरि अभियान के पश्चात अलाउद्दीन खलजी फिरोज की दुर्बलता का लाभ उठाकर गद्दी हथियाने का प्रयास करने लगा। देवगिरि से प्राप्त धन ने उसके हौसले बढा दिए।

3.4. अलाउद्दीन खलजी

दिल्ली मे फिरोज के दरवारियों ने अलाउद्दीन की धृष्ठता को ध्यान दिलाया, क्योंकि अलाउद्दीन चन्देरी अभियान की आज्ञा लेकर देवगिरि जा पहुँचा और लूट की सम्पति सुल्तान को नही भेजा। इधर अलाउद्दीन को भी अपराध

बोध हो रहा था। इस किए उसने सुल्तान को धोखे में रखते हुए पत्र लिखा कि वह राजाओं के भय से दिल्ली नही आ सकता था। परन्तु वह सुल्तान का लूट का माल देना चाहता है। सुल्तान अपने थोडे से अंगरक्षकों के साथ अलाउद्दीन से मिलने के लिए मानिकपुर चला गया। अलाउददीन से गले मिलते समय ही अलाउद्दुदीन के अनुचरों नें फिरोज की हत्याकर दी 20 जलाई 1296 इतिहासकार बरनी के अनुसार मृत सुल्तान के सिर को भाले की नोंक पर रखा गया सेना के मध्य घुमाया गया,जिससें अलाउदृदीन का आंतक समाप्त गया। वह आगे लिखता हॅ कि शहीद सुल्तान के कटे सर में रक्त टपक रहा था। जबकि शाही चॅदोवा अलाउद्दीन के सिर पर उठाया गया और वह सुल्तान घोषित किया गया। प्रो0 हबीब और निजामी के शब्दों में यद्यापि अलालुद्दुदीन की नियोजित साम्राजयवादी अर्थव्यवास्था के बीच एक पुल था। इतिहास ने उसका उपयोग तुर्को की प्रतिगामी और पिछड़ी जातिय राजनीति समाप्त करने और संगठित भारतीय–मुस्लिम राज्य की स्थापना की आधार भूमि तैयार करने के लिए किया।

अलाउद्दीन खिलजी सुल्तान फिरोज खिलजी का भतीजा था। उसका पिता शहबुद्दीन मसूद खलजी बलबन की सेना में एक सैनिक पदाधिकारी था। मसूद की आकस्मिक मृत्यु के बाद अली की देखभाल करने की जिम्मेदारी उसके चाचा फिरोज खिलजी ने अपने ऊपर ली अली की अभिरूचि शिक्षा प्राप्त करने से अधिक सैनिक कार्यो में अधिक थी। अतः उसने घुडसवारी और तलवार वाली में पारंगत हो गया। उसकी सैनिक प्रतिभा से जलाउद्रदीन अत्यंत ही प्रभावित था। इस लिए उसने अपनी पुत्री का विवाह अली से कर दिया। मलिक छज्जू के दमन करने के पारितोषिक स्वरूप फिरोज ने उसे कड़ा–मानिकपुर का प्रान्तपति नियुक्त किया। बाद में उसे अमीर–ए–तुजकु का पद सौपा गया। कड़ा के प्रान्तपति के रूप में अलाउद्दीन को अपनी शक्ति और प्रभाव बढानें का मौका मिला कडा में उसने वैसे खलजी सरदारों एवं वैसे लोगों को अपने आप में मिलाया जो सुल्तान के उदारनीति से असन्तुष्ट थे। अलाउद्दीन ने खलजी के समय हो मुख्य सैनिक अभियान किए। उसकी अनुमति से अलाउद्दीन ने मालवा प्रदेश में स्थित भिलसा पर 1293 ई0 में आक्रमण किया। यहॉ के मंदिरों से अपार धन सम्पदा लूटा। सुल्तान ने अलाउद्दीन को खारिज ए ममालिक व अवध की सूवेदारी सौपी इससे अलाउद्दीन का प्रभाव और अधिक बढ़ गया। अलाउद्दीन का दूसरा सैनिक अभियान 1295 ई 0 मे देवगिरी के राजा रामचन्द्र देव पर हुआ। देवगिरी यादवों की राजधानी थी। अलाउद्दीनन ने अपने सैनिकों क साथ आक्रमण पर सुगमता से एलिचपुर से सीमांत नगर पर अधिकार कर किया। रामचन्द्र की स्थिति अच्छी नही थी। इसी मध्य रामचन्द्र का पुत्र शंकरदेव आ गया उसने अलाउद्दीन से युद्ध किया। परन्तु परजित हुआ बाध्य होकर रामचन्द्र को भारी हर्जाना देकर संन्धि करनी पड़ी। फरिश्ता लिखता है कि अलाउद्दीन को देवगिरि से करीब 600 मन सोना 7 मन मोती 2 मन जवाहरात लाद कर याकूव हीरे,पन्ने 1000 मन चॉदी 4000 रेशमी कपडों के थान तथा अन्य बहुमूल्य वस्तुएँ प्राप्त हुई। रामचन्द्र वार्षिक कर देना स्वीकार किया। अलाउद्दीन बिना अनुमति के गुप्त के गुप्त रूप से देवगिरि पर अक्रमण किया था। और सारा धन लेकर कड़ा चला गया,इससे लिए अलाउद्दीन के विरोधी थें वे सुल्तान का कान भरना शुरू कर दिया। अत सुल्तान अलाउद्दीन के बुलाने पर मानिकपुर मिलने आया। वही धोखे से अलाउद्दीन ने सुल्तान फिरोज खिलजी की हत्या करवा दी और मानिकपुर से ही 19 जुलाई 1296 को अलाउद्दीन ने अपने आप को सुल्तान घोषित कर दिया।

दिल्ली की राजगद्दी सॅभालने के पश्चात अलाउद्दीन ने सबसे पहले प्रशासनिक व्यवस्था की ओर ध्यान दिया। राज्य के महत्वपूर्ण पदों पर नियुक्तियों की गई। ख्वाजा खतीर को वजीर और काजी सद्रदीन आरिफ को सद्रेजहॉ बनाया गया। फखरूद्दीन कूची दिल्ली का दादबक और जफर खॉ को सुरक्षाकर्मी का पद दिया गया। दिल्ली में भी अपना प्रभाव बढाने के लिए अलाउदीन ने राजकीय धमार्थ दानों को स्थायी बना दिया तथा उसमें वृद्धि भी की। बरनी के अनुसार राज्य के प्रत्येक सेवक को एक वर्ष छ मास का वेतन इनाम के रूप में दिया गया। इससे अलाउदृदीन का समर्थन बढ़ गया। शासक बनने के बाद अलाउदीन खिलजी ने सर्वप्रथम फिरोज खिलजी के पुत्रों के उन्मूलन का निश्यच किया जो कभी भी उसकी सता को चुनौती दे सकते थे। इस उद्देश्य से उलूग खॉ और जफर खॉ को एक सेना के साथ मुल्तान भेजा गया जहॉ फिरोज खलजी का परिवार था। सेना ने मुलतान पर अधिकार कर अर्कली खॉ एवं परिवार के अन्य सदस्यों को बंदी बना लिया। बाद में अर्कली खॉ रूकुनद्दीन इब्राहिम उलूग तथा अहमद चप को अंधा बना दिया गया। उनकी स्त्रियॉ भी बंदी बना ली गई एवं उनकी स्त्रियॉ भी बंदी बना ली गई एवं उनकी संपत्ति जब्त कर ली गइ्र। अर्कली खॉ के पुत्रों की हत्या कर दी गई। इस कारवाई से अलाउद्दीन की स्थिति निश्चित हो गई। अब उसने प्रशासनिक गठन एवं सैनिक अभियानों की योजना बनाई।

3.4.1. अलाउद्दीन का राजत्व सिद्धान्त

अलाउद्दीन खिलजी दिल्ली सल्तनत का एक महान शासक था जिसने राजनितिक और शासन के विभिन्न क्षेत्रो में अपनी दूरदर्शिता ओर मौलिकता का प्रदर्शन किया। उसका राजत्व सिद्धान्त भी उसकी मौलिकता का सुन्दर प्रमाण है। अपनी स्थिति के सुदृढ़ होते ही उसने बलबन के राजत्व सिद्धान्त की पुन स्थापना की अलाउद्दीन की प्रथम समस्या थी हड़पे हुए राज्य को जनता की दृष्टि में उचित सिद्ध करना जिसके कि वह वास्तविक राज्य के समकक्ष हो जाए जिसके लिए जनता कि वह वास्तविक राजत्व के समकक्ष हो जा जिसके लिए जनता में प्रेम लगाव व भक्ति थी। वह ऐसे राजत्व में विश्वास करता था जों अपने असतित्व द्वारा अपना औचित्य सिद्ध कर सके। अमीर खुसरों ने अलाउद्दीन के राजत्व को ईश्वर की छाया माना। किन्तु वह शरीअत में दिए गए सिद्धान्त का सहारा नही लिया। वह राजनीति में धन के महत्व को समझता था उसने अपने अपार धन का प्रयोग जनता का हदय जीतने में किया अलाउद्दीन ने अपने राजत्व को धर्म के प्रभाव से पूर्णत मुक्त करने का प्रयत्न किया। दिल्ली सल्तनत के इतिहास में प्रथम बार उसने यह धोषणा की कि वह उलेमा वर्ग को राज्य की नीति–निर्धारित करने की आज्ञा नही दी। उसने धर्माधिकारियों की उपेक्षा की मै अच्छी तरह जानता हूॅ कि राज्य की भलाई के लिए क्या आवश्यक है एवं क्या लाभप्रद है। उसने कहा कि मै नहीं जानता कि कानून दृष्टि में क्या उचित है। और क्या अनुचित मैं राज्य की भलाई के लिए जो उचित समझता हूॅ उसें ही करने की आज्ञा देता हूॅ मै नहीं जानता कयामत के दिन मेरा क्या होगा वह जानता था कि वह उन्हीं सिद्धान्तों पर शासन कर सकता है जिसे हिन्दू जनता स्वीकार करती हो इसी कारण उसने बलन की उच्च जातीयवादी नीति का त्याग कर दिया और योग्यता के आधार पर पदों को वितरण किया उसने अपनी सता के लिए खिलाफित का नाइव कहा वह केवल सैद्धान्तिक दृष्टि से खलीफा को जीवित रखना चाहता था। विद्रोहो की पुनरावृति रोकने क लिए उसने अपनी गुप्तचर व्यवस्था को अत्यन्त कुशल बना दिया दिल्ली में उसने पूर्णतया शराब बन्दी करवा दी मिल्क, इनाम तथा वक्फ मे। दी गई भूमि को जबत कर लिया तथा अमीरों पर अत्यधिक कर लगा दिया जिससें

व अत्यधिक गरीब हो गए ओर षडयन्त्रों के विषय में सोचना बन्द कर दिया इस प्रकार अपने राज्य को षडयन्त्र रहित बना दिया।

3.5. अलाउद्दीन के प्रशासनिक सुधार

प्रशासनिक व्यसवस्था को स्थायी कुशल और सुदृढ़ बनाना। उसने समयानुकूल और व्यावहारिक शासन–व्यवस्था की स्थापना की। सुलतान की स्थिति एवं उसके मंत्री–अलाउद्दीन सैद्धांतिक और व्यावहारिक रूप से शासन का सर्वोच्च पदाधिकारी था। राज्य की सारी शक्तियॉ उसी के हाथों में केंद्रित थीं। वह एक निरंकुश शासक था। उसने न तो अमीरों का प्रभाव स्वीकार किया और न ही उलेमा के आदेशों का। वह कार्यकारिणी, न्याय राजस्व एवं सेना का सर्वोच्च अधिकारी था। राज्य में सारी नियुक्ति उसी की इच्छानुसार होती थीं। उसके मंत्री भी उसके सलाहकार न होकर उसके सेवक के समान थे। उनकी सलाह का मानना या न मानना सुलतान की इच्छा पर निर्भर करता था। प्रांतीय सूबंदारों पर भी उसका कठोर नियंत्रण रहता था।

सुल्तान का सबसे निकटतम सहयोगी वजीर होता था। वह दीवान–ए–वजारत का प्रधान होता था। राजस्व – वसूली की जिम्मेदारी उसी की थी। वह अन्य मंत्रियों एवं विभागों के कार्यों की देखभाल भी करता था। अलाउद्दीन ने वजीर का पंद अपने विश्वासपात्र सैनिक

अधिकारियों को सौंपा। इस पद पर ख्वजा खातिर, नुसरत खॉ एवं कतलक काफूर नियुक्त किए गए। अपने कार्यों के लिए वजीर सुलतान के प्रति उत्तरदायी होता था। दीवान–ए–आरिज के जिम्मे सैनिक कार्य, सेना की नियुक्ति उनके वेतन का प्रबंध, सेना के साजो–सामान जुटाने, सेना का निरीक्षण इत्यादि कार्य सौपे गए थे। युद्धमंत्री आरिज–ए–ममालिक कहलाता था। उसकी सजायता नायब आजि करते थे। दीवान–ए–इंशा विभाग का प्रधान दबीर–ए–खास होता था। इस विभाग का कार्य शाही आदेशों और पत्रों का प्रारूप तैयार करवाना, प्रांतपतियों और स्थानीय अधिकारियों से पत्र–व्यवहार करना और सरकारी आदेशों को सुरक्षित रखना था। इस विभाग का प्रधान अनेक दबीरों की सहायता से कार्य करता था। दीवान–ए–रसालत विदेश–विभाग था। यह विदेशी देशों से संपर्क साधा करता था। यह विभाग संभवतः सुलतान के ही अधीन था। अलाउद्दीन ने एक नए विभाग की भी स्थापना की,

जो दीवान–ए–रियासत के नाम से जानी जाती थी। यह बाजार एवं व्यापारियों पर नियंत्रण रखता था। इन मंत्रियों के अतिरिक्त केंद्रीय सरकार के अनेक कर्मचारी थे, जो विभिन्न विभागों से सम्बद्ध कार्यो की देखभाल करते थे,

3.5.1. न्याय–व्यवस्था

अलाउद्दीन ने निष्पक्ष न्याय की व्यवस्था की। वह स्वयं ही सर्वोच्च न्यायाधीश था और दरबार में बैठकर न्याय किया करता था। सुल्तान के पश्चात न्यायिक व्यवस्था का प्रधान सद्र–ए–जहॉ काजी–उल–कुजात था। उएसके नीचे नायब काजी या अदल और मुफ्ती होते थे। अमीर–ए–दाद प्रभावशाली परंन्तु दोशी व्यक्तियों को दरबार में हाजिर करवातें थे। प्रांतों में भी केंद्र के अनुरूप ही न्यायिक व्यवस्था स्थापित की गई। स्थानीय मामूली झगडों को मुखिया और पंचायतें सुलझती थीं। सहज मामलों की सुनवाई एवं उनका निपटारा राजकुमार और सैनिकों अधिकारी भी शीघ्र ही कर देते थे। न्याय में विलंब नहीं होने दिया जाता था। न्यायाधीशों के आचारण पर भी निगरानी रखी जाती थी। मृत्युदंड, अंग–भग

कारावास,कोड़े मारने की सजा तथा संपति के जब्ती की व्यवस्था की गई थी। कठोर दंड द्वारा राज्य में शांति व्यवस्था कायम की गई।

3.5.3. गुप्तचर विभाग

राज्य में शाति व्यवस्था बनाए रखने और विद्रोही प्रवृतियों पर निगरानी रखने के लिए अलाउद्दीन ने पुलिस एवं गुप्तचर विभाग की तरफ भी यथेष्ट ध्यान दिया। पुलिस–विभाग का प्रधान कोतवाल होता थ। दिल्ली एवं अन्य जगहों पर शांति–व्यवस्था की स्थापना उसी पर था। उसे व्यापक अधिकार दिए थे। दिल्ली का कोतवाल सुल्तान का विश्वासपात्र व्यक्ति होता था। कोतवाल के नियंत्रण में ही दीवान–ए–रियासत शहना दंडधिकारी और मुहतसिव गैर इस्लामी बातों को रोकनेवाला अधिकारी कार्य करते थे।

सुल्तान ने एक कुशल गप्तचार विभाग का भी संगठन किया। संपूर्ण राज्य में निपुण एवं प्रशिक्षित गुप्तचरों का जाल बिछा दिया गया जो प्रत्येक घटना की सूचना सल्तान को देते गुप्तचार विभागा का प्रधान बरीक–ए–ममालिक था। जो बरीद संदेशवाहक और मुनाहियन या मुन्ही सूचनाएँ एकत्र करने वाले की सहायता से इस विभाग का कार्य देखता था। गुप्तचर विभाग की कार्यकुशलता का उल्लेख करते हुंए बरनी लिखता है कोई भी सुंलतान की जानकारी के बिना हिल नहीं सकता था और मालिकों एंव अमीरों अधिकारियों एवं महान व्याक्तियों के यहाॅ जो भी घटना घटती थी उसकी सूचना कालांतर में सुल्तान को दे दी जाती थी गुप्तचरों की गतिविधियों के कारण वे अपने घरों में कॉपतें रहते थे।

3.5.4. डाक की व्यवस्था–

गुप्तचर व्यवस्था की कार्य कुशलता में अलाउद्दीन की डाक–व्यवस्था ने भी सहायता पहुॅचाई डाक व्यवस्था सेना के लिए भी आवश्यक थी उनके डाक चौकियों की स्थापना कर वहाॅ घटनों की सूचना भी शीघ्र ही मिल जाती थी। विद्रोहों तथा युद्ध के अवसरों पर डाक व्यवस्था से पर्याप्त सहायता मिलती थी।

3.5.5. सैनिक सुधार –

एक सुसंगठित सेना अलाउद्दीन की विजय आकांक्षओं की पूर्ति एंव उसकी निरंकुशता को बनाए रखने के लिए आवश्यक थी। अतः सुल्तान ने सेना के संगठन में विशेष दिलचस्पी ली। उसने सेना का केंद्रीकरण किया और एक स्थायी सेना की व्यवस्था की फरिश्ता के अनुसार इस सेना में 47500 सुसज्जित और वर्दीधारी घुडसवार थे। सैनिकों की नियुक्ति में स्वय सुलतान दिलचस्पी लेता था सेना को संख्या के आधार पर नकद वेतन दिया जाता था। एक घोडा रखने वाले सवार को यकस्पा और दो घोडे वाले का दो अस्पा कहा जाता था। एक सैनिक का वेतन 234 टंका प्रतिवर्ष था एक अतिरिक्त घोडे के लिए उसे 78 टंका अतिरिक्त भता मिलता था अच्छी नस्ल के घोड़े सेना में रखें गए तथा उनके दागने की व्यवस्था की गई। पैदल और हस्ती सेना की भी टुकडी थी, परंन्तु जलसेना नही थी राजकीय कारखानों मं युद्ध के अस्त्र–शस्त्र बनवाए गए तथा उनसें सैनिकों को सुसज्जित किया गया। सेना पर कठोर नियंत्रण रखा जाता था। एंव समय–समय इसका निरीक्षण किया जाता था सैनिक महत्व के प्राचीन दुर्गो की मरम्मत की गई एंव नए दुर्ग बनाए गए। इसी सेना के बल पर अलाउद्दीन ने सल्तनत की सीमा का विस्तार किया।

3.5.6. प्रांतीय एवं स्थानीय प्रषासन

प्रांतीय व्यवस्था केद्रीय व्यवस्था के मिलती जुलती थी बरनी के अनुसार अलाउद्दीन के समय में केंद्रशासित क्षेत्रों के अतिरिक्त ग्यारह प्रांत थे गुजरात मुल्तान और सिविस्तान दिपालपुर समाना और सुनाम धार और उज्जैन झाईन चितौड़ चंदेरी और इराज बदायूॅ कोल और कर्क कटेहर अवध और कड़ा प्रातों का सर्वोच्च पदधिकारी बली या मुता प्रांतपति होता था उसकी स्थिति लगभग सुलतान के अधीनस्थ शासक क सामन्ती उसे अपनी सेना रखने का भी अधिकार था। उकसा मुख्य कार्य प्रातों से राजस्व वसूल कर सुल्तान के पास भेजना एंव शति'सुव्यवस्था बनाए रखना था। केन्द्र इन प्रांत प्रतियों की गातिविधियों पर नियंत्रण रखता था अलाउद्दीन के समय मे अनेक अधीनस्थ शासक दक्षिण के राज्य में भी थे जिन्हें प्रांतपतियों की अपेक्षा ज्यादा प्रशासनिक स्वायता प्राप्त थी। उन्हें निश्चित वार्षिक कर देना पड़ता था सिक्कों पर सुल्तान का नाम अंकित करना पड़ता था एवं सुल्तना के आदेशें का पालन करना पड़ता था खालसा रक्षित क्षेत्र का प्रशासन केंद्र द्वारा सीधा होता था। इसके अतर्गत आनेवाले नगरों एवं जिलों पर अमीर और शहाना शासन करते थें गॉव सबसे छोटी प्रशासनिक इकाई थी। इसका प्रधान मुखिया होता था। इन प्रशासनिक सुधारों द्वारा अलाउद्दीन ने दिल्ली सल्तनत की जड़े गहराई तक जमा दीं।

1.6.राजस्व वृद्धि के लिए अलाउद्दीन ने तीन महत्वपूर्ण उपाय किए सबसे पहले उसने दोआब में प्रचलित भू–राजस्व की दर में वृद्धि की अब किसानों से उपज का लगान भूमिकर या खिराज के रूप में लिया गया। इसके अतिरिक्त इस क्षेत्र की कर मुक्ति जमीन पर राजकीय नियंत्रण स्थापित किया गया। भूमि की माप करवा कर उपज के आधार पर लगान तय किया गया इतिहासकार बरनी के अनुसार माप और प्रति विस्वा के आधर पर लगान निश्चित किया गया। इस व्यवस्था में किसी को भी छूट नहीं दी गई। इस प्रकार अलाउद्दीन दिल्ली का पहला सुल्तान था जिसने वास्तविक उपज के आधार पर लगान की राशि निश्चित की इस व्यवस्था के द्वारा राज्य ने किसानों से सीधा संबंध स्थापित किया तथा राज्य और किसानों के बीच बिचौलियों का प्रभाव समाप्त कर दिया। राजस्व नकद तथा अनाज दोनों रूप में लिया जाता था। जमीदारों पर नियंत्रण कायम करने के उद्देश्य से अलाउद्दीन ने मिल्क सम्पति इनाम और वक्फ उपहार में दी गई भूमि को वापस लेकर उसे खालसा भूमि सुल्तान की भूमि में परिवर्तित कर दिया। व्यक्तिगत जमीन सिर्फ वैसे लोगों के पास ही बच गई जो राज्य की सेना में कार्यरत थे और ठीक से उसका प्रबध कर सकते थे लगाने वसूलने मकछूमों मुखिया खूत जमीदार और चौधारी के विशेषाधिकरों का समाप्त कर उनसे लगन वसूली की काम वापस ले लिया गया। इससे उनकी स्थिति अत्यंत दुर्बल हो गई। बरनी के अनुसार, सुल्तान की आज्ञा का पालन इस कठोरता से किया गया कि राजस्व किया भिगा का एक सिपाही बीस खूतों वसूल करता था गॉव के हिंदू मुखिया के लिए असंभव था कि वह अपना सर उठाए। हिंदुओं के घरों में सोना, चादी, टंके, जीतल तथा अन्य फालूत सामग्रि नहीं रह गई। दरिद्रता के कारण खूतों और मुकदमों की स्त्रियॉ मुसलमानों के घरों में नौकरियों के लिए जाया करती थी अब उनके स्थान पर आमिल कर एकत्र करने वाले एवं गुमाशता प्रतिनिाधि लगन वूसलने लगे लगान वसूली से संबद्ध अन्य पदाधिकारी थें मुहस्सिल खराज वसूलने वाला ओहदा दाराने दफातिर कार्यालय का अध्यक्ष और नीवसिन्दा लिपिक बड़ी संख्या में हिदू कर्मचारियां को भी लगान व्यवस्था से जोड़ा गया दीवान ए मुस्तखराज–यह केवल बकाए की वसूली करता था। खिराज भूमिकार की मात्रा बढाकर पचास प्रतिशत कर दी गई। राज्य ने कुछ नए करी लगाए जैसे आवास

जाने वाला कर जकात धार्मिक कर सिर्फ मुसलमानों से वूसला जानेवाला और खुम्स युद्ध में प्राप्त लूट का माल अलाउद्दीन ने इसका भाग राज्य कर के रूप में लिया से भी आमदीन होती थी। दुधारू पशुओं क लिए चारागाह निश्चय कर चराई कर वसूला गया। फरिश्ता के अनुसार चार बैल, दो गाय, दो भैसें, बच्चो, विक्षिप्तों और अपंगों के अतिरिक्त सभी गैर मुसलमानों को जजिया देना पड़ता था। जकात मुसलमानों की संपति के 40 वे भागा के रूप में वसूला जाता था। लगान वसूली का काम कठारेता से होता था। अलाउद्दीन की राजस्व नीत को सफलातापूर्वक लागू करने का श्रेय उसके नाायब वजीर शर्फ कायिनी को दिया जाता है इतिहासकार बरनी ने लगान व्यवस्था की कमजोरिया की ओर हमारा ध्यान आकृष्ट किया है। किसानों से सीधे लगान वसूलने के राजस्व विभाग के अधिकारियों और कर्मचारियों में भ्रष्टाचार बढ़ गया। कर्मचारियों की बखातस्त करने पर भी भ्रष्टाचार में कमी नही आई अत। भ्रष्टाचार का सहारा लेने वाले कर्मचारियों के विरूद्ध कठोर कदम उठाए गए राजस्व कर्मचारियों से बकाए लगान की राशि को लगन की राशि को कठोरतापूर्वक वसूला गया बरनी के अनुसार यदि ककिसी पटवारी की बही से एक जीतल भी उसके जिम्मे निकलता तो उसे कठोर दंड दिए जाते और जेल में डाल दिया जाता यह संभव न था कि कोई भ एक टंके का भी अपहरण कर सके या किसी हिदू या मुसलामन से धूस लें सके राजकीय सेवा तसरूर्फ तथा पदाधिकारी होना लोग बुखार से भी बुरा समझते थे नीसिदगी बहुत बडा दोष समक्ष जाता था। नीवसिदे को लोग अपनी पुत्री विवाह में नहीं दते थे तसरूफ का कार्य वे लोग स्वीकार करते जो प्राणों से हाथ धो लेते। अधिकतर मुतसरिफ तथा आमिल कारागार में रहते और दंड भोगते बरनी का यह कथन अतिशियोक्तिपूर्ण है परन्तु इससे इतना तो पता लगता है कि राज्य ने आर्थिक हितों की सुरक्षा एवं राजकीय धन के गबन को रोकने लिए कठोर कदम उठाए। अलाउदीन की राजस्व नीति के परिणाम स्वरूप राज्य की अर्थिक स्थिति सुदृढ हुई। अलाउद्दीन की भू–राजस्व व्यवस्था की आलोचना करते हुए प्रो0 आर0पी त्रिपाठी लिखते राजस्व विभाग में सबसे बड़ी खराबी स्थायी रूप से यह आसंगठित थी कि लगन ठीक से वसूल नही हो पा रहा था बहुत बड़ी धनराशि बाकी रह जाती थी चूँकि अभी लगान प्रथा ठीक से बनाई जा रही थी। लगान ऑकने तथा वसूल करने का काम अविकसित रूप में था अत कुछ रकम की वसूली होने से बाकी बच जाना अनिवार्य हो गया थ इस कर को बसूल कने के लिए एक हनया विभागा दीवान –ए–मुस्तखराज खोला गया और गलती करने वालो के लिए कड़े दंड व्यवस्था की गई। अलाउद्दीन ने अपनी राजस्व नीति के परिणामस्वरूप किसी के पास इतना धन नही नही।छोडा जिससे वह अहंकारी बन सके अथवा षडयंकारी कार्यो में भाग ले सके। यह अलाउद्दीन की एक बड़ी उपलब्धि थी। इससे सलतनत की स्थिति मजबूत हुई।

3.7. बाजार एवं मूल्य नियंत्रण

अलाउद्दीन का दूसरा महत्वपूर्ण आर्थिक सुधार था बाजार एंव मूल्य पर नियंत्रण स्थापित करना। संभवत सैनिकों को उचित कीमत पर वस्तुएँ उपलब्ध कराने के लिए ही सुलतान ने यह व्यवस्था प्रो. के. एस. लाल और मोरलैंड का विचार है कि यह व्यवस्था सिर्फ दिल्ली में ही लागू की गई थी परन्तु कुछ अन्य विद्वानों की धारण है कि इसे पूरे साम्रज्य मे लागू किया गया था बाजार की देखभाल का कार्य दीवान –ए– रियासत को सौपा गया। यहा विभाग सुलतान के विश्वास याकूब क अधीन था। उसने सभी वस्तुओं के लिए अलग–अलग बाजारों की व्यवस्था की उसके अधीन शहना बाजार का अधीक्षक और बरीद गुप्तचर अधिकारी

की नियुक्ति की गई इन अधिकायियों का कार्य बाजार में वस्तुओ में मूल्यो की बटखरों की जॉच करना था। सभी व्यापारियों को शहान –ए– मंडी में अपने को पंजीकत करवाना पड़ता था सिर्फ पंजीकृत व्यापारी ही व्यापारी कर सकते थे।

3.7.1. मंडी

अलाउद्दीन द्वारा स्थापित बाजारों में सबसे मुख्य था मंडी अथवा गल्ला बाजार नगर के प्रत्येंक मुहल्ले में एक केन्द्रीय इकाई जहॉ अनाज की खरीद–ब्रिकी होती थी। मंडी से संबंधित सात अधिनियम बनाए गए। बरनी ने इन नियमों की विस्तृत विवेचना की है। पहला अधिनियम विभिन्न अनाजों के मूल्य निर्धारण से संबंधित था। सभी अनाजों के दाम निश्चित कर दिए गए। गेहूॅ 7.5 जीतल प्रतिमन जौ 4 जीतन चना 5 जीतल शाली चावल 5 जीतल शाली चावल 5 जीतल माश दाले 5 जीतल चना 5 जीतल ये मूल्य निश्चित थे और इनमें कोई वृद्धि नहीं की जा कसती थी। दूसरें अधिनियम के अनुसार मलिक कबूल उलुग खानी को गल्ला मंडी का शहना नियुक्त किया गया। उसे विस्तृत अधिकार और सैनिक सहायता भी दी गई गल्ला मंडी का बरीद अलाउद्दीन का एक विश्वासपात्र व्यक्ति बनाया गया। तीसरे अधिनियम के अनुसार यह आज्ञा दी गई कि दोआब की समस्त खालसा भूमि का लगान अनाज के रूप में एकत्रित कर सरकारी गोदामों में सुरक्षित रखा जाए। अन्य स्थानों से आधा लगान अनाज के रूप में वसूल कर गोदामों पर कठारे निगरानी रखी गई चौथें अधिनियम के अनुसार घुमक्कड़ व्यापारियों के नेताओं पर कठोर निगरानी रखी गई उन्हें शहना के प्रत्यक्ष के अनुसार घुमकड़ व्यापारियों के नेताओं पर कठोर निगरानी रखी गई। उन्हें शहना के अनुसार नियंत्रण में यमुना नदी के किनारे अपने परिवारों के साथ रहने को कहा गया। ये व्यापारियों नगर में इतना अधिक अनाज लातें थे जिससे सराकारी गोदाम का अनाज छूने की आवश्यकता ही नहीं पड़ती थी और अनाज सभी दुकानों में सहज ही उपलब्ध हो जाता था। अगले अधिनियम द्वारा मुनाफखारों का कठोरतपूर्वक दमन किया गया। अपराधियों को कठोर दंड दिए गए। छठे अधिनियम के द्वारा दोआब और दिल्ली के आसपास के प्रदेशों के समस्त लगान अधिकारियों से यह लिखित आश्वसन लिया गया कि किसान व्यापरियों को गल्ला अपने खेतों से निश्चित नकद मूल्य पर देंगे और उसे अपने घर न ले जाएॅगें इसी प्रकार किसानों से लगान भी कठारेतापूर्वक वसूला जाएगा जिससे वे चोरबाजी या मुनाफखोरी नही कर सकेगें। सातवें अधिनियम के द्वारा यह व्यवस्था की गई गल्लामंडी की स्थिति की रिपोर्ट शहना, बरीद और मुनहियन या मुन्ही प्रतिदिन सुल्तान को भेजे इन अधिनियम का कडाई से पालन किया गया फलत अनाज निश्चित मूल्य पर और सुगमता से उपलब्ध हो गया। बरनी के अनुसार नगर में शायद ही कोई ऐसा मुहल्ला था। जहॉ अनाज आपातकालीन परिस्थिति में ही निकाला जा सकता था। जिसकें वितरण के लिए राशन व्यवस्था लागू की गई अकाल के समय प्रत्येक घर को आधा मन और सपन्न व्यक्तियों की उनकी आवश्यकतानुसार अनाज देने की व्यवस्था की गई। अन्य समय में लोग बाजार से अनाज खरीद सकते थे जो सदैव उपलब्ध रहता था।

3.7.2. सराय–ए–अदल

अलाउद्दीन द्वारा स्थपित दूसरा बाजार सरा–ए–अदल अथवा न्याय का स्थान था यहॉ बाहर से लाया गया तैयार सामान बिकता था। इस बाजार को सरकारी आर्थिक सहायता उपलब्ध थी। इस बाजार से बनाकर उसमें दुकाने बनाई। गई नगर में बाहर से आने वाली प्रत्येक वस्तु–कपड़ा शक्कर मेवे जड़ी–बूटिया दीपक जलाने का तेल एंव अन्य वस्तुए इसी बाजार में आनी थीं। इन व्यापारियों के

व्यक्तिगत धन से अथवा सरकारी सहायता से खरीदी गइ सभी वस्तुओं को यही लाना था किसी निजी मकान या बाजार में नहीं टंका से लेकर दस हजार टंका मूल्य तक का सामान सिर्फ यही बेचा जाना था। इस नियम का उल्लघन करने वाले व्यापारी दंड का भागी बनते थे बरनी इस बाजार में बिकने वाले वस्त्रों एवं अन्य सामानों की मूल्य सूची देता है। जो दूसरे अधिनियम के द्वारा निश्चित की गई थी रेशमी कपड़ा खूज्जे दिल्ली – 16 टंका शीरी बाफत उत्तम–5टंका शीरी बाफत मध्यमल टंका शीरी मोटा–2 टंका सिलहटी मोटा–2 टंका सूती कपड़ा–लाल धारियावाला बुर्द उत्तम –6 जीतल बुर्द मोटा–36 जीतल अस्तरे नागौरी–24 जीतल अस्तर मोटा–12 जीतल चादर–10 जीतल इनके अतिरिक्त एक टंका में कोई व्यक्ति 40 गज साधारण या 20 गज रूई किए गए वे इस प्रकार थे। जैसे मिश्री प्रति सेर $2\frac{1}{2}$जीतल चीनी 1 जीतल 5 सेर नमक किए गए वे इस प्रकार तीसरे अधिनियम के अनुसार दिल्ली के सभी व्यापारी को वाणिज्य मंत्रालय या दीवान ए रियासत में पजीकृत कराने का आदेश दिया गया। उन्हें प्रतिव्यापारी 20 लाख टंके की अग्रिम राशि दी गई जिससे कि वे साम्राज्य के विभिन्न भागों से समान खरीद कर दिल्ली लाकर बेचे। इस प्रकार मुल्तानी व्यापारी शासकीय एजेन्ट के रूप मं व्यापार करने लग। पॉचवे अधिनियम के अनुसार परवाना नवीस परमीट देनेवाला अधिकारी नियुक्त किया गया।इसके अनुसार के बहुमूल्य वस्त्र संपन्न व्यक्तियों को तब तक नही दे दे। इस व्यवस्था का उद्देश्य कालाबाजारी को रोकना था जिससे कि कोई व्यक्ति सस्ते मूल्य पर दिल्ली में वस्त्र खरीद कर उसे बाहर महॅगे मूल्य पर न बेच सके। वस्त्रों के मूल्यों की सूची देखकर यह स्पष्ट हो जाता है कि कपड़े अनाज की तुलना में महॅगे थे इस बाजार में मुलतानी अधिकारी नियुक्त किए गए।

3.7.3. घोड़ो दासों और मवेषियों के बाजार

इन तीनो बाजारों के लिए चार सामान्य अधिनियम बनाए गए थे। इनके अनुसार वस्तु के किस्म के अनुसार उसका मूल्य निश्चित किया गया। व्यापारियों और पूॅजीपतियों का बहिष्कार किया गया , बिचौलियों पर कड़ी निगरानी रखी गई तथा सुलतान सभी अधिनियमों के पालन पर स्वयं नियंत्रण रखता था। सेना में खरीदे जाने वाले घोड़ो को तीन श्रेणियों में विभक्त किया गया। इसके लिए घोड़ो के दलालों की सहायता ली गई। जिन घोड़ो का मूल्य 100.120 टंके था। उसे प्रथम श्रेणी में 80–90 टंके वाले द्वितीय श्रेणी और 60–70 टंके वाले घोड़ो को तृतीय श्रेणी में रखा गया सेना के लिए अनुपयुक्त टटुओं का मूल्य 10–20 टंके निधरित किया गया। घोड़ो के दलालों को कठोर दंड दिए गए जिससे कि वे घोड़ो के व्यापारियों के साथ मिलकर धोखाधड़ी न कर सकें। व्यापारियों को निश्चित मूल्य पर ही घोड़े बेचे जाऍ। आदेश का उल्लंघन करने वाले को कठोर दंड दिए गए। घोंड़ों के ही समान दासों और मूल्य 5–12 टके इत्यादि उत्तम नस्ल के भारवाहक मवेशी की कीमत 4–5 टंके दुधारू भैसं 10–12 टंका,दुधारू गाय 3–4 टंका, मोटी बकरी या भेड़ 10–14 जीतल मूल्य निर्धारित किया गया। इन बाजारें में जो भी गुप्तचार बहाल किए गऐ जो राजकीय अधिनियमों का कड़ाई से पालन करवाते थे।

3.7.4. सामान्य बाजार

दीवान–ए–रियासत अथवा वाणिज्य मंत्रालय के नियंत्रण में सामान्य बाजार भी स्थापित किए गए। ये बाजार पूरे नगर में थें। इन बाजारों में बिकने वाली सामान्य वस्तुऍ जैस, मिठाईयॉ, सब्जियॉ, रोटिया, कंघी, चप्पल, जूता, बर्तन सुपारी, पान, रंग, मिटटी के बर्तन जैसे, इत्यादि के मूल्य भी निश्चित किए गए। मूल्य निर्धारण

उत्पादन लागत के आधार पर हुआ। मूल्यों पर नियंत्रण रखने और उनका उल्लंघन करने वालों को दंड देने के लिए वाणिज्य मंत्री याकूब नजीर को विस्तृत अधिकार दिए गए। याकूब की कड़ाई से मूल्य–वृद्धि और बेईमानी पर रोक लग गई। इसके बावजूद जो व्यापारी बेईमानी करते थें उनका पता लगा कर उन्हें कठोर दंड दिया जाता था। यहॉ तक कि कम तौलने वालों के शरीर से कम तौल के दुगुने भार का मांस वाणिज्य मंत्री कटवा लेता था। इन कठोर कार्रवाइयों से मूल्य निश्चित हो गए और बेईमानी समाप्त हो गई।

नियंत्रण इस बात को लेकर महत्वपूर्ण नहीं है कि इससे वस्तुए सस्ती हो गई बल्कि इस बात से है कि बाजार में वस्तुओं की कीमते निश्चित हो गई। यद्यापि अलाउद्दीन की आर्थिक व्यवस्था से सबसे अधिक लाभान्वित सैनिक–वर्ग ही हुआ। प्रो0के0एस0 लाल के शब्दों में ,अलाउद्दीन ने साधारण जनता की आवश्यकता से ऊपर सैनिक आवश्यकताओं को रखा तथा ऐसी सुंसगठित सेना रखी , जिसने देश तथा विदेश में सदैव अपने शत्रुओं को पराजित किया।मानते है कि अपने सुधारों द्वारा किसान शिल्पकार अथवा व्यापारी लाभ नहीं उठा सके और वे असंतुष्ट रहे। प्रो0 इरफान हबीब का भी मानना है कि इस योजना का लाभ वास्तव में सामंत और सैनिक ही उठा सकें , मूल्य में कमी और मजदूरी की दर में कमी का असर समाज के छोटे तबके पर पड़ा। जिनकी क्रय शाक्ति अधिक थी अथवा जिनके पास संचित धन था वे ही अलाउद्दीन की योजनाओं से लाभन्वित हो सके। अलाउद्दीन के बाद व्यापारियों का विरोध उभर कर सामने आया। इसके बावजूद यह तथ्य तो स्वीकार करना ही पड़ेगा कि मूल्य–नियंत्रण की नीति अलाउद्दीन की एक विशिष्ट उपलब्धि थी।

3.7.5. सामाजिक सुधार

अलाउद्दीन ने अपने समय में प्रचलित अनेक सामाजिक कुरीतियों को भी दूर करने का प्रयास किया। यद्यपि उलेमा का राजनीतिक प्रभाव सुल्तान ने समाप्त कर दिया,तथापि उनकों संतुष्ट करने के लिए उसने अनेक सामजिक एवं नैतिक नियम निश्चित किए। शराब पीने और जूआ खेलने पर प्रतिबध लग गया। इससे कट्टर मुसलमान सुल्तान के समर्थक बन गए। व्यभिचार एवं वेश्यावृत्ति पर अंकुश लगा दिया गया। जादू–टोने , तंत्र–मंत्र एवं ठगी को भी कम करने का सुल्तान ने प्रयास किया। इससे सामाजिक जीवन अधिक स्वतन्त्र हो गया। अलाउद्दीन एक वीर एवं महत्वकांक्षी शासक था। वह समस्त भारत पर अपनी सत्ता स्थापित करना चाहता था। वस्तुतः वह सिंकन्दर के समान विश्वविजेता बनना चाहता था। उसने सुलतान बनने क पूर्व भी अनेक युद्ध किए थे उसके राज्यारोहण के समय उत्तरी और दक्षिणी भारत में अनके स्वतंत्र राज्य थे इन राज्यों पर विजय प्राप्त करना उसकी सबसे बड़ी महत्वाकांक्षा थी परंन्तु उसने इसके लिए सिर्फ सैनिक शक्ति का ही सहारा नहीं लिया। उसने अपने शत्रुओं को मित्र बनाने और उन्हे अपने राज्य में मिलाए बिना उनसें अपनी अधीनता स्वीकार करवाने की नीति का भी पालन किया। दक्षिण में उसने इसी नीति को अपनाया।

3.8. अलाउद्दीन का सैनिक अभियान

अपना विजय अभियान आरंम्भ करने के पूर्व सुलतान ने पश्चिमोत्तर सीमा का सुरक्षा की व्यवस्था की इसलिए सुलतान ने सर्वप्रथम सीमा की सुरक्षा की व्यवस्था करवाया गया। महत्वपूर्ण जगहों पर सैनिक छावनियॉ स्थापित की गई। सेना की संख्या बढा दी गई एवं सैनिकों को उन्नत प्रकार के अस्त्र–शस्त्र दिए

गए। यातायात की व्यवस्था की गई एवं मंगोलों की गतिविधियों पर निगरानी रखने के लिए गुप्तचर भी बहाल किए गए। सीमावर्ती क्षेत्रों का प्रशासन योग्य अनुभवी और विश्वासपात्र सैनिक अधिकारियों को सुपूर्द कर दिया।

3.8.1. मंगोलों से सम्बन्ध

अलाउद्दीन के राज्यकाल में मंगोलो ने अनेक बार आक्रमण किए, परंन्तु उन्हें सदैव पराजित होकर पीछे हटना पड़ा 1296–97 ई में कादर खॉ ने उन्हें पीछे ढकेल दिया। को आक्रमण सबसे भंयकर था पंजाब पार कर वह आंतक फैलाता हुआ तेजी से दिल्ली की तरफ बढ़ा। जफर खॉ ने कुतलुग ख्वाजा को भगाने पर मजबूर कर दिया, यद्यपि युद्ध में में स्वयं जफर खॉ को अपने प्राणों से हाथ धोना पड़ा। मंगोलो ने पुन 1303–4, 1305, 1306–7 और 1308 ई मे सीमा पर आक्रमण किया। तार्गी तो दिल्ली के निकट तक पहुँच गया था। परंन्तु अलाउद्दीन ने अपने योग्य सेनानायकों की सहायता से मंगोलो को सदैव पराजित हए तथापि उनके आक्रमणों ने साम्राज्य पर बुरा प्रभाव डाला।

3.8.2. राजपूतों से संबंध

अलाउद्दीन क समक्ष सबसे बड़ी चुनौती थी राजपूत–राज्यों पर विजय प्राप्त करने की। राजपूताना में अनेक स्वतंत्र राज्य थे, जो आपसी प्रतिस्पर्धा में संलग्न होने के बावजूद दिल्ली के सुल्तान को खुली चुनौती दे रहे थे वे अब भी तुर्कों को विदेशी मानते थे और उन से भारत को स्वतंत्र कराने का स्वपन्न देख रहे थे केंद्रीय शक्ति के कमजोर पड़ते ही वे अपनी गतिविधियों तीव्र कर देते थे। इसलिए अलाउद्दीन ने इन राज्यों पर नियंत्रण स्थपित करने की योजना बनाई परंन्तु राजपूतों के प्रति वह कोई निश्चित नीति निर्धारित नहीं कर सका।

3.8.3. गुजरात की विजय

गुजरात एक शक्तिशाली और समृद्ध राज्य था। वहॉ बघेला–राजपूतों का शासन था। 1297 ई में अलाउद्दीन ने अपने योग्य सेंनापतियों उलूग खॉ एवं नुसरत खॉ की अधीनता में एक सेना भेजी, जिसने राजधनी अंहिलवाड़ का घेरा डाल दिया गया, परन्तुं उसकी रानी कमला देवी गिरफ्तार कर दिल्ली भेज दी गई,जहॉ सुल्तान ने उससे विवाह कर लिया। खिलजी सेना ने राजधानी को जी–भरकर लूटा सोमनाथ के मंदिर सहित गुजरात में अन्य भागों पर भी खिलजी सेना ने आक्रमण किया एवं लूट–मार मचाई। गुजरात सल्तनत का एक प्रांत बना दिया गया।

3.8.4. रणथंभौर पर अधिकार

1299 ई0 में जैसलमेर पर अधिकार करने के पश्चात वह पहले तुर्की सुलतानों ने अपना आधिपत्य स्थपित किया था। परन्तु पुनः राजपूतों ने अपनी स्वतत्रं सता कायम करली अत अलाउद्दीन इसपर अधिकर करना चाहता था। इस उद्देश्य से उसने 1301 ई में गुजरात के विजयी सेनानायको उलूग खॉ एवं नुसरत खॉ को रणथंभौर पर आक्रमण करने को भेजा। खिलजी सेना झाईन पर अधिकार करती हुई रणथम्भोर के दुर्ग तक जा पहॅची राजा हम्मीरदेव ने आक्रमणकारियों का वीरता से मुकाबला किया एवं उन्हें घेरा उठाने को बाध्य किया इसी दौरान नुसरत खॉ की युद्ध मे मृत्यु हो गई उलूग खॉ भी दुर्ग का घेरा डाल रहने के बावजूद सुल्तान इस

पर अधिकार नहीं कर सका। तब उसने राजा हम्मीरदंव के मंत्री रणमल को अपने पक्ष में मिलाकर दुर्ग पर अधिकार कर लिया। राजा सहित अनेक राजपूतों ने यद्ध में वीरगति प्राप्त की। स्त्रियों ने जौहर–व्रत द्वारा अपने सम्मान की रक्षा की। रणथंभोर पर अधिकर कर सुल्तान ने उलूग खॉ को वहॉ का शासक बहाल किया।

3.8.5. मेवाड़ पर आक्रमण

मेवाड़ में गुहिलौत–राजपूतों का शासन था। राजपूताना के राज्यों में मेवाड़ की विशिष्ट स्थिति थी। उसकी राजधानी चितौड एक पहाड़ी पर स्थित थी जिसपर अधिकार करना सुगम नही था अलाउद्दीन द्वारा चित्तौड़ पर आक्रमण करने के कई कारण बताए जाते हैं कहा जाता है कि अलाउद्दीन मेवाड के राणा रतनसिंह की अनुपम संदुरी पद्मनी को प्राप्त करना चाहता था एवं इसी उददेश्य से उसने चित्तौड पर आक्रमण किया अनेक इतिहासकार इसे कपोल कल्पना मात्र मानते है। संभवतः अलाउद्दीन ने मेवाड़ पर इसलिए आक्रमण किया क्योकि इस पर अभी तक किसी ने आक्रमण करने का साहस नही किया था और अलाउद्दीन ने चित्तौड पर आक्रमण कर अपना अधिकार नही कर सका। 1311 ई0 में खिज्र खॉ को राजपूतों के विरोध के कारण चित्तौड़ छोड़ना पड़ा और मालदेव नामक राजपूत–सरदार को अलाउद्दीन ने वहॉ अपना प्रतिनिधि शासक बहोल किया।

3.8.6. मालवा एवं अन्य राज्यें की विजय

राजपूताना के पश्चात अलाउद्दीन ने मालवा पर आक्रमण किया। 1310 ई0 में सुल्तान ने मालवा पर अधिकार कर लिया। इसी समय मांडू उज्जैन धार एवं चंदेरी पर भी सुलतान की सेना ने विजय प्राप्त की अलाउद्दीन ने 1308 ई0 में मारवाड़ के परमार–राजा शीतलदेव को भी परजित होकर सुल्तान की सार्वभौमता स्वीकार करवाई। जालौर के राजा कनेरेदेव ने भी पराजित होकर सुलतान की सार्वभौमता स्वीकार कर ली इन विजयों के परिणामस्वरूप समस्त उत्तरी भारत पर कश्मीर असम और उत्तर–पश्चिमी पंजाब के कुछ हिस्सों छोड़कर अलाउद्दीन का अधिपत्य स्थापित हो गया। सल्तनत की सीमा इतनी अधिक विस्तृत पहले कभी नहीं थी।

3.9. अलाउद्दीन खलजी की दक्षिण की विजयें

दक्षिण भारत की विजय–उत्तरी भारत विजित करने के बाद अलाउद्दीन ने दक्षिण भारत को जीतने के लिए अपने योग्य और वीर सेनापति मलिक काफूर को एक विशाल सेना के साथ दक्षिण भेजा मलिक काफूर को एक विशाल सेना के साथ दक्षिण भेजा उसके निम्मलिखित दक्षिण अभियान रहे।

3.9.1 देवगिरी

1306 ई0. में मलिक काफूर ने देवगिरी पर आक्रमण किया। आक्रमण का प्रमुख कारण वहॉ के शासक रामचन्द्र का सुल्तान को कर देने के वादा करने के बाद भी कर न देना था इसके अतिरिक्त गुजरात के शासक राजा कर्ण व उसकी पुत्री देवल देवी को उसने शरण दे रखी थी। इस अभियान में रामचन्द्र ने बिना लड़े ही अपनी हार स्वीकार कर ली तथा हीरें आदि उपहारों के साथ वह दिल्ली गया ,जहॉ सुल्तान अलाउद्दीन ने उसका स्वागत किया और राय–रायन की उपाधि से नवाजा इसी अभियान में कर्ण की पुत्री देवल देवी को भी पकड़ लिया गया था उसका विवाह अलाउद्दीन ने अपने पुत्र खिज्र खाँ से कर दिया।

3.9.2. वारंगल

1309 ई में देवगिरि के बाद मलिक काफूर ने तेलंगाना पर आक्रमण किया। वहॉ के शासक प्रताप रूददेव ने थोड़े प्रतिरोध के बाद आत्मसमर्पण कर दिया। इस अभियान में मलिक कॉफूर को अतुल धन–सम्पति हाथ लगी जिसे लेकर वह दिल्ली लौट गया।

3.9.3. द्वार समुद्र

13010 ई में मलिक काफूर ने देवगिरी व वारंगल की सहायता से इस राज्य पर आक्रमण किया यहॉ के शासक वीर बल्लाल तृतीय ने वीरतापूर्वक मुकाबला किया किन्तु परजित हो गया। उसने मुसलामानों की अधीनता स्वीकार कर अपनी सारी सम्पत्ति मलिक कफूर को समर्पित कर दी तथा वार्षिक कर देने का वायदा किया।

3.9.4. मावर

1311 ई में द्वार समुद्र की विजय के बाद मलिक काफूर ने माबर के पाण्डय राज्य पर आक्रमण किया। इस समय वीर पाण्ड्य एवं सुन्दर पाण्ड्य के मध्य गद्दी के लिए संघर्ष चल रहा था फिर भी उन्होनें शत्रुओं से डटकर लोहा लिया और अन्त में वीर पाण्डय वनों में भाग जाना पड़ा मलिक काफूर ने अब इस प्रदेश पर मनमाने ढंग से अत्याचार किए तथा राजधानी मदुरा को जी भरकर लूटा इस आक्रमण में मलिक काफूर को अतः लिए धन–सम्पत्ति हाथ लगी और वह दिल्ली लौट गया। इस प्रकार स्पष्ट है कि 1306 से लेकर 1312 ई तक अलाउद्दीन ने समस्त दक्षिण भारत को जीत लिया तथा बहुत धन–सम्पति को प्राप्त किया तथा दक्षिण के राज्य आपसी कलह के कारण अपनी स्वतन्त्रता खो बैठे

3.10 <u>बोध प्रश्न–</u>

1. फिरोज खिलजी को अमीर खुसरों ने एक भाग्यशाली व्यक्ति है।
2. प्रताप रूद्रदेव ने मलिक काफूर का कोहनूर हीरा दिया।
3. अलाउद्दीन के समय कर 1/4भाग लिया जाता था।

प्रश्न– अलाउद्दीन की बाजार व्यवस्था पर 250 शब्द लिखिए।

....
....
....
....
....
....

3.11. सारांश

उपर्युक्त विजयों के फलस्वरूप अलाउद्दीन खिलजी के साम्राज्य की सीमा अत्याधिक विस्तृत हो गयी। अलाउद्दीन ने पूरे समाज को एक राजनीतिक सूत्र में बाध दिया। इस के साथ–साथ मलिक काफूर ने दक्षिण की शक्तियों एवं उनकी व्यवस्थाओं पर कुठाराघात किया, जिससे दक्षिण में इस्लाम धर्म का प्रभाव बड़ा और

मुस्लिम सम्यता–संस्कृत का विस्तार हुआ।दक्षिण से पर्याप्त मात्रा में धन दिल्ली लाया जिससे सल्तनत की समृद्धि बढ़ी।

3.12. शब्दावली

परवाना नवीस–परमिट देने वाला

मिल्क–कीमती वस्तुओं के

आरिजे–ममालिक–युद्ध मंत्री

खुती प्रथा–जमीदारी प्रथा

मुकदमों –मुखियाँ

सराय–ए–अदल–न्याय का स्थान

3.13. बोध प्रश्न के उत्तर

1.	(1). सही	(2). सही	(3). गलत
2.	(1). सही	(2). सही	(3). गलत

इकाई 4

तुगलक वंश के शासक एवं नीतियॉ

इकाई की रूपरेखा

4.0. उद्देश्य

4.1. प्रस्तावना

4.2. ग्यासुद्दीन तुगलक

- **4.2.1.** ग्यासुद्दीन की गृहनीति
- **4.2.2.** तुर्की अमीरों पर नियन्त्रण
- **4.2.3.** प्रशासनिक सुधार
- **4.2.4.** सैनिक नीति
- **4.2.5.** यातायात एवं डाक व्यवस्था में सुधार
- **4.2.6.** वार्षिक नीति
- **4.2.7.** आर्थिक नीति
- **4.2.8.** सैनिक अभियान
- **4.2.9.** तेलंगाना पर अधिकार
- **4.2.10.** जाजनगर पर आक्रमण
- **4.2.11.** गुजरात में विद्रोह का दमन
- **4.2.12.** बंगाल की विजय
- **4.2.13.** तिरहत पर अधिकार
- **4.2.14.** मंगोल आक्रमण

4.3. मुहम्मद–बिन–तुगलक

4.4. मुहम्मद–बिन–तुगलक की गृह नीति

4.5. मुहम्मद–बिन–तुगलक की प्रमुख योजनाएॅं

- **4.5.1.** राजस्व नीति–दो आब में कर वृद्धि
- **4.5.2.** राजधानी परिवर्तन
- **4.5.3.** सांकेतिक मुद्रा का प्रचलन
- **4.5.4.** अकाल एवं राहत कार्य
- **4.5.5.** कृषि के विस्तार की योजना

4.6 मुहम्मद–बिन–तुगलक की विदेश नीति

- **4.6.1.** मंगोल आक्रमण का सामना
- **4.6.2.** नगरकोट एवं अन्य स्थानों की विजय
- **4.6.3.** विदेशों से सम्बन्ध
- **4.6.4.** खुरासन विजय योजना
- **4.6.5.** कराचिल विजय योजना

4.7. प्रमुख विद्रोह

- **4.7.1.** विद्रोह के कारण
- **4.7.2.** बहाउद्दीन गुरशास्प
- **4.7.3.** बहराम आएवा
- **4.7.4.** ग्यासुद्दीन बहादून
- **4.7.5.** बंगाल में शान्ति
- **4.7.6.** सिंन्ध में अराजकता
- **4.7.7.** माबर
- **4.7.8.** काम्पिल
- **4.7.9.** वारंगल
- **4.7.10.** मालवा
- **4.7.11.** देवगिरी
- **4.7.12.** गुजरात

4.8. फिरोजशाह तुगलक

- **4.8.1.** फिरोज का प्रशासनिक सुधार–
- **4.8.2.** अमीरों एवं उलेमा के प्रति उदारता की नीति
- **4.8.3.** धार्मिक नीति
- **4.8.4.** राजस्व व्यवस्था एवं आर्थिक सुधार
- **4.8.5.** न्याय व्यवस्था
- **4.8.6.** सैन्य व्यवस्था
- **4.8.7.** जनकल्याण या परोपकार के कापी
- **4.8.8.** फिरोज के निर्माण कार्य
- **4.8.9.** शिक्षा व्यवस्था
- **4.8.10.** विदेशी नीति

4.8.11. बंगाल पर अक्रमण

4.8.12. जाज नगर अभियान

4.8.13. नगर कोट पर आक्रमण

4.8.14. सिंध पर आक्रमण

4.8.15. आतंरिक विद्रोहो का दमन

4.9. तुगलक शाह द्वितीय

4.10. अबू बक्र

4.11. मुहम्मद शाओं हुमायूँ

4.12. महमूद शाह

4.13. सारांश

4.14. शब्दावली

4.15. बोध प्रश्न के उत्तर

4.0 उद्देश्य

- ❖ इस इकाई के माध्यम से खिलजियों के बाद नये राजवशं के उदय बारे जानकारी प्राप्त होती है।
- ❖ इस इकाई के द्वारा सभी शासकों ने समाज के सभी समाज को प्रगति ओर ले जाने का प्रयास करते है।
- ❖ इस इकाई में साम्राज्य अपनी समृद्धि की ओर अग्रसर होता है।

4.1 प्रस्तावना

खिलजियों के बाद दिल्ली सल्तनत के स्वामी तुगलक शासक बने यह राजवंश सबसे अधिक समय तक शासन किये इस वंश के प्रमुख शासक गयासुद्दीन तुगलक,मुहम्मद तुगलक और फिरोज तुगलक थे। तुगलकों ने जहॉ एक तरफ सैनिक विजयों द्वारा साम्राज्य की सीमा का विस्तार किया वही प्रशासनिक सुधारों पर भी ध्यान दिया। उसके समय में सल्तनत की शक्ति एंव समृद्धि में वृद्धि हुई परन्तु इसके साथ ही सल्तनत के विघटन की प्रक्रिया भी आरम्भ हो गयी। तुगलक वंश का संस्थापक गाजी मलिक था गाजी गया सुद्दीन तुगलक 'करौना' तुर्क–शाखा का था। तुगलक उसकी उपाधि थी।

4.2 ग्यासुद्दीन तुगलक 1320–1325

ग्यासुद्दीन तुगलक के पूर्वज तुर्किस्तान से भारत आये थे उसके पिता का नाम मलिक तुगलक था। वह करौना तुर्क थे। तुगलक इनकी उपाधि थी। इस लिए उसके वशंज तुगलक के नाम से विख्यात हुए। उसकी माता एक जार स्त्री थी। उसकी बचपन का नाम गाजी मलिक या गाजी तुगलक था। उसने अपना जीवन

एक साधारण सैनिक के रूप में आरम्भ किया। 1305 ई0 में वह पंजाब का सुबेदार नियुक्त हुआ।जिसकी राजधानी दिपालपुर थी। उसे मंगोलो के आक्रमण के विरूद्ध उत्तर पश्चिमी सीमाओं की रक्षा का भार सौपा गया। वैसा कहा जाता है कि उसने आक्रमणकारियो से टक्कर ली तब कही जाकर उन्हे पराजित किया जिससे उसे मलिक–उल–गाजी के नाम से जाना जाता है। अलाउद्दीन के शासन काल के अन्तिम दिनों में उसकी गणना राज्य के गिने चुने शक्तिशाालीी अमीरों में होने लगी। खुसरों इस बीच स्वयं मुबारक शाह की हत्या कर गद्दी पर बैठ चुका था। 1320 ई0 परन्तु खुसरवशाह को दिल्ली के अमीरों का समर्थन प्राप्ति नही हो सका। तुर्क खुसरो को गददी से हटाने के लिए षड़यन्त्र रच रहे थे। गाजी मलिक एंव उसके पुत्र जूना खॉ ने भी इस परिस्थिति का लाभ उठाकर गददी हथियाने की योजना बनायी जूना खॉ के दिल्ली से भाग जाने की खबर खुसरवशाह को खतरे का आभास हो गया। अतः उसने एक सेना की टुकडी गाजी मलिक के विरूद्ध भेजी। इधर गाजी मलिक भी दिल्ली पर आक्रमण करने आ रहा था। इद्रप्रस्थ के निकट गाजी मलिक से युद्ध करता हुआ खुसरवशाह मारा गया। विजयी गाजी मलिक दिल्ली में प्रवेश कर सितंम्बर 1320 ई0 में सल्तनत पर अधिकार कर लिया। वहॉ के अमीरों की आम सहमति के बाद गयासुद्दीन तुगलक शाह गाजी की उपाधि धारण की।

4.2.1. ग्यासुद्दीन की गृहनीति

ग्यासुद्दीन ने जो पहला कार्य किया वह था अपनी आन्तरिक ने प्रशासनिक व्यवस्था को ठीक करना था।

4.2.2. तुर्की अमीरों पर नियन्त्रण

सुल्तान ने अपने पद की रक्षा के लिए सर्वप्रथम तुर्की अमीरों से निपटना आरम्भ किया। उसने अपने समर्थकों एवं संबंधियों को महत्वपूर्ण पद प्रदान किये गये। जूना खॉ को उलुग खॉ की उपाधि मिली और उसे युवराज बनाया गया। वह राम एंव किशलू खॉ को पश्चिमोन्तर प्रान्त का सुबेदार बनाया गया। अन्य योग्य व्यक्तियों को प्रशासनिक पद सौपे गए। अनेक लोगों की जब्त जागीरें वापस कर दी गयी। इसके साथ ही साथ सुल्तान ने कुछ लोगों के प्रति सुल्तान ने सख्ती भी की। जिन्हे खुसरव ने अपने पक्ष में मिलाने के लिए धन दिया था,उनने जबरदास्ती धन वापस ले लिया गया। इस मामले में दिल्ली के प्रसिद्ध सूफी संत निजामुद्दीन औलिया को भी नहीं बख्श गया। जिन लोगों खिलजी–वशं की स्त्रियों को अपमानित किया था,उन्हें कठोर दंड दिए गए। कुॅवारी खिलजी–कन्याओं के विवाह की व्यवस्था राज्य की तरफ से की गई। असहाय एंव निर्बल लोगों के जवीन यापन की भी व्यवस्था की गयी। अपने इन कार्यो द्वारा गया सुद्दीन ने सुल्तान की खोई प्रतिष्ठा एवं उसका सम्मान पुन स्थापित किया।

4.2.3. प्रशासनिक सुधार

सर्वप्रथम उसने प्रचलित कानूनों का संग्रह करवाया एंव उन्हीं कानूनों के अनुरूप अपना सर्वप्रथम उसने प्रचलित कानूनों इस्लाम धर्म की मान्यताओं और सिद्धान्तों पर आधरित थे। दरबार मे विलासिता का स्थान भव्यता ने ले लिया। सुल्तान ने कानून–व्यवस्था की भी स्थापना की लगान–वसूली में बरती जाने वाली अमुानुषिकता बद कर दी गई परन्तु अपराधियों को राजकीय धन का गवन करने वाले कठोर दंड दिए गए।

4.2.4. सैनिक सुधार

सेना को आर्थिक दृष्टि से संतुष्ट रखने के लिए सुलतान ने उनके वेतन मे वृद्धि की सैनिको की सुख–सुविधा पर ध्यान दिया गया। इस बात की व्यवस्था की गई कि सेना को उचित समय पर वेतन मिल जाए और अक्तादारों को आदेश दिया गया कि सैनिकों के वेतन एवं भतों का दुरूपयोग न करें। सेना के लिए उत्तम किस्म के हथियारों की व्यवस्था बनायी गयी। घोड़ो को दागने एवं चेहरा प्रथा को प्रभाव शाली ढंग से लागू किया गया। जिसके आधार पर गयासुद्रदीन दो वर्ष के अन्दर ही दक्षिण अभियान के लिए कुच कर दिया।

4.2.5. यातायात एवं डाक व्यवस्था में सुधार

सेना को सुविधा के लिए यातायात के साधनों में सुधार किये गये। पुरानी सड़कों पुलों नहरों की मरम्मत करवाई गई तथा नई सड़के बनवाई गई दुर्गो का निर्माण कर उनमें उनमें सेना रखी गयी। जगह–जगह पर डाक चौकिया बनवायी गयी। हरकारे एवं अश्वारोही रखें गयें। डाक व्यवस्था को सुगम बनाया गया। कहा जाता था कि केवल 4 दिन में ही देवगिरी से दिल्ली समाचारों का आदान प्रदान हो जाता था।

4.2.6. धार्मिक नीति

सुलतान स्वम सुन्नी मतावलंवी था वह सदैव कुरान के नियमों के अनुसार अपना जीवन व्यतीत करने का प्रयास करता था। नाच–गाना नृत्यगीत सुरासुन्दरी से उसने अपने की अलग रखा। वह अपनी प्रजा से अनुशासित एंव संयत जीवन की अपेक्षा करता था। हिन्दुओं के प्रति उसने संतुलित एवं व्याहारिक नीति का पालन किया और न तो धर्म परिवर्तन के लिए बाध्य किया गया और न ही अकारण हत्या की गयी और न ही उनके मंदिरो को नष्ट किया गया दीन–दुखियों की सहायता एवं विद्वानों को प्रश्रय दिया गया। गयासुद्दीन की इन उदार नीतियों का बहुत अच्छा प्रभाव पड़ा।

4.2.7. आर्थिक नीति–

गयासुद्दीन नें प्रचलित अर्थव्यवस्था में भी परिवर्तन किए। इसका मुख्य उद्देश्य रिक्त राजकोष को समृद्ध करना एवं अर्थ व्यवस्था को सुचारू करना था। ऐसी स्थिति बनाना चाहता था। जिससे कि किसान अधिक उत्पादन कर सकें। लगान वसूलने वाले पुराने कर्मचारियों जैसे खुत एवं मुकद्मों को वहाल किया गया तथा इस कार्य के लिए उचित कमीशन निश्चित किया गया, ओर साथ ही यह निर्देश दिया गया कि निश्चित सीमा से अधिक लगान वसूल न करें। किसानों से 1/2 या 1/3 भाग लगान वसूला जाता था। और यह भी आदेश दिया गया कि एक वर्ष के अन्दर 1/10 या 1/11 से अधिक मात्रा में लगान की वृद्धि नहीं की जाय लगान निश्चित करने की नस्क एवं बटाई की पुरानी व्यवस्था अपनायी गयी। मध्यवर्ती जमीदारों की पुरानी स्थिति बना दी गई उनके वित्त एंव चारागाह कर मुक्त कर दियें गये। इसके पीछे का उद्देश्य यह था कि प्रधान या मुखिया (हिन्दू)ऐसी स्थिति में रखा जाए कि वह शासन का अधिकार न भूले और धन की प्रचुरता से विद्रोही या ठीठ न बने। गयासुद्दीन की नीतियों के परिणाम स्वरूप उत्पादक वर्ग के हितों की रक्षा की गई उन्हें अत्याचारों से बचाए गया तथा अधिक उपज होने वाले लाभ में हिस्सेदारी की गारंटी दी गयी इस आर्थिक सुधारों से जिनमें संयम,सख्ती ओर नर्मी का संतुलन कायम किया गया था।

4.2.8. ग्यासुद्द्दीन के सैनिक अभियान

शासक बनने से पूर्व ही ग्यासुद्दीन अनेक अभियानों का नेतृत्व कर चुका था। जिस समय वह गद्दी पर बैठा सल्तनत के कई राज्यों से अपनी स्वतन्त्रता का ऐलान कर दिया। फलत : सुल्तान ने पुन : उन राज्यों पर अधिकर किया तथा कुछ नये क्षेत्रों पर भी अधिकार किया।

4.2.9. तेलंगाना पर अधिकार

अलाउददीन की मृत्यु एवं दिल्ली की अव्यवस्था का काम उठाकर तेलगाना के शासक प्रताप रूद्रदेव ने उपनी स्वतन्त्रता की घोषणा कर दी। इसको दबाने के लिए 1321 ई० में जूना खॉ को एक सेना के साथ भेजा गया पर इसी मध्य यह सुचना मिली की गयासुददीन की मृत्यु हो गयी तथा जूना खॉ वापस चला गया, परन्तु 1323 ई० में पुनः एक नयी ऊर्जा के साथ वारंगल आ पहुचा और आक्रमण कर दिया जिसमे प्रताप रूद्रदेव गिरफ्तार हुआ और दिल्ली लाया गया, जहॉ उसकी मृत्यु हो गयी। वारंगल का नया नाम सुल्तानपुर पडा और दक्षिण में सल्तनत की नयी राजधानी बनी। अतः यह दिल्ली सल्तनत का भाग बन गया।

4.2.10. जाजनगर पर आक्रमण

गयासुद्दीन का दूसरा आक्रमण उड़ीसा में स्थित जाजनगर पर हुआ। वहॉ के राजा भानुदेव द्वितीय ने वारंगल के राजा की सहायता की थी अतः जूना खॉ ने वारंगल से वापस आते समया भानुदेव पर 1324 ई० में आक्रमण कर दिया। उलुग खॉ ने इस पर अपना अधिकार स्थापित किया। तथा लूट में मिले धन के साथ वह दिल्ली लौट आया।

4.2.11. गुजरात में विद्रोह का दमन

गयासुद्दीन के वाद गुजरात की स्थिति अशांत थी। इसामी के अनुसार ''जिस समय जूना खॉ दक्षिण मे था उसी समय गुजरात में विद्रोह हो गया। सुल्तान ने दिल्ली से मलिक शाही को इस विद्रोह को दवाने के लिए भेजा, विद्रोह दबा दिया गया, पर मलिक शाही की हत्या हो गयी।

4.2.12. बंगाल की विजय

जिस समय गयासुद्दीन गद्दी पर बैठा उसी समय बंगाल में उत्तराधिकार का युद्ध चल रहा था। गददी के दावेदार नासिरूददीन व कुछ अमीर बंगाल के शासक गयासुददीन बहादुर के विरूद्ध सुलतान से सहायता की मांग की। सुल्तान भी उसी ताक में था। अतः उसने जूना खॉ को दिल्ली सौप कर 1323 ई० में तिरहुत के रास्ते लखनौती जा पहुचा और आसानी से लखनौती पर अधिकार कर लिया नासिरूददीन को सुल्तान के नियन्त्रण मे लखनौती की गद्दी पर बैठाया गया। उसने शाह की उपाधि धारण की तथा सिक्के पर सुल्तान का नाम खुदवाया। सतगॉव और सोनार गॉव को अमीर तातार खॉ के जिम्मे दे कर आधी सम्पदा के साथ सुल्तान दिल्ली वापस आ गया।

4.2.13. तिरहुत पर अधिकार

1324 ई० में लखनौती से वापस आते समय सुल्तान ने तिरहुत के कर्णटवंशी शासक हरिसिंह पर भी आक्रमण किया। हरिसिंह सुल्तान का मुकाबला

नही कर सका, और नेपाल चला गया। तिरहुत पर भी सुल्तान का अधिकार हो गया, तिरहुत पर अहमद खॉ हाकिम नियुक्त किया गया।

4.2.14.मंगोल आक्रमण

जिस समय जौना खॉ दक्षिण अभियान पर था। उसी समय पश्चिमी सीमा पर मंगोलों ने सिंधु नदी पर कर ली सुचना मिलते ही एक सेना मंगोलो के दमन के लिए भेजीं मंगोलो को पराजित कर दिया, अनेक मंगोल बंदी बनाए गए एवं उन्हे दण्ड दिया गया।

1325 ई० में तिरहुत को विजय के बाद वापस दिल्ली लौटते समय मार्ग (दिल्ली, तुगलकाबाद के निकट अफगानपुर) में ही सुल्तान की मृत्यु हो गयी। उसकी मृत्यु संदिग्ध अवस्था में हुई थी। कहा जाता है कि अपने पिता के स्वागत के लिए जौना खॉ ने अफगानपुर में लकड़ी का एक महल वनवाकर उसमें सुल्तान को ठहराया। इसी महल के गिर जाने से मार्च 1325 ई० में सुल्तान की मृत्यु हो गयी। इसकी मृत्यु के सम्बन्ध मे इतिहास कारो के सम्बन्ध में अलग–अलग मत है। बरनी के अनुसार '' बिजली गिरने' से मृत्यु हुई। अहमद सरहिंदी महल का गिरना दैवी प्रकोप मानते हैं। इब्नेवतूता एवं इसामी इसे जौना खॉ का षड़यंत्र मानते हैं। कुछ अन्य लोगों का मानना है कि शेख निजामुददीन औलिया के प्रभाव में आकर जूना खॉ ने अपने पिता की हत्या या षड़यंत्र रचा था।

4.2.15 बोध–प्रश्न–

1. गयासुद्दीन पुरानी सड़कों पुलों एवं नहरों की मरम्मत करवाई
2. गयासुद्दीन ने लगान वसूले की पुरानी परम्परा लागू।
3. गयासुद्दीन धार्मिक नीति नही अपना था।

प्रश्न– गयासुद्दीन के कार्यो का मूल्यांकन कीजिए 200 शब्द में।

....
....
....
....
....
....

4.3. मुहम्मद–बिन–तुगलक

ग्यासुद्दीन के देहावसान के उपरान्त उसका पुत्र जौना खॉ, मुहम्मद –बिन–तुगलक के नाम से 1325 ई० में सल्तनत की राजगद्दी पर आसीन हुआ। उसके सन्दर्भ में यह कहा जाता है कि वह दिल्ली सल्तनत का सबसे विलक्षण व्यक्तित्व वाला शासक था। वह अरवी, फारसी का महान विद्धान तथा ज्ञान विलास, खगोल शास्त्र, दर्शन, गणित, चिकित्सा–विज्ञान, तर्कशास्त्र आदि में पारंगत था। उसने रूढ़िवादी मुस्लिम उलेमाओ के राजनीतिक प्रभाव को नियंत्रित करने एवं राज्य की धर्म निरपेक्ष समस्याओं का धर्म निरपेक्ष ढंग से निदान करने का प्रयास किया। उसका मानना था, कि ''प्रतिभावान व्यक्तियों के लिए समान्तः पदो।के द्वार उव्युक्त है।''

4.4. मुहम्मद–बिन–तुगलक की गृह नीति

मुहम्मद तुगलक एक विवादास्पद शासक माना जाता है। इसीलिए, जहॉ उसने एक तरफ अपने सुधारों द्वारा राज्य की स्थिति को सुदृढ़ करना चाहा, वहीं उसने ऐसी योजनाएँ भी बनाई, जो सफल नहीं हो सकीं।

मुहम्मद तुगलक नवीन विचारों एवं प्रयोगों में गहरी दिलचस्पी रखता था। उसका राजनीतिक उद्देश्य राज्य को विघटनकारी तत्वों से बचाना, राजनीतिक एवं प्रशासनिक एकता स्थापित करना, सुल्तान की शक्ति में वृद्धि करना एवं प्रजा के कल्याण के लिए कार्य करना था। वह साम्राज्य विस्तार की भी आकांक्षा रखता था। वह उदार धार्मिक दृष्टिकोण का समर्थक था। वह उलेमा की कट्टरवादी नीति और सूफियों के विरक्तिवादी दृष्टिकोण से असहम था।

मुहम्मद ने प्रशासकीय पदों पर नियुक्ति करते समय व्यक्तिगत गुणों को प्रश्रय दिया जाति, जन्म या धर्म को नहीं। प्रशासन को सुदृढ़ एवं अधिकारियों को वफादार बनाने के लिए अनेक पुराने अमीरों एवं पदाधिकारियों को, बर्खास्त कर दिया गया। उनके स्थान पर निम्न वर्गीय व्यक्तियों एवं विदेशियों को भी राज्य की सेवा का अवसर दिया गया। सुलतान ने अपने चचेरे भाई मलिक फिरोज को नायब नामक बारबक एवं अपने शिक्षक कयामुद्दीन (कुतलुग खॉ) को वकील–ए–दर, और अफ्रीकी यात्री इब्नेबतूता को दिल्ली का काजी नियुक्त किया, वहीं अजरज खुम्मार, फिरोज हज्जाम, मनका बाबर्ची, लधा माली तथा मकबूल गायक जैसे साधारण लोगों को भी उच्च प्रशासनिक पद सौपे। इतिहासकार सरहिंदी के अनुसार सुल्तान के अमीर और अधिकारी अनेक वर्गो से आते थे।

अपनी स्थिति सुदृढ़ करने के लिए सुल्तान ने दूसरा कार्य यह किया कि उसने राजनीति से उलेमा–वर्ग के प्रभाव को दूर करने का प्रयास किया। उसने धार्मिक एवं न्यायिक मामलों से उलेमा का वर्चस्व समाप्त कर एक धर्मनिरपेक्ष राज्य की स्थापना की। उसके इस कार्य से उलेमा उसके कट्टर दुश्मन बन गए। तब उसने अब्बासी खलीफा का समर्थन प्राप्त कर अपनी सत्ता सुदृढ़ करने का प्रयास किया। 1340–41 ई० में उसने मिश्र के अब्बासी खलीफा के पास तुगलकों के शासन की वैधानिक मान्यता के लिए प्रार्थना की। उसने खलीफा के एक वंशज को दिल्ली में यथोचित सम्मान दिया। उसके इस कार्य से प्रसन्न होकर खलीफा ने उसे 1342 ई० में मानपत्र प्रदान किया। अव वह खलीफा के नाम पर शासन करने लगा सिक्कों एवं राजाज्ञा पर खलीफा का नाम रहने लगा परंतु इससे भी उलेमा–वर्ग का विरोध समाप्त नहीं हुआ।

हिंदुओं के प्रति उसने सम्मानजनक एवं उदार नीति अपनाई। उनपर किसी प्रकार के प्रतिवंध नहीं लगाए गए। प्रशासनिक पदों पर हिंदुओं की भी नियुक्ति की गई। उन्हें धर्म–परिवर्तन के लिए बाध्य नहीं किया गया। उनके मंदिरों को न तो नष्ट किया गया और न ही उन्हें लूटा गया। हिंदू विद्वानों एवं कवियों को भी संरक्षण प्रदान किया गया। वह हिंदुओं के धार्मिक समारोहों एवं उत्सवों में भी भाग लेता था। फुतुहस्सनातीन के अनुसार वह दिल्ली का पहला सुलतान था जो होली में भाग लेता था। उसके समय में योगी स्वतंत्रतापूर्वक भ्रमण करते थे। उसने शत्रुजन तथा गिरनार के मंदिरों की यात्रा की। उसने साधुओं के ठहरने के लिए धर्मशाला तथा गोशाला के निर्माण के लिए आदेश एवं अनुदान दिया। उसके दरबार में धार्मिक वाद–विवाद में गैर–मुस्लिम विद्वान भी भाग लेते थे। वह योगियों से व्यक्तिगत वाद–विवाद करता था। जैन विद्वान जिन प्रभा सूरी का अपने महल

में स्वागत किया तथा उसे एक हजार गाएँ प्रदान कीं। जैनविद्वान राजशेखर को भी उसने संरक्षण दिया। सुलतान की इस नीति से हिंदू एवं जैन भी सुलतान के समर्थक बन बैठे।

4.5. मुहम्मद–बिन–तुगलक की प्रमुख योजनाएँ

मुहम्मद विन तुगलक का उसकी 5 महत्वाकांक्षी योजनाओं के कारण विभिन्न प्रकार से एवं अनुचित ढंग से मूल्यांकन किया गया है। मुहम्मद विन तुगलक के इतिहास के हो 2 प्रमुख समकालीन स्त्रोत हैं प्रथम जियाउद्दीन बरनी एवं द्वितीय इब्नवतूता यह सल्तनत का काजी नियुक्त था यह सुल्तान के प्रति बहुत पूर्वाग्रही था, अतः उसने मुहम्मद विन तुगलक के सम्वन्ध में निष्पक्ष रूप से वर्णन नही किया है। मुहम्मद–विन–तुगलक की प्रमुख योजनाए–

4.5.1. राजस्व नीति–दोआब में कर की वृद्धि

अपनी आय में वृद्धि करने के उद्देश्य से दोआव में कर बढाना सुल्तान का सुधार था। डा० आशीर्वादी लाल का अभिमत है कि सम्भवतः उसका उददेश्य पॉच से दस प्रतिशत तक आय में वृद्धि करना था और इसके लिए भूमि पर कर नही वल्कि मकानों, चरागाहों, आदि पर अन्य कर बढाना चाहता था। बरनी के शब्दों में प्रजा को इन करो से अधिक कष्ट हुआ। रैय्यत की रीढ़ टूट गयी और अन्य महॅगा हो गया। वर्षा कम हुई और इसलिए चारों ओर दुर्भिक्ष फैल गया। हजारों व्यक्तियों का जीवन नष्ट हो गया। कठोर कर लगाने के साथ ही कर वसूलने के कठोर नियम बनाये गये।

दुर्भाग्यवश सुल्तान ने इस योजना को उस समय वापस लिया जब प्रजा का सर्वनाश हो चुका था और सुल्तान की असमय की उदारता से जनता कुछ काम नही उठा सकी। समकालीन इतिहास कारों में केवल बरनी ने ही इसका उल्लेख किया है परन्तु उसने किसी तिथि का संकेत नही किया है। तारीख–ए–मुवारकशाही के उल्लेख से इसकी तिथि 1328 ई० ठहरती है। फरिश्ता कहता है कि यह सुल्तान का प्रारम्भिक सुधार था जिसकी तिथि सन् 1327 ई० है। सर हेग ने बदायूँनी द्वारा निर्धारित सन को ही स्वीकार किया है और इस सुधार को क्रियान्वित करने का समय 1329–30 ई० वताया है।

4.5.2. राजधानी परिवर्तन

सुल्तान की सबसे विवादास्पद योजना राजधानी परिवर्तन दिल्ली से देवगिरि था। 1327 में राजधानी परिवर्तन से पूर्व देवगिरि को दौलतावाद नाम दिया गया। सल्तनत के केन्द्र में स्थित होने तथा दक्षिण के निकट होने के कारण दौलतावाद में राजधानी परिवर्तन किया गया। चूँकि दक्षिण प्रदेश नवविजित थे। अतः उस पर नियमित एवं गहन देखरेख की आवश्यकता थी। राजधानी परिवर्तन की योजना को सुनियोजित ढंग से क्रियान्वित किया गया। सर्वप्रथम नई राजधानी में शाही प्रतिष्ठान को तथा तदुपरान्त दिल्ली की जनता को विभिन्न चरणों में दौलतावाद ले जाया गया। जाने वाले लोगों को मार्ग में सारी सुविधाएँ प्रदान की गयी। यह मानना अनुचित है कि राजधानी परिवर्तन दिल्ली का सम्पूर्ण जनसंख्या का पूर्ण निष्क्रमण था और इसके कारण दिल्ली नगर पूरी तरह से वीरान नही हो गया परन्तु जिन लोगों को दौलतावाद ले जाया गया था, उन्हे नया वातावरण पसन्द नही आया। इस असन्तोष के कारण सुल्तान के विरूद्ध व्यापक रूप से

विरोध व्याप्त हो गया जिसके परिणमस्वरूप सुल्तान ने दौलतावाद से दिल्ली राजधानी पुनः स्थानान्तरित की।

4.5.3. सांकेतिक मुद्रा का प्रचलन

सुल्तान की दूसरी योजना सांकेतिक मुद्रा का प्रचलन था। इसका अर्थ था चॉदी के टका के स्थान पर कासे के टका का प्रचलन। कॉसे के टके का मूल्य चॉदी के टके के समतुल्य सांकेतिक मुद्रा था। विश्वव्यापी चॉदी की कमी के कारण सांकेतिक मुद्रा को प्रचलित करना पडा था। इब्नवतूता का यह कहना पूर्णतः अतर्कसंगत है कि सुल्तान को अपने खजाने के खाली हो जाने के कारण सांकेतिक मुद्रा का प्रचलन करना पडा था क्योकि जब सुल्तान ने सांकेतिक मुद्रा को वापस लिया तो उसने सांकेतिक सिक्कों के बदले लोगों को चॉदी के सिक्के प्रदान किये। इस योजना की विफलता का मुख्य कारण व्यापक स्तर पर जाली या नकली सिक्कों का प्रचलन था जिसके कारण व्यापार और वाणिज्य के क्षेत्र में पूर्ण अव्यवस्था व्याप्त हो गयी। परिणामस्वरूप सुल्तान को सांकेतिक मुद्रा वापस लेनी पड़ी और उसने सांकेतिक सिक्कों के बदले चॉदी के सिक्के प्रदान किए।

4.5.4. अकाल एवं राहत कार्य

सुल्तान मुहम्मद के समय में अनेक बार दुर्भिक्ष एवं महामारी का प्रकोप फैला। दोआब, दक्षिण भारत एवं गुजरात में अनेक बार सूख पड़ा। दिल्ली सहित देश के अनेक भागों में प्लेग या 'ब्लैक डेथ'' की महामारी भी फैल गई। दिल्ली में ही महामारी में इतने व्यक्ति मरे कि दिल्ली की हवा भी दूषित हो गई। इससे बचने के लिए सुलतान को दिल्ली छोड़कर 1337–40 ई० के मध्य स्वर्गद्वारी जाकर रहना पड़ा। अकाल एवं महामारी से त्रस्त लोगों को राहत पहुँचाने के लिए अनेक उपाय किए गए। सूखेवाले क्षेत्रों में लगान वसूली में माफी दी गई, लगान की राशि घटा दी गई, किसानों को आर्थिक सहायता दी गई, अनाज एवं पकाया गया खाद्य–पदार्थ बाँटा गया, कुएँ खुदवाए गए तथा नहरों का निर्माण हुआ। इससे जनता को कुछ राहत तो पहुॅची, फिर भी लाखों व्यक्तियों की मृत्यु हो गई। अकाल एवं महामारी ने आर्थिक व्यवस्था को बुरी तरह प्रभावित किया।

4.5.5. कृषि के विस्तार की योजना

दोआब में करवृद्धि के अतिरिक्त सुलतान ने कृषि की व्यवस्था सुधारने का भी प्रयास किया। इस उददेश्य से एक नया विभाग दीवान–ए–कोही स्थापित किया गया। इसका प्रधान अमीर–ए–कोही था। कृषि की योजना के कार्यान्वयन के लिए दोआब का क्षेत्र चुना गया। साठ वर्गमीलवाले क्षेत्र की विकास–योजना तैयार की गई। संपूर्ण क्षेत्र अनेक विकास–खंडों में विभक्त कर दिया गया। यहॉ के किसानों पर अच्छी फसल उगाने के लिए जोर डाला गया। उनसे गेहूॅ और गन्ने की खेती करने को कहा गया। सिंचाई के लिए कुएॅ खुदवाने तथा किसानों को बीज और आवश्यक धन देने की व्यवस्था की गई। यह एक प्रकार का राजकीय कृषि–फार्म था, जिसके विकास पर 1341–44 ई० के मध्य करीब 700000 टंका खर्च किया गया। किसानों से उपज का 1/2 भाग लगान के रूप में वसूलने की योजना बनाई गई। मुहम्मद तुगलक की यह योजना भी विफल हुई। इसकी विफलता के अनेक कारण थे। जो भूमि चुनी गई थी, वह बंजर थी। स्वयं सुलतान इस योजना की तरफ पूरा ध्यान नहीं दे सका तथा उसके पदाधिकारी इस कार्य के लिए पर्याप्त योग्यता एवं अनुभव नहीं रखते थें। इस योजना की पूर्ति के लिए तीन वर्षो का निर्धारित समय और किसानों से उपज का आधा लगान वसूलने की नीति भी

गलत थी। अतः यह योजना पूरी ही नहीं हो सकी।

4.6. मुहम्मद तुगलक की विदेष–नीति

मुहम्मद मुगलक ने अनेक सैनिक अभियान किए एवं कई महत्वपूर्ण योजनाएँ भी वनाई विदेशनीति पूर्णतः सफल नहीं हो सकी।

4.6.1. मंगोल–आक्रमण का सामना

मुहम्मद –विन–तुगलक के समय संभवतः मंगोल नेता तरमाशारीन का आक्रमण हुआ। अनेक विद्वान यह मानते है कि वह एक शरणार्थी के रूप में भारत आया था, जिसकी सहायता कर मुहम्मद ने मंगोलों से मैत्रीपूर्ण संबंध स्थापित किया। इसके विपरीत, कुछ अन्य विद्वानों की धारणा है कि मंगोलों ने भारत पर आक्रमण किया था। मंगोलों के पूर्व–इतिहास को देखते हुए यही मत ज्यादा सही प्रतीत होता है। ऐसा प्रतीत होता है कि तरमाशारीन ने सिंध पर आक्रमण किया और आगे बढ़ता हुआ मेरठ तक आ पहुँचा। मेरठ के नजदीक सुलतान ने उसे परास्त कर वापस जाने पर मजबूर कर दिया। तरमशीरी के साथ संभवतः मैत्रीपूर्ण संबंध भी स्थापित किए गए। दोनों में उपहारों का आदान–प्रदान हुआ। कुछ मंगोल अधिकारियों को सरकारी नौकरी दी गई।

4.6.2. नागरकोट एवं अन्य स्थानों की विजय

1337 ई० में सलतनत ने हिमालय की तरई में स्थित नागरकोट पर विजय प्राप्त की। उसने संभवतः दक्षिण भारत के अनेक प्रदेशों पर अधिकार किया, परंतु उसकी दक्षिण की विजय अस्थायी सिद्ध हुई। अपने राज्यारोहण के तुरंत बाद सुल्तान ने पश्चिमोत्तर सीमा में कलानौर तथा पेशावर पर अधिकार किया। कोंधाना (सिंहगढ) देवगिरी के निकट था यहॉ पर नाग नायक का अधिकार था। सुलतान ने उसे परास्त कर आत्मसमर्पण करने को विवश कर दिया।

4.6.3. विदेषों से संबंध

मुहम्मद तुगलक ने विदेशी शासकों के साथ मैत्रीपूर्ण संबंध स्थापित किए। इराक के शासक मूसा, ख्वारिज्म की रानी तुरबक तथा चीनी सम्राट तोगन तैमूर एवं मिस्र के अब्बासी खलीफा के साथ उसने मैत्रीपूर्ण संबंध बनाया। इब्नेबतूता को राजदूत के रूप में चीन भेजा गया। उसके समय में एशिया के विभिन्न भागों से प्रतिनिधि मंडल दिल्ली आए तथा विदेशों के साथ राजनयिक संबंधों का एक नया अध्याय आरंभ हुआ। ईराक, चीन, ख्वारिज्म के राजकीय प्रतिनिधि मंडल तथा सीरियाई अरबों के सरदार का पुत्र उसके दरबार में आए। चीन के सम्राट ने मुहम्मद तुगलक के लिए प्रचुर मात्रा में मूल्यवान उपहार भी भेजे।

4.6.4. खुरासान विजय की योजना

सुल्तान मुहम्मद तुगलक एक महत्वाकांक्षी शासक था। विदेशों से संपर्क स्थापित होने से उसे मध्य एशिया की राजनीति पर नजर रखने का मौका मिला मध्य एशिया की स्थिति इस समय अशांत थी। खुरासान संभवतः ईरान के नियंत्रण में था। अबू सईद के शासनकाल में ईरान की स्थिति दुर्बल हो चही थी। वहॉ षड़यंत्रकारी सत्ता पलटने का प्रयास कर रहे थे। मंगोल नेता तरमाशारीन तथा मिश्र के शासक भी ईरान पर अपना प्रभाव जमाना चाहते थे। ईरान तथा खुरासान से अनेक राजकुमार दिल्ली आए थे उन्होंने सुल्तान को विश्वास दिलाया कि वह

आसनी से खुरासान पर विजय प्राप्त कर सकता है। वस्तुतः मध्य एशिया की राजनीति में एक शून्यता आ गई थी जिसका लाभ सुल्तान मुहम्मद उठाना चाहता था। इस बीच मुहम्मद तुगलक, तरमशीरीन और मिस्र के शासक के बीच मैत्री स्थाजित हो गई थी। इसका लाभ उठाकर सुल्तान ने खुरासान पर आक्रमण करने की योजना बनाई। योजना की पूर्ति के लिए सुल्तान ने एक विशाल सेना संगठित की। उसमें करीब 3,70,000 सैनिक थें। सेना में राजपूतों एवं मंगोलों को सम्मिलित किया गया। सेना को एक वर्ष का अग्रिम बेतन भी दिया गया, लेकिन यह योजना आरंभ ही नहीं हो सकी। सेना के कूच करने के पहले ही मध्य एशिया की राजनीति में परिवर्तन हो गया। तरमशीरीन अपदस्थ कर दिया गया तथा मिस्र और ईरान में संधि हो गई। फलस्वरूप मुहम्मद को अपनी योजना त्याग देनी पड़ी। अधिकांश सेना भंग कर दी गई। सेना के कुछ भाग को उत्तरी सीमा की सुरक्षा में लगाया गया लेकिन इस परियोजना पर धन और समय बर्बाद हुआ। बर्खास्त किए गए सैनिकों में असंतोष बढ़ा। इससे सुल्तान की प्रतिष्ठा घटी।

4.6.5. कराचिल–विजय की योजना

खुरासान की ही तरह सुल्तान ने कराचिल–विजय की भी योजना बनाई। कराचिल–प्रदेश मध्य हिमालय में कुल्लू–कॉगड़ा या गढ़वाल–कुमायूँ क्षेत्र था। कुछ विद्वानो ने इसे चीन का प्रदेश माना है। सम्भवतः चीनी यहॉ पर उत्पाद मचाया करते थे। अतः इस सीमावर्ती प्रदेश पर अधिकार कर सुल्तान अपनी स्थिति सुदृढ़ करना चाहता थ। 1337 ई० में मलिक खुसरो के नेतृत्व में एक सेना कराचिल के बर्फबारी से आवागमन बाधित होने के कारण सालभर प्रत्यक्ष नियंत्रण का अभाव भी एक कारण था। कारण राजपूत–राजा के विरूद्ध भेजी गई। पर्वतीय मार्ग की दुर्गमता के कारण खुसरो कराचिल पर अधिकार नहीं कर सका। वह राजा से अपनी अधीनता स्वीकार करवाकर वापस लौट आया। सुल्तान की यह योजना भी पूरी तरह सफल नहीं हो सकी।

4.7. मुहम्मद–बिन–तुगलक के शासन काल के समय में उत्तर भारत का विद्रोह

मुहम्मद तुगलक के शासनकाल में साम्राज्य के लगभग सभी भागों में विद्रोह हुए। इनमें से उनेक विद्रोह को सुल्तान ने दवा दिया लेकिन कई विद्रोह उसके नियंत्रण के बाहर थ। बहाउद्दीन गुरशास्प मुहम्मद–बिन–तुगलक के सुल्तान बनने के बाद पहला विद्रोह 1326 उसने अपनी स्वंतत्र सता स्थापित करने का प्रयास आंरम्भ कर दिया। विद्रोह की सूचना मिलते ही अपनी स्वतंत्र सता स्थपित करने का प्रयास आरम्भ कर दिया। विद्रोह की सूचना मिलते ही सुल्तान गुजरात से ख्वाजा जहॉ अहमद अयाज को गुरशास्य के दमन के लिए भेजा। अयाज ने उसे परास्त कर भागने पर मजबूर कर दिया। गुरशास्य ने भाग कर काम्पिल के राय के यहॉ शरण लेने को पहुँचा बीर बल्लाल ने गुरशास्प को ख्वाजाजहॉ के हवाले कर दिया। उसे बंदी बनाकर सुल्तान के समक्ष उपस्थित किया गया। सुल्तान ने उसकी खाल खीचं कर उसमें चोकर भरने और सारे देश में घुमाने का आदेश दिया। इब्नेबतूता के अनुसार सुल्तान ने उसे उसकी संबंधी महिलाओं के पास ले जाने के आदेश दिए जिन्होने कुछ मांस चावल के साथ पकाकर उसकी पत्नी तथा बच्चों के पास भेजा गया। शेष एक थाली में रखकर हथिनी के आगे रखा गया जिसने उसे नहीं खाया इस प्रकार की क्रूरता बेमिसाल है लेकिन इससे विद्रोह बंद नहीं हुए। बहराम आएबा किशलू खॉ सुल्तान का

सुबेदार था। उसने 1328 ई0 में सुल्तान के विरूद्ध विद्रोह किया पहला कारण था दूसरा कारण यह था कि जब किश्लू खॉ को देवगिरी जाने की आज्ञा दी गई तो उसने इस पर ध्यान नही दिया और सुल्तान ने इस उसने सुलतान के लिए प्रस्थान किया। किशूल खॉ ने भी युद्ध की तैयारी की। अबूहर के निकट दोनों सेनाओं की मुठभेड़ हुई। किशलू खॉ ने भी युद्ध की तैयारी की। अबूहर के निकट दोनों सेनाओं की मुठभेड़ हुई। किशलू खॉ युद्ध में मारा गया।उसका सिर काट कर सुल्तान के समक्ष पेश किया गया।

4.7.1. गयासुद्दीन बहादुर

बूरा को सुल्तान ग्यासुद्दीन तुगलक ने कैदकर दिल्ली में रखा था। मुहम्मद तुगलक ने उसे जेल से मुक्त कर लखनौती बंगाल का शासक इस शर्त पर बनाया थ कि सिक्कों पर बूरा और सुलतान दोनों का नाम रहेगा तथा बूरा अपने एक पुत्र को बधक के रूप में दिल्ली भेजेगा गयासुद्दीन बहादुर को पकड़ कर उसकी हत्या कर दी गई। इससे तत्काल तो लखानौती में सुलतान की सता स्थापित हुई लेकिन बंगाल पर प्रभावशाली नियंत्रण स्थापित नहीं हो सका।

4.7.2. बंगाल में अशांति

बहराम खॉं की मृत्यु के बाद उसके एक पदाधिकारी मलिक फखरूद्दीन 1337 ई0 में अपनी स्वतंत्रता की घोषणा कर सुनारगॉव का स्वतंत्र शासक बन बैठा। उसने सुलतान फखरूद्दीन की पदवीं धारण की। सुल्तान के आदेश पर लखनौती के प्रांतपति कद्र खॉं ने फखरूद्दीन के विरूद्ध अभियान किया। कद्र खॉं पराजित हुआ। सुनारगॉव पर फखरूद्दीन की सत्ता सुदृढ़ हो गई। लखनौती में उसने अपने एक दास को प्रशासक नियुक्त किया। इससे भी समस्या का समाधान नही हुआ। कुछ समय बाद अली मुबारक ने लखनौती पर अधिकार कर लिया। उसने मुहम्मद तुगलक से लखनौती के लिए एक प्रशासनिक अधिकारी को भेजने का अनुरोध किया लेकिन मुहम्मद तुगलक ऐसा नहीं कर सका। फलतः अली मुबारक ने सुल्तान अलाउद्दीन के नाम से लखनौती में एक स्वतंत्र राज्य कायम कर लिया। लखनौती में पुनः विद्रोह हुआ। इस विद्रोह का नेता मलिक हाजी इलियास था। उसने अलाउद्दीन भी अधिकार कर लिया। इसी के समय से बंगाल दिल्ली के नियंत्रण से पूर्णतः स्वतंत्र हो गया। दिल्ली से अलग होनेवाला यह पहला प्रांत था।

4.7.3. सिंध में अराजकता

बंगाल के समान सिंध भी सुल्तान के लिए हमेशा सिरदर्द बना रहा। केंद्र की दूरी तथा सुलतान की व्यस्तता एवं परेशानियों का लाभ उठा कर सिंध के पदाधिकारी और अमीर बार–बार विद्रोह करते थे। मुहम्मद तुगलक के सुलतान बनने के कुछ वर्ष बाद सिंध में कमालपुर के काजी और खतीब ने विद्रोह किया। ख्वाजाजहॉं ने इस विद्रोह इस बार विद्रोह का केंद्र सेहवान था। वुनार तथा कैसरेरूमी ने सुल्तान ने सेना की सहायता से विद्रोह को कुचल दिया। दक्षिण भारण में विद्रोह – सुल्तान मुहम्मद तुगलक ने दक्षिण भारत के विद्रोहों पर वह प्रभावशाली नियंत्रण स्थापित नहीं कर पाया के बाद एक अनेक विद्रोह होते चले गए।

4.7.4. माबर

दक्षिण में पहला सशक्त विद्रोह माबर (मदुरा) में हुआ। जिस समय सुल्तान दोआब के विद्रोह का दमन करने में व्यस्त था उसी समय 1335 ई0 में माबर के प्रतिपति एहशानशाह ने विद्रोह किया। सुलतान ने इस विद्रोह को दबाने के लिए पहले वजर ख्वाजाजहॉ को भेजा लेकिन उसे मालवा से ही वापस लौटना पड़ा। सुल्तान स्वंय इस विद्रोह को दबाने के लिए गया लेकिन सेना में महामारी फैलने और स्वयं बीमार पड़ जाने के कारण उसे बिना विद्रोह को दबाए हुए ही वापस लौटना पड़ा। फलतः माबर ने पूर्णरूपेण अपने को स्वतंत्र कर लिया। इस बीच काम्पिलय में मुस्लिम सत्ता का विरोध बढ़ता जा रहा था। अतः सुलतान ने वहाँ शांति–व्यवस्था स्थापित करने की सोची। इस उद्‌देश्य से हरिहर को काम्पिल का शासक और बुक्का को उसका सहायक बना कर भेजा गया। दोनों भाईयों ने वहॉ शान्ति–व्यवस्था स्थापित की। 1336 ई0 में उन लोगों ने विजयनगर राज्य की स्थापना की। सेना संगठित कर हरिहर ने कोंकण, मालाबार एवं तुगभद्रा नदी की तलहटी में अपना प्रभाव क्षेत्र विस्तृत कर लिया, लेकिन वह नाममात्र के लिए मुहम्मद तुगलक की अधिसत्ता मानता रहा। सुल्तान की मृत्यु के बाद हरिहर ने विजयनगर को पूर्ण स्वतंत्र राज्य के रू‍ में परिणाम कर दिया।

4.7.5. वारंगल

वारंगल के शासक प्रताप रूद्रदेव के पुत्र कृष्णनायक ने दक्षिण की हिंदू शक्तियों को मुस्लिम सत्ता के विरूद्ध संगठित करना आरंभ किया। उसने तेलंगाना के शासक हरिहर, द्वारसमुद्र के वीर वल्लाल तृतीय और कोंड राजा प्रलयवेग के सहयोग से एक त्रिगुट का गठन किया। इसका उद्‌देश्य दक्षिण में हिंदू सत्ता एवं प्रभाव का विकास करना था। इससे सल्तनत की शक्ति कमजोर हुई।

4.7.6. होयसल

होयसल राजा वीर वल्लाल तृतीय भी अपनी शक्ति का विस्तार कर रहा था। यद्यपि उसने सुल्तान को खुले रूप में चुनौती नहीं दी लेकिन उसने अपना प्रभाव और अपनी शक्ति बढ़ानी जारी रखी। उसने मदुरा के मुस्लिम शासक से अनेक इलाके जीत लिए। उसके बढ़ते प्रभाव को रोकने के लिए मुहम्मद तुगलक ने वीर वल्लाल के दमन का निश्चय किया। उसे युद्ध में परास्त कर बंदी बना लिया गया तथा बाद में (1342 ई0) उसकी हत्या करवा दी गई।

वीर वल्लाल तृतीय के अधूरे कार्य को उसके पुत्र ने आगे बढ़ाया। उसने हरिहर के साथ मिलकर दक्षिण से मुस्लिम सत्ता के उन्मूलन का प्रयास जारी रखा। कृष्णनायक ने वारंगल में दिल्ली के अधिकारियों का ठहरना कठिन कर दिया। फलतः वारंगल भी सल्तनत के हाथों स निकल गया।

4.7.7. मालवा

मालवा के अमीरों ने सुल्तान को कर देना बंद कर विद्रोह कर दिया। अजीज खुम्मार ने सुल्तान के आदेश पर सादा अमीरों का निर्दयतापूर्वक दमन आरंभ किया। अनेकों की हत्या करवा दी गई। इससे अमीरो में और अधिक प्रतिक्रिया हुई। एक तरफ तो अमीर संगठित होने लगे तथा दूसरी तरफ अशांति को बढ़ावा देकर लूटमार मचाने लगे। इससे स्थिति और गंभीर हो गई।

4.7.8. देवगिरी

सादा अमीरों का विद्रोह देवगिरी में भी फैल गया। मालवा की घटना से वे क्रुद्ध थे। उन लोगो ले राजकोष में धन जमा करना बंद कर दिया। इससे प्रशासनिक अव्यवस्था व्याप्त गई तथा खजाना रिक्त हो गया। देवगिरी का शासक कुतलुग खॉ स्थिति पर नियंत्रण स्थापित नहीं कर सका। अतः उसके स्थान पर आलिम–उल–निजामुददीन मुल्क को नया प्रशासक नियुक्त किया गया। इससे भी स्थिति में सुधार नहीं हुआ। चारों ओर दक्षिण में अराजकता छा गई। इस समय गुजरात में भी विद्रोह हो रहा था। इसे दबाने के लिए सुल्तान ने सादा अमीरों को गुजरात पहॅुचने का आदेश दिया। उसके आदेश पर रायचूर, गुलबर्गा, बीदर, बीजापुर और अन्य स्थानों से सादा अमीर गुजरात की ओर चले लेकिन मार्ग में उन्हे सुल्तान की नीयत पर शक हुआ। अतः वे सभी वापस देवगिरी लौट आए। वहॉ उन लोगों ने निजामुददीन को गिरफ्तार कर लिया। दुर्ग पर विद्रोहियों ने अधिकार कर खजाना लूट लियां संपूर्ण क्षेत्र को अनेक छोटे–छोटे भागों में बाटॅ कर अमीरों ने अपना शासन आरंभ कर दिया। विद्रोह की खबर पाते ही मुहम्मद तुगलक देवगिरी आया तथा इस पर पुनः अपना अधिकार स्थापित किया। इससे अमीरों की शक्ति नष्ट नहीं हुई। वे मौके की ताक में लगे रहे।

सुलतान अभी देवगिरि में ही था कि उसे गुजरात में तगी के विद्रोह की जानकारी मिली। तः मुहम्मद तुलक देवगिरि में अपनी स्थिति सुदृढ़ किए बिना ही गुजरात के लिए चल पड़ा। फलतः सादा अमीरों ने हसन गंगू के नेतृत्व में पुनः देवगिरि पर अधिकार कर लिया उसने अपनी स्वतंत्रता की घोषणा कर दी। 1347 ई० में वह अलाउददीन हसन बहमनशाह के नाम से देवगिरी में बहमनी के स्वतंत्र राज्य का शासक बन बैठा। इसके साथ ही दक्षिण में सल्तनत का प्रभाव समाप्त हो गया।

4.7.9. गुजरात

मुहम्मद को अपने शासन का अंतिम विद्रोह गुजरात में झेलना पडा तगी सुल्तान का एक विश्वासपात्र सेवक था। जिस समय मुहम्मद तुगलक सादा अमीरों का विद्रोह दबाने के लिए देवगिरी आया उसी समय गुजरात से उसकी अनुपस्थिति का लाभ उठाकर तंगी ने अपनी शक्ति बढ़ा ली। उसने सादा अमीरों और अन्य विद्रोहियों को अपने पक्ष में संगठित कर लि। सेना का गठन कर उसमें खंभात भड़ौच इत्यादि स्थानों पर अधिकार कर लिया। तंगी के विद्रोह ने सुलतान को गुजरात वापस लौटने पर विवश कर दिया। मुहम्द तुगलक ने तंगी के विद्रोह ने सुलतान को गुजरात वापस लौटने पर विवश कर दिया।मुहम्मद तुगलक ने तंगी को पराजित कर गुजरात वापस लौटने पर विवश कर दिया। उसने सिंध मे शरण ली। गुजरात की व्यवस्था सुनिश्चित कर सुल्तान ने थट्टा सिध पर आक्रमण की योजना बनाई लेकिन इसी बीच बीमारी के कारण मार्च 1351 ई0 में सुलतान की मृत्यु हो गई।

सुल्तान की सभी योजनाऍ विफल हो गई। इनकी विफलता इसलिए नहीं इुई कि इन योजनाओं में कोई गडबडी थी वह किसी भी योजना के कार्यान्वयन पर पूरी निगरानी नहीं रख सका। अधिकारियों का भी उसे पूरा सहयोग नहीं मिल सका। जहॉ कड़ाई नही करनी थी। वहाँ कड़ाई की गई और जहाँ कडाई की जरूरत थी वहाँ ढिलाई बरती गई। फलतः सभी योजनाऍ विफल हुई इनकी विफलता का परिणाम स्वयं सुल्तान और सुल्तान के लिए घातक

4.8 फिरोज तुगलक

1351–1388 के आंतरिक जीवन के सन्दर्भ में इतिहासकार अफीफ लिखता है। कि ''उसका जन्म 1309 ई0 में हुआ था। उसके पिता मलिक रजव थें। गयासुद्दीन अपने भाई की मृत्यु के बाद फिरोज की देखभाल की उसे राजनीति एवं प्रशासन की समुचित शिक्षा दी गई और उसे अमीर–ए–हाजिब के पद पर नियुक्त किया गया इस पद पर रहते हुए उसने सुल्तान मुहम्मद तुगलक की सेवा कर उसका विश्वास प्राप्त किया। यहाँ तक कि दक्षिण से जब मुहम्मद तगलक विद्रोहो को दबाने में में व्यस्त था तो उसे दिल्ली के प्रशासन का मार संरक्षण परिषद को सौपा जिसका प्रधान फिरोज तुगलक था। इससे उसकी शक्ति में वृद्धि हुई मुहम्मद तुगलक का देहावसान 20 मार्च 1351 ई0 को सिंध के निकट भट्टा में हुआ था। इतिहासकार वरनी व शम्स–ए–सिराज–ए–अफीफ का मानना है कि ''तुगलक अपनी मृत्यु से पहले ही अपने चचेरे भाई फिरोज तुगलक वसीयतनामा नही था। इस समय गद्दी के दो दावेदार थे। पहला फिरोज तुगलक व मृत्यु सुल्तान था। भांजा सुदाबंदजाहा, परन्तु अमीरों व उलेमा वर्ग के सहयोग से 22 मार्च 1351 को भट्टा में ही फिरोज का राज्यभिषेक सम्पन्न हुआ।

4.8.1 फिरोज के प्रशासनिक सुधार

फिरोज तुगलक राज्यरोहण अत्यन्त विषम परिस्थितियों में हुआ। उस राज्य में हुआ। उस समय राज्य में सर्वत्र अव्यवस्था। थी, प्रशासनिक व्यवस्था। का नामो निशान नही था। अकाल व महामारी से कृषि उधोग और व्यापार नष्ट हो गये थे। राजकोष रिक्त था राज्य में जगह–जगह विद्रोह हो रहे थे। आमजन में असन्तोष था। फिरोज इन मुश्किलों का सामना धैर्यपूर्वक किया।

सहानुभूति व समर्थन प्राप्ति का प्रयास– फिरोज तुगलक ने सबसे पहले राज्य में शान्ति –व्यवस्था करने का प्रयास किया। इसलिए उसने सबसे पहले जिन व्यक्तियों का कर्ज सरकार पर था। उन्हे धन देकर उनसे माफी नामें लिखवाए गये एवं उन्हे दिवंगत सुल्तान की कब्र मं दफना दिया गया,जिससे कि सुल्तान की आत्मा को शान्ति मिलें।ऋण सम्बन्धि सभी पंजिकाएं नष्ट कर दी गई इससें खलीफा का प्रतिनिधि धोषित किया। राज्य के महत्वपूर्ण पदों पर योग्य एवं विश्वास पात्र व्यक्तियों को नियुक्त किया। गया। वजीर का पद मलिक मकबूल को नायब आरिज का पद मलिक राजी को तथा गाजी शहना को वंशानुगत बना दिया। फिरोज का बोझ हल्का कर दिया गया। सरकारी पदों कों वंशानुगत हो गयी तथा जनता फिरोज का बोझ हल्का कर दिया। सरकारी पदों को वंशानुगत बना दिया गया फिरोज शाह ने दिल्ली के पूर्व सुल्तानों के प्रति सम्मान प्रकट करने के लिए शुक्रवार को पढे जाने वाले नमाज में मुहम्मद गोरी, इल्तुतमिश, नासिरूदीन, महमूद वलवन फिरोज एवं अलाउद्दीन खिल्जी गयासुद्दीन तुगलक मुहम्मद तुगलक के नामो।का उल्लेख करने की आज्ञा दी इन आरंभिक उपायों द्वारा सुल्तान ने हरेक वर्ग की सहाननुभूति प्राप्त कर ली।

4.8.2. अमीरों एवं उलेमा के प्रति नीति

फिरोजशाह को राजगद्दी अमीरों और उलेमाके सहयोग से मिली थी। अमीरों की जागीरें, पेशन एवं उन्हे दी जाने वाली अन्य सुविधाएँ बढ़ा दी गई। राज्य के महत्वपूर्ण पदधिकारियों के वेतन में भी बढोत्तरी की गई। उन्हे इतना अधिक वेतन दिया गया कि वे सुख चैन की जिंदगी व्यतीत करने लगे। इसी प्रकार उसने उलेमा को संतुष्ट करने का प्रयास किया। सुल्तान बिना उनकी सलाह के कोई भी कार्य नहीं करता था। फलतःउलेमा वर्ग ने कभी सुल्तान का विरोध नहीं किया।

4.8.3. धार्मिक नीति

दिल्ली के सुलतान ने अब तक सिद्धान्त और व्यवहार में धार्मिक सहिष्णुता की नीति का ही पालन किया था। उन्होने एक धर्मनिरपेक्ष राज्य की स्थापना पर बल दिया था। परंतु उलेमा के प्रभाव में आकर न सुलतान ने धर्म क्षेत्र की स्थापना का प्रयास किया। वह इस्लाम के नियमों का कडाई से पालन करता था और सादा एवं संयत जीवन व्यतीत करता था। गैर–सुन्नियों शियाओं, सूफियों, महदवियों, मुजाहिदों एवं हिंदुओ के प्रति उसने कोर एवं अनुदार नीति अपनाई उसकी धार्मिक असहिष्णुता की नीति के शिकार मुसलमान एवं हिंदू दोनों ही बने। शियाओं पर अनेक अत्याचार किए गए। उनकी धार्मिक प्रथाएँ बंद करवा दी गई तथा उनकी पुस्तकें जला दी गई। सूफियों पर भी अत्याचार किए गए। सुल्तान ने महदवी नेता रूकनुद्दीन की हत्या करवादी। मुस्लिम स्त्रियों पर परदा कड़ाई से थोपा गाया। उन्हे मजारो एवं दरगाहों पर भी जाने की अनुमति नहीं दी गईं। हिन्दुओं के साथ उसने और अधिक अनुदार व्यवहार किया। उन्हे इस्लाम –धर्म स्वीकार करने को बाध्य किया गया। हिंदुओं के अनेक मंदिर नष्ट कर दिए गए, मंदिरों की मरम्मत पर पाबंदी लगा दी गई। हिन्दुओं के मेले –त्योहारों पर भी रोक लगा दी गई सुलतान ने धार्मिक भावना से प्रेरित होकर अपने महल के सभी भिति चित्र नष्ट करवा दिए सोने चांदी के बर्तन गलवा दिए गए तथा रेशमी और जरी के वस्त्रों के उपयोग पर रोक लगा दी। शरीयत के नियमों के अनुसार सैनिको को लूट के 1/5 भाग के स्थान पर 4/5 भाग देने का आदेश दिया गया। फिरोजशाह ने अनेक चुंगी कर समाप्त कर दिए इनमें से कुछ कर थें मंदवी बाजार में बिकने वाली घास और पत्ते या चारा दलागले बजराहा बाजारों में दलाली कर जजरी का कसाईपर कर जमीरे तरब मनोरजन कर गुल फरोशी की बिक्री पर कर माही फरोशी मछली कर किभार खाना जुआघरों पर कर मुसादरात अर्थदंड कबाबी कबाब पर कर इत्यादि इन समस्त करों से राज्य को करीब 30 लाख टकें की आय होती थी फतुहात में सुलतान स्वयं कहता है कि उसने मालवा सालेहपुर और गोहना के नए मंदिरों को नष्ट किया। सुलतान की धार्मिक असहिष्णुता की नीति से उलेमा संतुष्ट हुए परंतु राज्य पर सुल्तान की धार्मिक नीयिों का विनाशकारी प्रभाव पडा।

4.8.4. राजस्व

व्यवस्था एवं आर्थिक सुधार–फिरोज शाह ने आर्थिक विपन्नता दूर करने के लिए राजस्व व्यवस्था में आवश्यक परिवर्तन किए। पहले के तकावी ऋण बंद कर दिए गए। सरकारी कर्मचारियों का वेतन इस उद्देश्य से बढा दिया गया। कि वे ईमानदारी से कार्य कर हिंसामुद्दीन के सहयोग से राज्य की संभावित आय एवं व्यय का व्योरा तैयार करवाागा।

फुतुहत –ए–फिरोजशाही से ज्ञात होता है कि सुल्तान ने मकान, चरागाह इत्यादि पर लगाए गए 28 प्रकार के करों को वापस ले लिया। राज्य ने मुख्यतः 4 कर वसूले –खराज भूमिकर, जकात मुसलमानें से जजिया गैर मुसलमानों से और खुम्स युद्ध मे लूट का माल कृषि एवं सिचाई के विकास के लिए अनेक कदम उठाए गए। किसानों को उपज बढाने के लिए प्रेरित किया गया। अफीफ के अनुसार कृषि योग्य भूमि तैयार करने के लिए किसानों को सौ लाख टंके की रकम दी गई। सिंचाई के लिए अनेक नहरों का निमार्ण हुआ सौ लाख टंके की रकम दी गई। सिचाई की सुविधा के लिए नहरो का निमार्ण हुआ इनमें पाँच नहरे।प्रमुख है। यमुना नदी से हिसाार तक 150 मील लंबी उलूगखनी नहर। संतलज से धाधरा तक 96 मील लंबी रजवाह नहर सिरमौर से हॉसी हांसी तक की नहरें। यमुना से

फिरोजाबाद तक की नहर।

राज्य की मुख्य नहरों कर निर्माण केन्द्रीय सरकार के अधीन था। छोटी नहरों का निर्माण प्रांतीय सरकारें द्वारा होता था। सिंचाई के लिए उपयोग मे लाए गए पानी के लिए किसानो को कर देना पडता था नहरों से फिरोज को दो लाख टंके की वार्षिक आमदनी होती थी।

नहरों के अतिरिक्त अनेक कूप तालाब एवं झील भी खुदवाए गए। बाग बागवानी की भी व्यवस्था हुई बागानो से राज्य को करीब एक लाख बस्सी हजारे टंके की आमदनी होती थी। उद्यो –धंधो के विकास के लिए 36 कारखाने स्थापित किए गए। काराखाने दो प्रकार के थे। रातिबी और गैर–रातिबी।

कारखानों का प्रबंध मुतसर्रिफ नामक पदाधिकारी देखते थे।कारखानों के हिसाब किताब की जॉच में भी ढिलाई बरती गई। व्यापारियों पर से अनेक प्रकार के कर हटाा लिए गए। फिरोजशाह तुगलक की आर्थिक नीतियों के परिणामस्वरूप मूल्य सामान्य रहे। वस्तुओ के दाम सस्ते थे। अफीफ के अनुसार फिरोज के समय में गेहूँ का मूल्य सामान्य रहे। वस्तुओं के चना और जौ चार जीतल धी अढाई जीतल प्रति सेर, शक्कर साढे तीन जीतल प्रति सेर थे। आर्थिक समृद्धि के बावजूद राज्य पदाधिकारियों पर कड़ ा नियंत्रण नही रख सका। इसके चलते किसान तो शोषण के शिकार हुए ही राज्य को भी अधिक क्षति हुई। रिश्वतखोरों जमाखोरों और भ्रष्टाचार का बाजार गर्म था। सुल्तान की उदारता का लाभ उठाकर पदाधिकारी राजकीय धन का गबन करते थे। इसके बावजूद आर्थिक सम्पन्नता बनी रही। राज्य को अकाल का सामना करना पडा।

4.8.5. न्याय व्यवस्था

न्याय व्यवस्था पर पुनः धर्मगुरूओं का प्रभाव स्थापित हो गया। काजी प्रमुख न्यायाधीश होता था। उसके अधीन प्रांतो मे भी काजी नियुक्त किए गए मुफ्ती कानूनों की व्याख्या करते थें। काजी एवं मुफ्ती का पद उलेमा के लिए सुरक्षित कर दिया गया। अंग भंग करने की सजा बद कर दी गई मुसलमानों को मृत्युदंड देना बंद कर दिया या परंतु हिन्दुओं के लिए यह व्यवस्था बनी रही।

4.8.6. सैन्य–व्यवस्था

फिरोज ने आवश्यकतानुसार सैन्य–व्यवस्था में भी सुधार किए। सेन में अच्छी नस्ल के घोड़े लाए गए। सैनिकों को उत्तम कोटि के हथियार दिए गए। उनमें अनुशासन की भी स्थापना की गई। जिन सैनिकों को न तो भूमि दी गई और न ही वेतन, उन्हें विभिन्न प्रदेशो से प्राप्त राजस्व का कुछ भाग दे दिया जाता था। यह व्यवस्था दोषपूर्ण थी। सैनिकों का पद वंशानुगत बन जाने एवं सैनिकों को दण्ड नहीं देने से भी सेना में अनुशासन एवं भ्रष्टाचार फैल गया। फिरोज की नीतियों ने दिल्ली की सशक्त सेंना को दुर्बल बना दिया।

4.8.7. जनकल्याण या परोपकार के कार्य

दयालु प्रवृति का होने के कारण फिरोजशाह तुगलक ने जनकल्याण के लिए भी अनेक कार्य किए। बेरोजगार व्यक्तियों को काम देने के लिए दिल्ली में एक रोजगार दफ्तर खुलवाया गया। सारे बेरोजगारों को इस दफ्तर में पंजीकृत

किया गया तथा आवश्यकतानुसार उन्हें रोजगार उपलब्ध कराए गए। गरीब एवं असहाय मुसलमानों की सहायत के लिए ऐसे व्यक्तियों को सुलतान के दास के रूप में रख लिया गया। उनके लिए समुचित धन की व्यवस्था की गई तथा देखभाल के लिए पराधिकारी नियुक्त किए गए, और गरीबों के भरण–पोषण एवं उनकी देखभाल का कार्य किया जाता था। अनेक गरीब मुसलमान लड़कियों का विवाह इस विभाग ने करवाया। रोगियों की चिकित्सा के लिए दिल्ली में दार–उल–शफा अथवा खैराती दवाखाना खोला गया जहॉ रोगियों के निःशुल्क चिकित्सा एवं भोजन की उत्तम व्यवस्था की गई।

4.8.8. फिरोज के निर्माण कार्य

फिरोजशाह तुगलक ने उनेक नए भवनों का निर्माण करवाया एवं पुराने भवनों का जीर्णोद्धार किया। इतिहासकार फरिश्ता के अनुसार फिरोज तुगलक ने ''चार गस्जिदों, तीस महलों, दो सौ काफिला सरायों, पॉच अस्पतालों, सौ कब्रों, दस स्त्रानागारों, दस समाधियों और सौ पुलों का निर्माण करवाया। फतुहात में सुलतान स्वयं उन भवनों का उल्लेख करता है जिनकी मरम्मत उसने करवाई। इनमें प्रमुख थे दिल्ली का मीनार, शम्सी तालाब, जहॉजनाह, इल्तुतमिश, जलालुददीन, अलाउददीन आदि सुलतानों के मकबरे एवं शेख निजामुददीन औलिया का मकबरा। उसने ''जामा मस्जिद'' और मदरसे फिरोजशाही का भी निर्माण करवाया। फिरोज ने अनेक नगरों का भी निर्माण करवाया। फिरोजशाह कोटला, जौनपुर इत्यादि। दिल्ली के अन्य किसी सुल्तान ने भवनों एवं नहरों के निर्माण पर इतना समय और धन खर्च नहीं किया। फिरोज की दिलचस्पी ज्ञान–विज्ञान के क्षेत्र में भी थी। उसने ''तास घड़ियाल'' अथवा जल घड़ी का अविष्कार किया। उसने अशोक की दो लाटें भी खोजी जो दिल्ली के निकट और मेरठ के पास थीं। इन्हें बहुत परिश्रम और कुशलता से दिल्ली में ला कर स्थापित किया गया।

4.8.9. शिक्षा एवं साहित्य के विकास को संरक्षण

फिरोजशाह तुगलक ने शिक्षा और साहित्य के विकास के लिए सदैव प्रयासशील रहा। वह विद्वानों का सम्मान करता था। शिक्षा के प्रसार के लिए सुलतान ने उनेक मदरसा एवं मकतब खुलवाए। इनमें योग्य व्यक्तियों को नियुक्त किया गया। मस्जिदों में भी शिक्षा देने की व्यवस्था की गई। अध्यापकों एवं व़िद्यार्थियों को राज्य की ओर से समुचित सहायता दी गई। विद्वानों को आर्थिक सहायता दी गई, उन्हें सम्मानित एवं पुरस्कृत भी किया गया। सुल्तान ने फारसी एवं संस्कृत भाषा और सहित्य के विकास को प्रोत्साहन दिया। इतिहास लेखन को भी प्रश्रय दिया गया। इतिहासकार जियाउददीन बरनी एवं शम्से शिराज अफीफ फिरोज तुगलक क समकालीन एवं आश्रित थे। बरनी ने अपने विख्यात ऐतिहासिक ग्रंथों– फतवा–ए–जहॉदारी तथा तारीख–ए–फिरोजशाही की रचना उसी के समय में की। सुलतान ने स्वयं अपनी आत्मकथा फतुहात–ए'फिरोजशाही लिखी। फिरोज तुगलक ने संस्कृत के अनेक प्राचीन ग्रंथों का फारसी भाषा में अनुवाद करवाया, लेकिन संस्कृत के किसी महत्वपूर्ण ग्रंथ दलायल–ए– फिरोजशाही थी। चिकित्सा, कानून एवं इस्लाम धर्म की शिक्षा को भी प्रोत्साहन दिया गया। वस्तुतः फिरोजशाह का शासन काल शि़क्षा, साहित्य एवं भवन–निर्माण कला के विकास का युग था।

4.8.10. फिरोजशाह की विदेशनीति

फिरोज तुगलक शांति की नीति का पोशाक था। इसलिए उसने कोई भी सैनिक अभियान साम्राज्य के विस्तार के लिए नहीं किया। जो सैनिक अभियान इस समय हुए, वे साम्राज्य के विघटन को रोकने के लिए थे। स्पष्ट तौर पर देखी जा सकती है।

4.8.11. बंगाल पर आक्रमण

मुहम्मद–बिन–तुगलक के अंतिम दिनों में बंगाल सल्तनत से स्वतंत्र हो चुका था। हाजी इलियास शाह एक स्वतंत्र शासक बन बैठा था। अतः 1354 ई० में सुल्तान का बंगाल पर पहला आक्रमण हुआ। सुल्तान के आगमन से भयभीत होकर शमसुददीन राजधानी पांडुआ छोड़कर इकदला के दुर्ग में चला गया। फीरोज की सेना ने दुर्ग को घेर लिया परंतु दुर्ग की स्त्रियों के रोने की आवाज सुनकर वह द्रवित हो उठा। सेना को घेरा वापस उठाने का आदेश दे दिया गया। सुल्तान ने घोषणा कर दी कि वह किसी मुसलमान का खून नहीं बहाएगा। 1354 ई० में सुल्तान दिल्ली लौट गया। 1359 ई० में बंगाल के एक अमीर जफर खॉ की अपील पर सुल्तान ने पुनः बंगाल पर आक्रमण कर दिया। इस समय बंगाल का शासक सिकंदर था। यद्यपि सिकंदर पराजित हुआ परंतु बंगाल पर अपना शासन स्थापित किए बिना, सिकंदर के अधीन करने का मौका छोड़ दिया। फलतः बंगाल सदैव के लिए सल्तनत से स्वतंत्र हो गया। बंगाल पर आक्रमण के दो परिणाम निकले। द्वितीय अभियान के बाद जौनपुर नगर की स्थापना की गई तथा फतह खॉ को सुल्तान ने अपना अत्तराधिकारी नियुक्त किया। सिक्को में अपने नाम के साथ फतह खॉ का नाम भी खुदवाया।

4.8.12. जाजनगर–अभियान

जाजनगर पर गयासुददीन तुगलक क समय में ही उलुग खॉ ने आक्रमण कर इसे लूटा थां संभवतः धन प्राप्त करने की आकांक्षा से, बंगाल से लौटते समय फिरोज ने भी इसपर आक्रण किया। जाजनगर का राजा सुल्तान के आगमन की खबर सुनकर भाग खड़ा हुआ। उलेमा का समर्थन एवं प्रशंसा पाने के उद्देश्य से फिरोज ने पुरी एवं वहॉ स्थित जगन्नाथ के मंदिर को लूटा। मंदिर की मूर्ति समुद्र में फेंक दी गई। बाध्य होकर जाजनगर के राजा ने सुल्तान की अधीनता स्वीकार कर ली। वह प्रतिवर्ष कर के रूप में कुछ हाथी देने पर सहमत हो गया। जाजनगर के बाद वीरभूमि के हिन्दू–राजा और अनेक सामंतों को पराजित करता हुआ, उनसे अपनी अधीनता स्वीकार करवाता हुआ सुलतान दिल्ली लौट गया।

4.8.13. नगरकोट पर आक्रमण

1360 ई० में सुलतान का आक्रमण नगरकोट पर हुआ जिसपर मुहम्मद तुगलक ने भी आक्रमण किया था। मुहम्मद के समय में नगरकोट के राजा ने दिल्ली की अधीनता स्वीकार कर ली थी, परंतु बाद में वह स्वतंत्र बन बैठा। फिरोज ने आक्रमण कर नगर को घेर लिया। ज्वालामुखी के प्रसिद्ध मंदिर को लूटा एवं भ्रष्ट किया गया। बाध्य होकर राजा को संधि करनी पड़ी। नगरकोट–अभियान के दौरान फिरोजशाह को करीब 1300 संस्कृत ग्रंथ भी मिले, जिनमें से कुछ का उसने फारसी–भाषा में अनुवाद करवाया। ऐसे ग्रंथों में सबसे प्रसिद्ध दलायले फिरोजशाही मानी जाती है।

4.8.14. सिंध पर आक्रमण

फिरोज अंतिम विजय–अभियान थटटा के विरूद्ध हुआ 1362 ई०। इतिहासकार अफीफ के अनुसार, सल्तनत के इतिहास में यह सर्वाधिक सुव्यवस्थित सैनिक अभियान बन गया। कहा जाता है कि यह अभियान उसने अपने अपमान का बदला लेने के लिए किया था। उस समय सिंध का शासक जाम बबिनिया था। उसने दृढ़तापूर्वक सुलतान की सेना का सामना किया। प्रतिकूल परिस्थिसियों से बाध्य होकर सुल्तान सिंध से गुजरात चला गया। यहीं उसे बहमनी–राज्य पर आक्रमण करने का भी निमंत्रण मिला, परंतु उसने इसे ठुकरा दिया। 1363 ई० में वह पुनः सिंध जा धमका। बबिनिया को सुलतान के समक्ष आत्मसमर्पण करना पड़ा। उसने वार्षिक कर चुकाने का वचन दिया।

4.8.15. आंतरिक विद्रोहों का दमन

फिरोज तुगलक को अपने शासन के उत्तरार्द्ध में अनेक विद्रोहों का सामना करना पड़ा परंतु उसने दृढ़तापूर्वक उनका सामना किया। गुजरात, इटावा और कटेहर के विद्रोहियों को शांत कर दिया गया। कटेहर का विद्रोह 1380 ई० अत्यंत क्रूरतापूर्ण ढंग से दबाया गया। हजारों बेकसूर हिन्दू मारे गए एवं उन्हें धर्म–परिवर्तन के लिए बाध्य किया गया। फलतः सेना का मनोबल गिरा और उसका पतन हुआ। इसके साथ–साथ साम्राज्य के बुरे दिन आ गए। विद्रोहों का तांता बॅध गया और विघटन की प्रक्रिया तीव हो गई।

समय कष्ट में व्यतीत हुए। उसने अपने बड़े पुत्र फतह खॉ को अपना उत्तराधिकारी मनोनीत किया था, परंतु 1374–75 ई० में उसकी मृत्यु हो गईं अब जफर खॉ को उत्तराधिकारी मनोनीत किया गया, परंतु वह भी मृत्यु का शिकार हो गया। राज्य का उत्तराधिकारी तीसरे पुत्र मुहम्मद खॉ को छोड़कर फतह खॉ के पुत्र तुगलकशाह को मनोनीत किया गया। सुल्तान के इस कार्य ने गृहयुद्ध की स्थिति ला दी। वजीर की हत्या करवा कर मुहम्मद खॉ वास्तविक शासक बन गया, फिरोज नामधारी सुलतान बना रह गया। यह स्थिति भी कायम नहीं रह सकी। शीघ्र ही तुगलकशाह ने अपना प्रभाव स्थापित कर लिया एवं युवराज के पद पर आसीन हो गया। इन्हीं परिस्थितियों में दुःखी एवं हताश सुलतान की मृत्यु 20 सितंबर, 1388 ई० को हो गई। एक इतिहासकार के शब्दों में ''फिरोजशाह का शासनकाल संभवतः मध्यकालीन भारत के संपूर्ण इतिहास में भ्रष्टाचार का सबसे बड़ा युग हैं।'' सुल्तान की धर्माधता ने प्रजा के बीच विभेद की गहरी खाई खड़ी कर दी, जिसका दुष्परिणाम राज्य को भुगतना पड़ा। डॉ० आर० पी० त्रिपाठी के शब्दों में, ''विधाता की कुटिल गति इतिहास के इस दुर्भाग्यपूर्ण तथ्य में प्रकट हुई कि जिन गुणों ने फिरोज को लोकप्रिय बनया, वे ही गुण दिल्ली सल्तनत की दुर्बलता के लिए जिम्मेदार सिद्ध हुए।'' परिणामस्वरूप फिरोज की मृत्यु के कुछ बर्षो के बाद ही तुगलकों की सत्ता समाप्त हो गई।

4.9 तुगलकशाह द्वितीय : 1388–1389

फिरोजशाह की मृत्यु के पश्चात तुगलकशाह गयासुददीन तुगलक के नाम से 1388 ई० में गददी पर बैठा। तुगलकशाह एक दुर्बल और अयोग्य शासक था। उसका सारा समय भोग–विलास में व्यतीत होता था। फलतः उसके विरूद्ध विद्रोह की अग्नि सुलगने लगी। मुहम्मद खॉ ने पुनः राजसत्ता हथियाने का प्रयास किया, परंतु परजित होकर भाग खड़ा हुआ। इसी समय जफर खॉ के पुत्र अबू बक्र ने भी

गददी हथियाने का प्रयास किया। उसने अपने सहयोगियों के साथ फरवरी, 1389 ई० में राजमहल पर आक्रमण कर तुगलकशाह की हत्या कर दी एवं स्वयं शासक बन बैठा।

4.10. अबू बक्र 1389–90

फरवरी 1389 ई० में अबू बक्र सुल्तान बन बैठा परन्तु वह भी एक वर्ष से अधिक समय तक शासन नहीं कर सका। उसका सारा समय राजनीतिक षड्यंत्रो एवं कुचक्रों को दबाने में व्यतीत हुआ। मुहम्मद खॉ की निगाहें अब भी दिल्ली पर लगी हुई थी। उसने अपने –आपको समाना में सुल्तान घोषित कर दिया। उसकी सहायता समाना लाहौर, हिसार और हॉसी के अक्तादार कर रहे थे। इनके सहयोग से उसने दिल्ली पर आक्रमण की योजना बनाई। 1390 ई० में अबू बक्र को गददी से उतार कर मुहम्मदशाह स्वयं सुलतान बन बैठा।

4.11. मुहम्मदशाह और हुमायूँ 1390–1394

यद्यजि 1390 ई० में नासिरूददीन मुहम्मदशाह सुल्तान बन गया, तथापि उसकी स्थिति उसके पूर्व के सुल्तानों से अच्छी नहीं थी। प्रारंभ में उसने अपनी शक्ति स्थापित करने का प्रयास किया एवं राजनीतिकशड्यंत्रों पर नियंत्रण कायम किया। उसने जफर खॉ को भेजकर गुजरात में नियंत्रण स्थापित किया। इटावा एवं दोआब के विद्रोहों का भी दमन किया गया। 1394 ई० में उसकी मृत्यु हो गई। उसका स्थान उसके पुत्र हूमायूँ ने लिया, परंतु दो–तीन महीनों के अंदर ही उसकी भी मृत्यु हो गई।

4.12. महमूदशाह 1394–1412

मार्च, 1394 ई० में महमूदशाह दिल्ली का सुलतान बना। उसके समय में सल्तनत की स्थिति और अधिक बिगड़ गई। लगातार विद्रोह एवं षड्यंत्र शर्कीराज्य की स्थापना कर ली। इसी प्रकार गुजरात, मालवा एवं खानदेश में स्वतंत्र राज्यों की स्थापना की गई। दीपालपुर के सूबेदार सारंग खॉ ने समस्त पश्चिमोत्तर सीमा को अपने कब्जे में कर लिया। खोखरों, राजपूताने के राज्यों, मध्यप्रदेश एवं दोआब के शासकों ने भी दिल्ली की अधीनता से अपने–आपको मुक्त कर लिया। महमूदशाह के राज्य की सीमा अत्यंत ही संकुचित हो गई। व्यंग्यपूर्वक यह कहा जाने लगा कि विश्व के सम्राट तुगलकों का राज्य दिल्ली से पालम तक विस्तृत था–''पादशाही शाह–आलम–अज देहली ता पालम'' महमूदशाह को दिल्ली की गददी से अपदस्थ करने का प्रयास भी हुआ। इसी समय एक ऐसी घटना घटी, जिसने साम्राज्य की रही–सही शक्ति एवं प्रतिष्ठा नष्ट कर दी। यह घटना थी मंगोल नेता तैमूरलंग का 1398 ई० में आक्रमण वह दिसम्बर 1398 ई० में दिल्ली पहुँचा। निकम्मे सुलतान ने उसका मार्ग रोकने का कोई प्रयास नहीं किया। 17 दिसम्बर, 1398 ई० को दिल्ली के निकट सुल्तान ने तैमूर का अपनी सेना के साथ सामना किया, परंतु पराजित होकर वह गुजरात भाग गया। दिल्ली पर तैमूर का अधिकार हो गया। उसने नगर को जी–भर के लूटा, आग लगाई, हजारों व्यक्तियों की हत्या कर दी, अनेक को गुलाम बनया तथा इस्लाम–धर्म स्वीकार करने को बाध्य किया। संपूर्ण दिल्ली को नष्ट कर पंद्रह दिनों बाद तैमूर वापस लौटा। लौटते समय भी उसने मार्ग में पड़नेवाले निवासियों पर अमानुषिक अत्याचार किए। तैमूर के जाने के पश्चात वजीर मल्लू खॉ ने सुल्तान को गुजरात से बुलाकर पुनः गददी

पर बैठाया, परंतु सारी शक्ति अपने हाथों में केंद्रित कर ली। क्षुब्ध होकर सुलतान कन्नौज जाकर रहने लगा। मल्लू खॉ सुल्तान की तरह शासन करने लगा। 1405 ई० में मल्लू खॉ की हत्या के पश्चात महमूदशाह को पुनः दिल्ली की गददी सौपी गई, परंतु उससे परिस्थितियों में कोई परिवर्तन नहीं हुआ। 1412 ई० में महमूद की मृत्यु के साथ ही तुगलक–वंश का शासन दिल्ली से समाप्त हो गया।

बोध प्रश्न–

1. क्या दिल्ली की कुतुबमीनार की मरम्मत फिरोज ने करवायी।
2. क्या सांकेतिक मुद्रा का प्रचलन फिरोज तुगलकों ने शुरू की।
3. दोआब में कर वृद्धि मु0बिन तुगलक ने की।

प्रश्न– सांकेतिक मुद्रा के प्रणाली कैसी थी। इसकों 250 शब्द लिखिए।

....
....
....
....

4.13. सारांश

तुगलकों ने करीब एक शताब्दी तक पूरे शान शौकत से शासन किया, परन्तु अंत में उनका साम्राज्य ताश के महल के समान ठह गया। कभी कोई सोचा भी नही जा सकता था कि विशाल साम्राज्य दिल्ली से पालम तक ही सिकुड़न रह जाएगा। परन्तु वास्तववविता यह है। एक–एक कर अनेक प्रान्त उनके नियंत्रण से निकल गए। प्रशासनिक एवं आर्थिक था नष्ट हो गयी।

4.14. शब्दावली

स्वर्गद्वारी	–	कन्नौज के निकट का स्थान
गुलफरोशी	–	फूल की विक्री पर कर
रातिवी	–	कारखाना
जमीरेतरव	–	मनोरंजन कर
माहीफरोशी	–	मछली कर
किभार खाना	–	जुआधारों पर कर
दिवान–ए–कोही	–	कृषि विभाग

4.14. बोध प्रश्न के उत्तर

(1). (√). (√). (X)

(2). (√). (*X*). (√)

इकाई –5

सैय्यद वंश तथा अफगान राज्यों (लोदी एवं सूर) की स्थापना

इकाई की रूपरेखा

5.0. **उद्देश्य**

5.1. **प्रस्तावना–**

5.2. **खिज्र खाँ (1414–1421)ई0**

- **5.2.1** आरंभिक कार्य
- **5.2.2.** सैनिक अभियान एवं विद्रोहियों का दमन
- **5.2.3.** दोआब एवं निकटवर्ती क्षेत्रो मे सैनिक अभियान
- **5.2.4.** पश्चिमी प्रान्तों में विद्रोह एवं दमन

5.3. **मुबारक शाह (1421–1434 ई0)**

5.4 **मुहम्मदशाह (1434–1443 ई0)**

5.5. **अलाउद्दीन आलमशाह (1443–1476 ई0)**

5.6. **बहलोल लोदी राजवंश की स्थापना**

- **5.6.1.** आन्तरिक सुदृढीकरण
- **5.6.2.** विद्रोहो का दमन
- **5.6.3.** सैनिक विजय
- **5.6.4.** जौनपुर में संघर्ष का कारण
- **5.6.5.** हुसैन शाह से संघर्ष

5.7. **सिकन्दर लोदी**

- **5.7.1.** विद्रोहो पर नियन्त्रण
- **5.7.2.** अफगान अमीरों पर नियंन्त्रण
- **5.7.3.** आर्थिक सुधार
- **5.7.4.** धार्मिक नीति
- **5.7.5.** सिकन्दर लोदी का सैनिक अभियान

5.8. **इब्राहिम लोदी 1517–1526ई0**

- **5.8.1** ज्वाला खाँ के विद्रोह का दमन

5.9. **सारांश**

5.10. **शब्दावली**

5.11. **बोध प्रश्न के उत्तर**

5.0. उद्देश्य

- ❖ इस इकाई के माध्यम से अफगान राज्यों के उदय के बारे में ज्ञान प्राप्त होता है।
- ❖ सैय्यदो के शासन काल के सन्दर्भ को व्याख्ति करता है।
- ❖ इस इकाई के माध्यम से लोदी वंश के बारे में जानकारी मिलती है।
- ❖ इस इकाई में 1414 से लेकर 1526 ई0 के मध्य के इतिहास की जानकारी मिलती है।

5.1. प्रस्तावना

मुहम्मद–बिन–तुगलक के शासन काल में आरम्भ हुई, दिल्ली सल्तनत के विघटन की प्रक्रिया उसकी मृत्यु के बाद भी चलती रही। तुगलक वंश के शासन की समाप्ति (1414ई.) तक उत्तरी, पूर्वी एवं दक्षिणी भागों में अनेक स्वतंत्र राज्यों का उदय हो गया। तैमूर के आक्रमण ने विशाल साम्राज्य को धराशायी कर दिया। दिल्ली की गद्दी पर नए राजवंश का शासन स्थापित हुआ। जो सैय्यद वंश के नाम से जाना जाता हैं। तुगलक वंश के अन्तिम सुलतान महमूद की मृत्यु के बाद दिल्ली का सिंहासन खाली हो गया। गद्दी पर अधिकार करने के लिए अमीरों में संधर्ष हुआ। जिसमें खिज्र खाँ विजयी हुआ। उसने दिल्ली पर अधिकार कर एक नए राजवंश की नींव डाली। यही राजवंश सैय्यद के नाम से विख्यात हुआ। सैयद अपने आप को इस्लाम धर्म के संस्थापक पैगम्बर मुहम्मद के वंशज मानते थें। भारत में सैय्यद वंश के सत्ता के संथापक खिज खाँ पैगम्बर से जोड़ता था, परन्तु इसका कोई प्रमाण नही दे पाया। इतना तो सही है। कि खिज्र खाँ के वंशज अरब से आकर भारत में बस गये थे। दिल्ली की गद्दी पर नए राजवंश का शासन स्थापित हुआ पहले सैय्यदों और लोदियों ने 1526ई0 तक शासन किया।1526 ई0 में मुगलो ने लोदी वंश का नाश कर भारत में मुगल सत्ता की नींव रखी।

5.2. खिज्र खाँ 1414–1421 ई0

खिज्र खॉ के पूर्वज अरब से आए थें। उन लोगो।ने दिल्ली के सुल्तानो की सेंवा की अपने लिए प्रशासन में महत्वपूर्ण स्थान बना लिया था।

खिज्र खाँ के पितामह का नाम नासिरूल मुल्क मर्दान दौलत था। उसके दत्तक पुत्र मलिक सुलेमान का पुत्र खिज्र खाँ था। बचपन से ही खिज्र खाँ सैनिक गुणो से परिपूर्ण था। इस लिए उसके पिता की मृत्यु के बाद फीरोजशाह ने उसके पिता के स्थान पर मुल्तान की सूबेदारी सौपी। मगर लाहौर व दीपालपुर के राज्यपाल सारंगखाँ से मतभेद होने के कारण खिज्र खाँ को अपना पद छोड कर मेवात में शरण लेनी पडी। जब तैमूर ने भारत पर आक्रमण किया तो खिज्र खाँ को मुल्तान व दीपालपुर की सुवेदारी सौप दी। इस नई परिस्थिति ने खिज्र खाँ को पुनः अपना राजनीतिक प्रभाव बढाने का मौका प्रदान किया।

जिस समय खिज्र खाँ मुल्तान में अपना प्रभाव बडा रहा था उसी समय वजीर मल्लू इकबाल खाँ दिल्ली और दोआब में अपनी स्थिति मजबूत बना ली और सुल्तान महमुद शाह के नाम से शासन करने में लग गया जो, खिज्र खाँ के लिए

असहनीय था। उसने अजोधन के निकट मल्लू को पराजित किया। 1408 ई0 में उसने दिल्ली पर आक्रमण कर सुल्तान महमूद को सीरी के दुर्ग में धेर लिया, लेकिन वह दिल्ली पर अधिकार नही कर पाया। इसके बाद उसने वैरम खाँ एवं दौलत खाँ को पराजित किया ,आगें बडकर रोहतक व मेवात पर अपना अधिकार कर लिया इसी मघ्य (1412)ई मे सुल्तान की मृत्यु को गयी।दिल्ली के अमीरों ने दौलत खाँ को दिल्ली का शासन सौप दिया। खिज्र खाँ इसी ताक में था उसने दिसम्बर (1413)ई में पुनः दिल्ली पर आक्रमण किया दौलत खाँ अपनी कमजोर स्थिति देखकर खिज्र खॅा के समक्ष आत्मसर्मपण कर दिया। इस प्रकार दिल्ली पर (1414)ई0 में खिज्र खाँ दिल्ली का सुल्तान बन बैठ दौलत खाँ को हिसार फिरोजा भेज दिया गया।

5.2.1 आरभिक कार्य

खिज्र खाँ ने अपने समर्थको।और सरदारो के मध्य विभिन्न पदों एवं उपाधियो का वितरण किया। मलिक कुर्शक को वजीर सैय्यद सलीम सुल्तान का प्रमुख सलाहाकर व सहारनपुर की इक्ता प्रदान की गयी मलिक सरवर शहना–ए–शहर और नायबे दिवान बनाया गया। महमूद के दासो को उनकी पुरानी इक्तांएं सौप दी गयी। खिज्र खॅां अपने को रैयत–ए–आला कहता था।उसने अपने सिक्को पर पहले के तुगलक शासकों का नाम बना रहने दिया। इन सब कार्यो से उसने दिल्ली के आम जनमानस का विश्वास जीत लिया।

5.2.2. सैनिक अभियान एवं विद्रोही का दमन

खिज्र खॅां के गद्‌दी पर बैठने के समय कटेहर ,बदायूॅ, इटावा ,ग्वायलियर, बयाना, कम्पिल्य, नागौर और मेवात में विद्धोहियों की गतिविधियों पढ गयी थीं।

5.2.3. दोआब एवं निकट वर्ती क्षेत्रों मे सैनिक अभियान

खिज्र खाँ ने सबसे पहले दोआब की ओर ध्यान दिया। 1414 –15 ई मे उसने अपने वजीर के नेतृत्व में सेना भेजी कटेहर के जमीदार राय हर सिंह आवंला ने पराजित होकर वार्षिक लगान देना स्वीकर कर लिया। बदायूॅ के अमीर महावत खाँ ने वजीर के सामने आत्म समर्पण कर दिया।इस प्रकार कम्पील्य ग्वालियर, सिओर तथा चंदावर के विद्रोही सामंतो को दंडित किया। शाही सेना अभियान के दौरान जलेसर पर अधिकार किया तथा इटावा के हिन्दू सामंतो को दंडित किया।

5.2.4. पश्चिमी प्रान्तों में विद्रोह और दमन

जिस समय खिज्र खाँ दिल्ली और दोआब में अपनी स्थिति मजबूत बना लिया था।उसी समय सुल्तान का पुत्र मुबारक अपने को प्रभावशाली बना लिया था। 1416 ई में बैरम खाँ तुर्क बच्चा के परिवार के सदस्य के विरूद्ध कर सिन्ध पर अधिकार कर लिया वहॉ शाही सेना भेजी गयी ओर विद्रोहियो को भागने के लिए मजबूर किय गया। 1417–18 ई में सरहिन्द का विद्रोह हुआ, उसको दबाया गया। इस क्षेत्रों पर पूरी तरह से नियत्रण कायम नही हो पाया था।और आये दिन विद्रेही अपना सर उठाते रहते थे। 1421 ई में खिज्र खाँ ने मेवात के विरूद्ध सैनिक अभिमान किया। बहादूर खाँ उसकी अधिनित स्वीकार कर ली। ग्वालियर और इटावा के अभिमान मे।उसे ढेर सम्पति मिली थी। इस अभियान के कुछ समय पश्चात ही मई 1421ई में सुल्तान खिज्र खाँ की मृत्यु हो गयी।

5.3. मुबारक शाह –1421–1434

खिज्र खाँ के देहवसान के बाद उसका पुत्र मुबारक खँा मुबारकशाह के नाम से दिल्ली का सुल्तान बना। खिज्र खॅां ने सुल्तान बनने के बाद से ही मुबारक खाँ के पश्चिम क्षेत्र का प्रशासक नियुक्त किया था।अपनी मृत्यु से पूर्व खिज्र खाँ अपना उत्तराधिकारी बनाया। इसलिए खिज्र खाँ के मृत्यु के पश्चात अमीरों ने मुबारक शाह को निर्विरोध सुल्तान के रूप मे स्वीकार कर लिया अतः मई 1421 ई में मुबारक शाह को दिल्ली की गद्दी पर बैठा अपने पिता के समान उसने भी राज्य के विभिन्न भागों मे विद्रोह और अव्यवस्था का सामना करना पडा। भटिण्डा के विद्रोह को शान्त करने मे सफलता मिली। दोआब का विद्रोह दबा दिया परन्तु वह नमक की पहाडियों के खोक्खरों को दण्ड न दे सका, क्यों कि उसका नेता जसरथ महत्वाकांक्षी सामन्त था और दिल्ली को हस्तगत करने की अभिलाषा रखता था मुबारक ने दिल्ली के खोये प्रान्तों को जीतने का प्रयत्न किया उसके शासन काल में हिन्दू सरदारों का प्रभाव दिल्ली दरवार पर पडा।

19 फरवरी 1434 ई0 को यमुना के किनारें मुबारकाबाद नामक एक नये नगर के निर्माण के निरीक्षण के लिए जाते समय सुल्तान से असंतुष्ट वजीर सखरूल मुल्क के नेतृत्व में हिन्दू एवं मुस्लिम सरदारो ने उसे अपने षडयन्त्र का शिकार बनाय। काजी के पौत्र सिद्ध पाल ने तलवार व भाले से मारकर सुल्तान की हत्या कर दी। फरिश्ता के अनुसार ''वह एक सभ्य राजकुमार था और उसमें प्रशसनीय गुण थे।''

5.4. मुहम्मदशाह 1434–1443

मुबारकशाह के मृत्यु के बाद खिज्र खॅा का नाती और मुबारक शाह का दत्तक पुत्र मुहम्मद शाह अमीरों की सहायता से सिंहासन पर बैठा वजीर सखरूल मुल्क को खानजहाँ की उपाधि प्रदान की गई।। इस नये सुलतान के समय में हिन्दूओं का प्रभुत्व बढा। बयाना अमरोहा नारनोल कोहराम ओर दोआब के कुछ नये परगने सिद्ध पाल सधारन और उनके सम्बन्धियों को प्रदान किया गया सरवर मुल्क पूरे प्रशासन पर अपना प्रभुत्व स्थापित करने के फिराक में था। कमाल–उल–मुल्क नामक ऐ अमीर खिज्र वंश के प्रति वफादार रहा उसने षडयन्त्रकारियो को दण्ड देने का मन बनाया और सुल्तान ने उसका साथ दिया। वजीर सरवर–उल–मुल्क सुल्तान को मारना चाहता था, किन्तु सुल्तान ने उसकी हत्या करवा दी और वजीर का पद कमाल–उल–मुल्क को मिला। सुल्तान दल बन्दी का शिकार हुआ। जौनपुर में इब्राहिम शर्की ने सल्तनत के पूर्वी भागों पर आक्रमण कर दिया। मालवा के महमूद ने दिल्ली के पडोस मे धावा बोला लाहौर एवं सरहिन्द के शासक वहलोल लोदी ने जो मालवा के महमूद खिलजी की राजधानी तक बढ कर सुल्तान की सहायता करने आये यथाशीध्र ही दिल्ली पर अधिकार करने का प्रयत्न किया वह तत्काल असफल तो रहा परन्तु सैय्यद धीरे –धीर उसकी प्रतिष्ठा खो रहे थे। निजामुद्दीन अहमद लिखता है कि ''राज्य के कार्य प्रतिदिन अव्यवस्थित होता गया और वह ऐसी अवस्था मे आ गया कि दिल्ली अव्यव स्थित से बीस करोह (कोस) तक के सभी सरदारों ने सुल्तान की अधिनता अस्वीकार कर दी इन्ही परिस्थितियों में 1445 ई0 में मुहम्मद शाह की मृत्यु हो गयी।

5.5. अलाउद्दीन आलमशाह –1443–1476

मुहम्मद शाह की मृत्यु के बाद सरदारो ने उसके पुत्र को अलाउद्दीन आलमशाह को 1445–1451 ई की उपाधि से इस बिनष्ट राज्य का शासक बनाया। अब केवल दिल्ली शहर एवं अगल वगल के गाँव ही उसकी सल्तनत में बचे थें। उसके बारे में कहा जाता है, कि संसार के बादशाह का राज्य दिल्ली के पालम तक हैं। नया शासक अपने पिता के समान अयोग्य था। इधर बहलोल लोदी सल्तनत की दुर्वलता का लाभ उठाना चाहता था। भाग्यवश नये सुल्तान और वजीर इुसाम खाँ में झगडा हो गया। सुल्तान हुसाम खाँ का वध कराना चाहता था। अतः हुसाम खाँ ने बहलोल लोदी को दिल्ली आमंत्रित किया। अपनी चालों से बहलोल के हुसाम खाँ को अपने मार्ग से हटा दिया। मलिक बहलोल ने सुल्तान के पास इस आशय का सन्देश भेजा कि वह केवल सुल्तान की भलाई के लिए प्रयास रत है।उसने लिखा की चुकि मेरे पिता तुम्हे अपना पुत्र मानते थे और मुझे थोडी जरूरतो के लिए व्यवस्था करने की जरूरत नही है। इस लिए मैं केवल बदायूँ के परगने से सन्तुष्ट हूँ और साम्राज्य तुझे दे रहा हूँ। इस प्रकार अलाउद्दीन ने 1451 ई में दिल्ली का राजसिंहासन बहलोल लोदी को देकर बडे निन्दनीय ढंग से अपने प्रिय स्थान बदायूँ चला गया वहलोल लोदी ने उसे बदायूँ से नही निकाला और वह गंगा के तट पर खैरावाद से हिमालय के तराई तक के क्षेत्र पर 1476 ई तक शासन करता रहा। **प्रो0 निजामी** के अनुसार 37 वर्ष के दुःखद शासन के बाद सैय्यद वंश का अन्त हो गया। यह मुल्तान के राज्य में उदय होकर बदायूँ के राज्य के रूप में समाप्त हुआ। यह राजवंश मध्य कालीन भारतीय इतिहास मे न तो राजनितिक एवं न ही सास्कृतिक दृष्टि से ही कुछ योगदान दे पाया। दिल्ली सामाज्य के विधटन और पुनः निमार्ण की प्रकिया में यह एक अवश्यभावी चरण था।

बोध प्रश्न–

1. खिज्र खाँ लाहौर से आये थे।
2. खिज्र खाँ के मृत्यु के बाद मुबारक शाह सुल्तान बना।
3. अलाउद्दीन आलमशाह का शासन 1445–1451 तक था।

प्रश्न– खिज्र खाँ के आरम्भिक जीवन के सन्दर्भ में 100 शब्द लिखे

....
....
....
....
....
....
....
....
....
....
....

5.6. बहलोल लोदी राजवंश की स्थापना

भारत में लोदी वंश का संस्थापक वहलोल लोदी था। वहलोल लोदी के पितामह मलिक बहराम और पिता मलिक काला था जो दौराला का प्राशासक था जन्म से पहले ही वहलोल लोदी के पिता का देहावसान होगा अतः उसका लालन पालन उसके चाचा मलिक सुल्तानशाह ने किया। सुल्तानशाह ने वहलोल कि शिक्षा–दीक्षा का उचित प्रबंधन किया सुल्तान ने उसे अपना उत्तराधिकारी मनोनीत किया। सुल्तााान शाह के देहावसान के बाद वहलोल ने सरहिन्द में अपनी स्थिति अच्छी बना ली उसने दिल्ली पर महमुद खिलजी के आक्रमण को विफल कर सुल्तान की विशेष कृपा प्राप्त कर ली। सुल्तान अलाउद्दीन आलम शाह के बदायूँ चले जाने पर वहलोल दिल्ली के राजसिंहासन पर 1451 ई. मे विराजमान हुआ।

5.6.1 आतंरिक सुदृदीकरण

बहलोल ने सबसे पहले अपनी स्थिति सुदृढ करने का प्रयास किया। वहलोल को अफगाानों से भय की स्थिति थी। इस लिए उसने अफगान सरदारों को विभिन्न उपाधियॉ एवं जागीर प्रदान की इतना ही नही जब कोई अमीर उससे असंतुष्ट हो जाता था। तो वह उसकी आव भगत में लग जाता और उसके सामने पगड़ी उतार कर रख देता और कहता कि ''यदि तुम मुझे राजपद के लिए अनुपयुक्त समझते हो तो यह काम किसी और को दे दो और मुझे जो काम ठीक समझते हो दे दो''।

वहलोल की इस स्थिति से अफगाानों के आत्माभिमान की तुष्टि हुई और वे वहलोल के कट्टर समर्थक बन गए। डा0 राम प्रसाद त्रिपाठी त्रिपाठी के शब्दों मे।''उसने राजमुकुट के वैभव को नीचा किया। तथा राजा को उच्च सरदार के बराबर बना दिया। अब एक तानाशाह के राज्य के स्थान पर अनेक तानाशाहों का राज्य स्थापित हो गया।

5.6.2. विद्रोहों का दमन

अपनी आतंरिक स्थिति सुद्ढ कर बहलोल ने राज्य में होने वाले उपद्रवों की ओर ध्यान दिया। इसलिए वहलोल को इस क्षेत्रों में अनेक सैनिक अभियान करने। पश्चिमोत्तर सीमांत प्रदेश में सरहिन्द ओर मुल्तान के विद्रोहो को बहलोल ने दबा दिया। मेवात के गवर्नर अहमद खॉ मेवाती पर आक्रमण कर उसे सुल्तान की सत्ता स्वीकार करने के लिए बाध्य किया। सम्भल के सूवेदार दरिया खाँ ने भी वहलोल को अपना राज्य सौप दिया। इस प्रकार अलीगढ, मैनपुरी ,भोगाँव, इटावा, चंदावर के विद्रोही सामन्तों और अधिकारियों को बहलोल की सत्ता स्वीकार करनी पडी।।समस्त क्षेत्र में शान्ति व्यवस्था की गई तथा लगान वसूली के कार्य को सुचारू बनाया गया।

5.6.3. सैनिक विजय

बहलोल ने कुछ सैनिक अभियान विजय प्राप्ति के उददेश्य से भी किये। अहमद यादगार की पुस्तक तारिक–हिन्द–सलातिन अफगानिस्तान से विदित होता है कि बहलोल ने मेवाड के राणा पर विजय प्राप्त कि मेवाड़ की आन्तरिक कमजोरी का लाभ उठाकर उसने चितौड़ पर आक्रमण कर दिया। राणा रामलक और उसके भतीजा छत्रसाक ने अफगानो से कडा संर्धष किया। युद्ध में छत्रसाक मारा गया आैर राणा ने बहलोल से संधि कर ली। बहलोल ने मालवा अभियान किया पर कोई फायदा नही मिला। इसी अभियान के बाद पंजाब के राज्यपाल

तातार खाँ विद्रोह कर दिया। उसका भी हश्र पराजय एवं अधमी मृत्यु से हाथ धोना पडा। सैनिक अभियान में सबसे बडी उपलब्धि जौनपुर अभियान था।

5.6.4. जौनपुर में संघर्ष का कारण

शर्की सुल्तान महमुदशाह का विवाह सैय्यद वंश के अन्तिम सुल्तान अलाउद्दीन शाह की पुत्री वीवी राजी से हुआ था। वह बहलोल को अपदस्थ करके उसके राजपाट को लेना चाहती थी। इस लिए वह अपने पति पर दबाब डालती थी कि वह दिल्ली पर अधिकार कर ले युद्ध का दूसरा कारण दोनो।राज्यों के सरदार भी बहलोल से असंतुष्ट थे और गुप्त रूप से दिल्ली पर आक्रमण के लिए निमंत्रण भी दे रखा था जिससे महमूद शाह दिल्ली विजय की योजना बनाई। संघर्ष का आरंभ शर्की सुल्तान महमूदशाह ने किया बहलोल एवं महमूदशाह की सेना पानीपत के निकट नरेला नामक स्थान पर हुआ। जिसमे शर्की सेना परजित हुई इस अभियान ने बहलोल की वित्त और प्रतिष्ठा को बढा दिया। इतने के बाद शर्की सुल्तान शांत नही हुआ और विद्रोहात्मक कार्यवाही में लग गया कुछ समय बाद दोनों के मध्य एक सन्धि हुई संधि के अनुसार जो सीमा मुबारक शाह और इब्राहिम शाह शर्की के समय मे थी उसे स्वीकार किया गया पर दोनों द्वारा यह संधि लागू नही हो पायी। क्योकि जौनाखाँ ने शम्सावाद छोडने से मना कर दिया। जिससे बहलोल को सैनिक कार्यवाही करनी पडी। इस युद्ध में वहलोल के सेनापति कुतुब खाँ को बन्दी बना लिया गया। अतःदोनो के मध्य पुनः सन्धि हुई

5.6.5. हुसैन शाह से संघर्ष

1457ई0 ू में महमूदशाह के म्त्यु के बाद मुहम्मदशाह नया सुल्तान बना यह एक अविवेकी और अत्याचारी शासक था। जिससे जौनपुर की आन्तिरिक स्थिति खराब हो गयी। अतः हुसैन शाह ने मुहम्मदशाह की हत्या करवाकर 1458ई0 में सत्ता पर अधिकार कर लिया। जौनपुर के राज्य अनवरत संधर्ष से परेशान होकर दोनो ने चार वर्षीय युद्ध बन्दी की नीति अपना ली। इस अवधि में हुसैनशाह अपनी शक्ति में विस्तार किया और वहलोल अन्य समस्याओं का निपटारा किया। इधर शर्की सुल्तान मेवात इटावा, अलीगढ,वयाना को अपने प्रभाव में ले लिया। इधर बहलोल की स्थिति दुर्बल हो गयी। उसने मालवा से सहायत मांगी पर उसने कोई सहायता नही किया बाध्य होकर उसने सुल्तान से कहा कि दिल्ली के आस पास का छोडकर पूरा राज्य ले लो पर सुल्तान मानने को तैयार नही हुआ बाध्य होकर वहलोल ने हिम्मत से काम लिया और अचानक हुसैनशाह पर आक्रमण कर दियां जिससे हुसैनशाह को पराजित होकर भागना पडा। 1478 ई0 के बाद हुसैन शाह की शक्ति कम हो गयी। 1479 ई0 में हुसैन शाह ने दिल्ली पर आक्रमण कर दिया। इस आक्रमण को वहलोल ने विफल कर दिया। इधर वहलोल ने शम्सावाद ,कम्पिल , पटियाली , कोयल , आदि स्थानों पर अधिकार कर हुसैन शाह का पीछा जौनपुर तक किया और वह भागकर कन्नौज चला गया अन्ततोगत्वा वहलोल जौनपुर को सल्लतनत मे मिला लिया और वहलोल का पुत्र बारबकशाह जौनपुर का राज्यपाल बना।

यह बहलोल की एक बडी उपलब्धि थी। जुलाई 1489 ई0 मे मिलावली मे वहलोल लोदी की मृत्यु हो गयी। वहलोल अपने साहस और परिश्रम के बल पर सरहिन्द के राज्यपाल से दिल्ली का सुल्तान बन सका

5.7. सिकन्दर लोदी

बहलोल लोदी अपने तीसरे पुत्र निजाम खाँ को अपना उत्तराधिकरी बनाना चाहता था, परन्तु अफगान अमीर सुल्तान के मनोनयन नही बल्कि निर्वाचन में विश्वास रखते थे।उस समय गद्दी के तीन दावेदार थें। पहला बारबकशाह जो जौनपुर का शासक था। दूसरा बहलोल का तीसरा पुत्र निजाम खॅा तथा तीसरा बहलोंल का पौत्र आजम हुमायूँइनमें से सिर्फ निजाम ही सुल्तान के नायव के रूप में वहलोल की मृत्यु के समय दिल्ली में था। निजाम को अमीरों का समर्थन प्राप्त था लेकिन ईसा खाँ लोदी इसका विरोध कर रहा था क्योकि निजाम की माता एक हिन्दू स्त्री थी जिससे सारे अमीर ईसा खाँ के विरूद्ध होकर सभी लोगों ने निजाम खाँ को सिकन्दर लोदी के नाम से जुलाई1489 ई0 को दिल्ली की गद्दी पर बिठाया।

5.7.1. विद्रोहो पर नियन्त्रण

आन्तरिक स्थिति मजबूत बनाने के लिए सबसे पहले अपने प्रतिद्वंदियों को समाप्त करने की योजना बनाई। इसमे सबसे पहले रापरी जहाँ आलम खाँ अपनी शक्ति वढा रहा था, व चंदावर का दुर्ग सिकन्दर ने धेर लिया आलम खाँ पराजित होकर ईसा खाँ के यहाँ शरण ली इन दोनो का आपास में मिल जाने से सिकन्दर कमजोर पडने लगा। इसलिए सिकन्दर ने कूटनीति का सहारा लेकर आलम खाँ को क्षमा देकर इटावा का सूबेदार बना दिया। फलतः ईसा खाँ अकेला पड गया युद्ध में पराजित हुआ थोडे दिन बाद उसका देहावसान हो गया। कालपी का शासक आजम हुमायूॅ था। सिकन्दर ने कालपी पर आक्रमण कर दिया जहॉ आजमॅ हुमायूँपराजित हुआ अब कालपी महमुद खाँ लोदी को दे दिया गया।

सिकन्दर ने बारबक शाह जो स्वतन्त्र रूप से जौनपुर में शासन कर रहा था। अपने प्रभाव में लाने का प्रयास किया।इधर बारबल शाह जौनपुर के पदच्युत सुल्तान हुसैन शाह के बहकावे में आ गया। और सिकन्दर और बारबक के झगडे का लाभ उठाकर जौनपुर पर अधिकार करना चाहता था। अतः वाध्य होकर सिकन्दर ने बारबक पर आक्रमण कर दिया। कन्नौज के निकट दोनों सेनाओं में मुठभेड हुई। जिसमें बारबक शाह को पराजय का सामना करना पडा और वह आत्मसमर्पण कर दिया सिकन्दर पुनः उसे जौनपुर का शासक बना दिया। सिकन्दर लोदी जिस समय जथरा व बयाना के अभियान पर था उसी समय जौनपुर में उपद्रव आरम्भ हो गया। सिकन्दर ने वयाना व जथरा से वापस आने के बाद वह जौनपुर पर बचगोती राजपूतों के अ्रकमण की सूचना मिली सिकन्दर ने विद्रोहियों से निपटने के लिए स्वयं आगे बडा सिकन्दर की आगमन की सूचना पाकर जोगा भाग खडा हुआ। सुल्तान ने हुसैन शाह शर्की पर भी आक्रमण कर उसे भागने पर मजबूर कर दिया। जौनपुर में बारबक शाह को पुनः प्रतिस्थापित कर दिया। लेकिन विद्रोहीसामन्तों एवं जागीदारों ने उसे मार भगाया बारबक शाह को गिरफ्तार कर लिया गया। अतः सिकन्दर ने आजम हुमायूॅ और काला पहाड को जौनपुर भेजा अब जौनपुर पर सिकन्दर का अधिकार हो गया।

5.7.2. अफगान अमीरों पर नियन्त्रण

सिकन्दर ने अफगान अमीरें पर नियन्त्रण रखने के लिए गुप्तचरों को बहाल किया। सिकन्दर ने अफगान अमीरों के प्रति अपनायी गयी नीति संतुलित थी। सुल्तान की शक्ति एवं प्रतिष्ठा को बढाने के लिए वह प्रतिदिन राजसिहासन पर बैठने लगा। राज्य के विभिन्न भागों में शाही फरनामों के स्वागत के लिए नियम बनाये गये। अमीरों को अपने जागीर का हिसाब नियमित रूप से देना पडता था।

इससे अमीरों पर सुल्तान का कडा नियन्त्रण स्थापित हुआ। वस्तुतः सिकन्दर ने अफगान राजत्व के सिद्धान्त को नया स्वरूप प्रदान किया

5.7.3. आर्थिक सुधार

सिंकन्दर ने आर्थिक स्थिति सुधारने का प्रयास किया। भूमि की नाप के अनुसार लगान की राशि तय की गयी एवं नियमित समय से वसूलने का प्रबन्ध किया गया। अनाज से चुंगी हटा दी गयी। जिससे अनाज का भाव गिर गया। सुल्तान व्यक्तिगत रूप से हर रोज बाजार की मूल्य सूची देखता था। उसने गजे सिकन्दरी नामक एक प्रमाणिक माप बनवायी जो मुगल काल तक चलती रही।

5.7.4. धार्मिक नीति

वह कट्टर सुन्नी मुसलमान था। उसने उलेमाओं को प्रसन्न करने के लिए हिन्दुओं को राजकीय पद दिये गये , परन्तु धार्मिक मामलों मे उसने असहिष्णुता की नीति अपनायी जैसे–उसने थानेश्वर के तालाव में स्नान करने पर हिन्दुओ द्वारा रोक लगा दी। नगर कोट के मंदिर की मूर्तियों को तोडकर उन्हे कसाईयों को मांस तौलने के लिए दे दिया। ''हिन्दुओं के धार्मिक स्थलों के महत्व को कमकर दिया गया एवं धार्मिक परंपराओं में हस्तक्षेप किया गया। सिंकन्दर की इस धर्मान्धता के पीछे जो भी राजनीतिक कारण रहे हो लेकिन इस नीति से सल्तनत का अहित हुआ। सुल्तान ने निष्पक्ष एवं शीध्र न्याय की व्यवस्था की एवं डाक व्यवस्था में सुधार किया उसके समय में आगरा को राजधानी बनाने का गौरव प्राप्त हुआ। सिकन्दर ने राज्य मं शान्ति व्यवस्था बनाए रखने का भी प्रयास किया। राजपथ और व्यापारी मार्ग पूर्णतः सुरक्षित थें। राज्य की ओर से गरीब और असहाय आम जन को नित्य भोजन बांटा जाता था। उसने कुछ अनैतिक प्रथाओं जैसे– बहराइच के जलूसो, स्त्रियों के मकबरों पर जाने तथा शीतला की पूजा पर प्रतिबन्ध लगा दिया। उसके के समय में लेखकों कलाकारों विद्वानो।को संरक्षण एवं प्रश्रय प्रदान किया गया।

5.7.5. सिकन्दर लोदी का सैनिक अभियान

अपनी आंतरिक स्थिति मजबूत करने के लिए उसने राज्य की सीमा का विस्तार करने की नीति अपनायी। सिंकन्दर ने हुसैन शाह शर्की द्वारा जौनपुर पर अधिकार करने का प्रयास को विफल कर दिया था लेकिन हुसैन शाह ने अपना प्रयास बन्द नही किया। फलतः सेना का गठन कर जौनपुर के स्थानीय जमीदारों के प्रोत्साहन पर वह बिहार से निकलकर बनारस के निकट पहुच गया। सिकन्दर आगे बडा और बनारस के निकट हुसैन शाह को बुरी तरह पराजित कर दिया। हुसैन शाह विहार चला गया, सिकन्दर बिहार तक पीछा किया। अतः वह भागलपुर चला गया जो उस समय बंगाल के सुल्तान के नियन्त्रण मे था। सिकन्दर ने इन दोनो।को पराजित कर जौनपुर एवं बिहार पर अधिकार कर लिया।

अलाउद्दीन हुसैनशाह बंगाल का सुल्तान था। सिकन्दर के बढते प्रभाव को रोकने के लिए निश्चिय किया। सिकंन्दर ने बंगाल की ओर बढना जारी रखा मार्ग में उसने तिरहुत पर आक्रमण किया। वहाँ के राजा ने अधीनता स्वीकार कर ली अलाउद्दीन ने अपने पुत्र दानियल के नेतृत्व में एक सेना भेजी सिकन्दर की सेना देखकर दानियाल ने लोदी सुल्तान से सन्धि कर ली। सन्धि के अनुसार वह दिल्ली सल्तनत के शत्रुओं को अपने यहाँ शरण नही देगा दोनो।लोग एक दूसरे के क्षेत्रों मे आक्रमण नही करेगें इसके साथ–साथ अलाउद्दीन ने बिहार तिरहुत और

सारण पर सिकन्दर की अधिसत्ता स्वीकार कर ली। इससे सिकन्दर की शक्ति और प्रतिष्ठा बढ़ी।

सिकन्दर का महत्वपूर्ण अभियान ग्वालियर के विरूद्ध था। इसी बीच धौलपुर के पराजित शासक को शरण देकर मानसिंह ने सिकन्दर की नाराज कर दिया। 1503 ई0 में उसने ग्वालियर के निकट धेरा डाला राय मानिक देव ने सिकन्दर से समझौता कर लिया। उसने विद्रोहियों को अपने यहाँ से निकाल दिया तथा अपने पुत्र को सिकन्दर ने विक्रमजीत को सुल्तान के पास वंधकर के रूप में भेजा। इससे प्रसन्न होकर सिकन्दर ने मानिक देव को क्षमा कर धौलपुर का राज्य उसे वापस कर दिया। 1506–7 ई0 में उसने अनंतगढ के दुर्ग पर अधिकार कर लिया चन्देरी पर भी अपना नियन्त्रण स्थापित किया। रणथम्भौर के शासक ने भी सिकन्दर की अधिसत्ता स्वीकार की ली। सिकन्दर के इस सैनिक अभियान से सल्तनत की सीमा में कोई महत्वपूर्ण वृद्धि नही हुई लेकिन इससे सिकन्दर की प्रतिष्ठा बडी इस निरन्तर सैनिक जीवन ने उसका स्वास्थ नष्ट कर दिया। मालवा पर आक्रमण करने क उद्देश्य से वह बयाना गया और वहाँ से लौट कर बीमार पड गया 21 नवम्बर 1517 को सिकन्दर लोदी रोहिणी यानि गले के कैंसर से मर गया।

असाधरण शारीरिक सौंदर्य तथा वाक्यपटुता से सम्पन्न कविता संगीत और विनोदप्रिय सिकन्दर लोदी कुछ मामलो में मध्यकालीन भारत का अत्यन्त असाधरण प्रतिमा वाला व्यक्ति था। उसने भारत में अफगान राजतन्त्र के एक नवीन युग का सृजन किया और मुल्तान पद की महिमा और प्रतिष्ठा को भली भांति उँचा उठाया।

5.8. इब्राहिम लोदी–1517–1526

1517ई0 में सिकन्दर लोदी के पश्चात इब्राहिम लोदी सुल्तान बना। गृहयुद्धों के खतरे से बचने के लिए सम्पूर्ण राज्य को सिकन्दर के पुत्रों इब्राहिम लोदी एवं जलाल खाँ मे।विभक्त कर दिया। इब्राहिम दिल्ली का सुल्तान एवं जौनपुर का राज्य जलाल खाँ को मिला। इस व्यवस्था के तहत दिल्ली व जौनपुर पर अफगान अपना नियन्त्रण बनाये रखे।

5.8.1. जलाल खाँ विद्रोह का दमन–

इब्राहिम राज्य के विभाजन के पक्ष में नही था। अफगान अमीर अपनी भूल मानकर इस व्यवस्था को समाप्त करना चाहते थें। इसलिए जलाल खाँ को दिल्ली बुलाने के लिए हैवत खाँ को भेजा, परन्तु जलाल आशंकित होकर दिल्ली नही आया और अपने को स्वतन्त्र सुल्तान घोषित कर दिया और उसने अवध एवं आगरा पर आक्रमण कर दिया। इब्राहिम ने जलाल को परास्त कर उसकी हत्या करवा दी। इब्राहिम सैनिक विजय की अभिलाषा रखता था। इसलिए ग्वालियर पर आक्रमण कर विक्रमजीत को आत्म समर्पण करना पडा। इब्राहिम मेंवाड के राणा सांगा पर भी आक्रमण किया परन्तु मेवाड पर वह आधिपत्य स्थापित नही कर पाया।

इब्राहिम का अधिकांश समय विद्रोहों के दमन में लगा। इस्लाम खाँ के विद्रोह को सुल्तान ने बल पूर्वक दवा दिया। इब्राहिम के अत्याचारों से नाराज होकर बिहार के सुवेदार दरिया खाँ लोहानी ने विद्रोह कर दिया। उसने बिहार से सम्भल तक के क्षेत्र पर स्वतंत्र सत्ता कायम कर ली। उसे दबाने के लिए खाने

जहाँ नूहानी को भेजा गया। वह भी विद्रोहियो से मिल गया इब्राहिम ने सहायता के लिए पंजाब के सुवेदार दौलत खाँ को दिल्ली बुलवाया परन्तु वह इब्राहिम के भय से उसने बहाना बना दिया। इसी बीच सुल्तान के आक्रोस से बचने के लिए काबूल मुगल सरदार बाबर से सहायता की याचना की। इसी मध्य राणा सांगा का आमंत्रण भी आ गया अतः बाबर भारत अभियान पर निकल पड़ा पंजाब पर अधिकार करता हुआ वह पानीपत के मैदान में आ डटा। 21 अप्रैल 1526 ई0को बाबर और इब्राहिम में प्रसिद्ध पानीपत का प्रथम युद्ध हुआ। इब्राहिम युद्ध में मारा गया। दिल्ली सल्तनत के तहत प्रथम अफगान राज्य समाप्त हो गया तथा भारत में मुगलों की सत्ता स्थापित हो गयी।

बोध प्रश्न–

1. लोदी वंश का संस्थापक बहलोल लोदी था
2. सिकन्दर लोदी ने सिकन्दरी गंज चलवाया।
3. पानीपत का प्रथम युद्ध 1526 ई0 में हुआ

प्रश्न– सिकन्दर लोदी की धार्मिक नीति के बारे में 100 शब्द लिखिए–

....
....
....
....
....
....

5.9. सारांश

इब्राहिम लोदी दिल्ली सल्तनत का अन्तिम सुल्तान था। उसकी मृत्यु के साथ ही सत्ता मुगलों के हाथों में चली गयी। इब्राहिम एक बहादूर व दक्ष सेनापति था। वह युद्ध से कभी भयभीत नहीं होता था। वह दिल्ली का पहला सुल्तान था, जो रणभूमि में वीर गति को प्राप्त हुआ। वह दिल्ली का पहला सुल्तान था जो अफगान अमीरों की उच्चश्रृखंल प्रकृति के कारण इब्राहिम के साथ ही दिल्ली सल्तनत का करीव 300 वर्षो का शासन समाप्त हो गया।

5.10. शब्दावली

5.11. बोध प्रश्न के उत्तर

1. (×) 2. (√) 3. (√)

बोध प्रश्न 2 का उत्तर

1. (√) 2. (√) 3. (×)

MAHY-113 (भाग–1)

भारत का राजनैतिक इतिहास :
घटनायें एवं प्रक्रियाएँ
(1206 ई0–1947ई0)

उत्तर प्रदेश राजर्षि टण्डन मुक्त
विश्वविद्यालय, प्रयागराज

खण्ड – 3

बाबर (1483–1530)

इकाई – 1 **133–140**

बाबर का व्यक्तित्व एवं सफलताएँ

इकाई – 2 **141–150**

हुमायूँ (1530–40 तथा 1555–56)

इकाई – 3 **151–160**

अकबर और उसकी नीतियाँ 1556–1605

इकाई – 4 **161–164**

जहाँगीर और नूरजहाँ 1605–1627

इकाई – 5 **165–171**

शाहजहाँ 1628–58

उत्तर प्रदेश राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय उत्तर प्रदेश प्रयागराज

परामर्श समिति **MAHY-113**

प्रो0 सीमा सिंह — कुलपति, उ0प्र0 राजर्षि टण्डन विश्वविद्यालय, प्रयागराज

डा0 पी0पी0 दूबे — कुलसचिव, उ0प्र0 राजर्षि टण्डन विश्वविद्यालय, प्रयागराज

पाठ्यक्रम निर्माण समिति (अध्ययन बोर्ड)

प्रो0 संतोषा कुमार — आचार्य इतिहास एवं प्रभारी निदेशक, समाज विज्ञान विद्याशाखा, उ0प्र0 राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, प्रयागराज

प्रो0 हेरम्ब चतुर्वेदी — आचार्य एवं पूर्व विभागाध्यक्ष, इतिहास विभाग, इलाहाबाद विश्वविद्यालय, प्रयागराज

प्रो0 संजय श्रीवास्तव — आचार्य, इतिहास विभाग, इलाहाबाद विश्वविद्यालय, प्रयागराज

डॉ0 सुनील कुमार — सहायक आचार्य, प्राचीन इतिहास, समाज विज्ञान विद्याशाखा उ0प्र0 राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, प्रयागराज

लेखक

डॉ सेराज मोहम्मद — आचार्य, इतिहास, श्री देवसुमन उत्तरखण्ड विश्वविद्यालय, गढ़वाल, उत्तराखण्ड

सम्पादक

प्रो0 हेरम्ब चतुर्वेदी — आचार्य एवं पूर्व विभागाध्यक्ष, इतिहास विभाग, इलाहाबाद विश्वविद्यालय, प्रयागराज (इकाई 1–5)

पाठ्यक्रम समन्वयक

डॉ0 सुनील कुमार — सहायक आचार्य, प्राचीन इतिहास, समाज विज्ञान विद्याशाखा उ0प्र0 राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, प्रयागराज

© उ0प्र0 राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, प्रयागराज 2021

ISBN : 978-93-94487-88-8

सर्वाधिकार सुरक्षित। इस सामग्री के किसी भी अंश को उ0प्र0 राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय की लिखित अनुमति के बिना किसी भी रूप में, मिमियोग्राफी (चक्रमुद्रण) द्वारा या अन्यथा पुनः प्रस्तुत करने की अनुमति नहीं है। पाठय सामग्री में मुद्रित सामग्री के विचारों एवं आकड़ों आदि के प्रति विश्वविद्यालय, उत्तरदायी नहीं है।

इकाईः—1.

बाबर का व्यक्तित्व एवं सफलताएँ

इकाई की रूप रेखा

1.0 उद्देश्य

1.1 प्रस्तावना

1.2 बाबर की जीवन परिचय

1.3 बाबर का बाल्यावस्थाएवं चुनौतियाँ

1.4 भारत विजय की योजना

1.5 बाबर का भारत पर विजय अभियान

1.6 पानीपत का प्रथम युद्ध

1.7 खानवा का युद्ध

1.8 चन्देरी की विजय

1.9 धाघरा का युद्ध

1.10 सारांश

1.11 अभ्यासार्थ प्रश्न

1.12 संदर्भ ग्रन्थ

1.0 उद्देश्य

इस इकाई में बाबर के व्यक्तित्व एवं कृतित्व के बारे में विस्तृत जानकारी है। उसके बाल्यावस्था से लेकर भारत का विजय अभियान तक की घटनाओं की चर्चा की गई है। उसके करिश्माई व्यक्तित्व के साथ—सात उसके अद्भुत सैनिक क्षमता की व्यवस्थता की गई है। इस इकाई के अध्ययन के बाद आप जान सकेंगेः—

- ❖ बाबर की जीवन परिचय
- ❖ बाबर का बाल्यावस्थाएवं चुनौतियाँ
- ❖ बाबर की दृढ़ता एवं निडरता
- ❖ बाबर एक महान योद्धा एवं नेतृत्व कर्ता के रूप मे

- ❖ बाबर का सैनिक अभियान एवं भारत विजय
- ❖ मुगल राज्य के संस्थापक के रूप में

1.1 प्रस्तावना

बाबर एक महान योद्धा, संगठन कर्ता एवं अदभुत व्यक्तित्व का मालिक था। उसके अन्दर वीरता, एवं निडरता कूट–कूट कर भरी हुई थी। विषम से विषम परिस्थिति में भी वह साहस नही खोता था। धैर्य एवं साहस उसकी सबसे बड़ी खूबी थी। हर परिस्थिति का अदम्य साहस और पूरी धैर्यता से सामना किया। अपनी इन्ही गुणों के भारत में मुगल राज्य स्थापित करने में सफलता प्राप्त की। बाल्यवस्था से चुनौतियाँ एवं विषम परिस्थियों ने उसे अन्दर से दृढ़ एवं निडर बना दिया था। वह अब हर परिस्थिति का सामना आसानी से करता आ रहा था। भारत विजय के समय उसे अनेक विपररित परिस्थितियों का सामना करना पड़ा परन्तु उसने पूरी दृढ़ता और साहस से परिस्थिति को अपने अनुकूल बना लिया। उसके व्यक्तित्व में अद्भुत गुण थे। इसीकारण विपरीत परिस्थितियों में भी उसके सैनिक उसके साथ बने रहे। अनेक इतिहासकारों ने बाबरी चरित्रिक गुणो, सैन्य प्रतिभा, प्रशासकीय एवं कलात्मक अभिरूचि की भूरी–भूरी प्रसंशा की।

1.2 बाबर का जीवन परिचय

बाबर का मूलनाम जहीरूद्दीन मुहम्मद बाबर था। उसका जन्म 14 फरवरी 1483 ईव को फरगान में हुआ था। उसके पिता का नाम शेख उमर मिर्जा एवं माता का नाम कुतुलुग निगार खानम था। बाबर अफने पिता की ओर से तैमूर लंग की तथा माता की ओर से चंगेज खां की नस्ल से मिलती है। इस प्रकार उसके शरीर में विश्व के दो महान योद्धाओं का रक्त समाहित था, वीरता, निडरता, निर्भिकता एवं दृढ़ता जैसी विशेषताएं उसे विरासत में मिली थी। समय और परिस्थितियों को अपने अनुकूल बनाने की उसमें अद्भुत छमता थी।

1.3 बाबर का बाल्यावस्था एवं चुनौतियाँ

बचपन में यद्यपि, उसे समुचित शिक्षा प्राप्त नहीं हो पाई थी फिर भी उसने स्वयं के प्रयासों से मातृ भाषा तुर्की और फारसी भाषा पर पूर्ण अधिकार प्राप्त कर लिया था। राजनैतिक महत्व की घटनाओं, शासन व्यवस्था सैन्य व्यवस्था संम्बन्धी विषयों में उसकी गहरी अभिरूचि रही। दुर्भाग्य से मात्र 11 वर्ष की अल्पायु में उसके पिता की आकास्मिक मृत्यु ने उसे मंझधार में ला खड़ा कर दिया। उसके संग–सम्बन्धी सहायता के बजाय उसका राज्य हड़पने की ताक में थे। बाबर ने इस विषम परिस्थिति का दृढ़ता से सामना किया और अदभुत साहस का परिचय दिया। परिस्थिति वश उसको अपना मातृभूमि छोड़कर भारत की ओर मुड़ना पड़ा।

जिस समय बाबर सिंहासन पर बैठा उसे सबसे अधिक खतरा अपने सगे–सम्बन्धियो से था। उसके सम्बंधी उसके राज्य पर आक्रमण करने की योजना बना रहे थे। अतः बाबर के सामने दो स्पष्ट लक्ष्य थे–अपने राज्य की सुरक्षा एवं उसका विस्तार। सर्वप्रथम उसने फरगान की सुरक्षा की तरफ ध्यान दिया। अपने राज्यभिषेक के पश्चात् उसने अपने चाचा तथा समरकन्द के शासक अहमद मिर्जा से समझौता का प्रयास किया, परन्तु बाबर का यह प्रयास असफल सिद्ध हुआ।

अहमद मिर्जा एवं महमूद खां ने फरगान पर आक्रमण जारीर रखा, परन्तु शीघ्र ही परिस्थिति वश विवश होकर उन्हें समरकन्द और ताशकन्द लौट जाना पड़ा। बाबर के लिए यह सौभाग्य सूचक था। उसका राज्य बाह्य आक्ररमणों के खतरों से बच गया। बाबर ने इस सुअवसर का लाभ उठाकर अपनी आतंरिक स्थिति सृदृढ़ की। प्रशासनिक व्यवस्था में आवश्यक सुधार किए गए तथा प्रभावशाली सरदारों एवं प्रजा को अपना सर्मथक बनाने का प्रयास बाबर द्वारा किया गया।

बाबर तैमूर की राजधानी समरकन्द पर अधिकार करना चाहता था। इसपर अधिकार करने से पश्चिम की ओर से फरगान राज्य सुररक्षित हो जाती। इसके अतिरिक्त समरकन्द पर अधिकार हो जाने से बाबर की प्रतिष्ठा एवं शक्ति में वृद्धि हो जाती। 1496–97 में उसने दो बार समरकन्द पर आक्रमण किया। उसका पहला प्रयास विफल हुआ परन्तु दूसरी बार वह समरकन्द पर अधिकार करने में सफल हुआ। दुर्भाग्यवश समरकन्द पर 1497ई0 की विजय अस्थायी सिद्ध हुई। समरकन्द पर उसने करीब तीस महिनों अधिकार जताए। रखा इसीबीच फरगान के विद्रोह की सूचना प्राप्त कर वहां के विद्रोह को दबाने के लिए वह फरगान गया। समरकन्द से हटते ही बाबर की सत्ता वहा से समाप्त कर दी गई। इधर फरगान की राजधानी अदिश्रात पर भी विद्रोहियों ने कब्जा कर लिया। बाबर के हाथ से समरकन्द के साथ–साथ फरगान का राज्य भी निकल गया। अब उसका अधिकार केवल खोजन्द नामक छोटे से पहाड़ी प्रदेश पर बना रह सका।

1500–01 ई. में बाबर ने उजबेग नेता शैवनी खां को पराजित करर समरकन्द पर अधिकार कर लिया। वही उसने अफनी चेचेरी बहन आयशा से शादी भी कर ली। दुर्भाग्य से न तो बाबर की शादी और नही समरकन्द की विजय स्थायी हुई। आयशा ने बाद में उसका साथ छोड़ दिया। शैवानी खां ने भी कुछ ही महिनों के अन्दर सर–ए–पुल नामक स्थान पर हुए युद्ध में बाबर को पराजित कर उसे समरकन्द से भागने पर मजबूर कर दिया। उसे पुनः कटीली राहों पर चलने के लिए मजबूर होना पड़ा।

1.4 भारत विजय की योजना

1514–25 तक बाबर काबुल का शासक बना रहा। बार को जीवन के ये वर्ष अत्यन्त ही महत्वपूर्ण थे। भारत की भावी विजय की योजना एवं तैयारिया इसी दौरान हुई। कठिनाइयों एवं विपरीत परिस्थियों से जूझते–जूझते बाबर की राजनीतिक सूझबूझ अत्यधिक बढ़ गई। उसने राज्य की व्यवस्था करने एवं सैनिक संगठन का गुण सीख लिया था। निरंतर युद्धो में लिप्त रहने के कारण वह मध्य. एशिया की लड़ाकू जातियों के युद्ध प्रणाली से पूरी तरह परिचित हो गया। उजबेगों से उसने 'तुलुगमा' ईरानियों से बंदूकों का प्रयोग, तुर्कों से घुड़सवारी तथा मंगोलों और अफगानों से व्यूह–रचना सीखी। सैनिक संचालन के इन गुणों से बाबर को भारत आशातीत सफलता मिली। काबुल में ही बाबर को उस्ताद ली और मुस्तफा नामक तोपचियों की सेवाएं प्राप्त हुई। जिन्होंने बाबर की तोपखाने को सेना का सबसे महत्वपूर्ण विभाग बना दिया। काबुल में रहकर बाबर भारत की रानीतिक गतिविधियों पर भी निगाह रखे हुए था। यही पर उसे दौलत खां, आलमखां और राणा सांगा का भारत पर आक्रमण करने कै निमंत्रण मिला। भारत की राजनीतिक स्थिति ने बाबर को भारत पर आक्रमण करने की प्रेरणा दी।

1.5 बाबर का भारत पर विजय अभियान

बाबर ने 1526–30 ई0 के मध्य चार महत्वपूर्ण युद्ध लड़े। सैन्य संख्या कम होने के बावजूद उसने चारों युद्ध विजय की और भारत में एक नए वंश 'मुगल की स्थापना करने में सफलता पाई। बारक के सैनिक अभियान के समय भारत अनेक छोटे–छोटे राज्य में विभक्त था तथा उनके अन्दर निरंतर प्रतिद्वन्दिता और शत्रुता बनी हुई थी। उससमय के प्रमुख राज्य थे दिल्ली, गुजरात, मालवा, बंगाल, मेवाड़, पंजाब बहमनी राज्य एवं विजयनगर साम्राज्य।

1.6 पानीपत का प्रथम युद्ध

पंजब विजय करने के पश्चात् बाबर दिल्ली की ओर बढ़ा। इब्राहिम लोदी उसका मुकाबला करने के लिए पंजाब की ओर प्रस्थान किया। दोनों की सेनाएं पानीपत के मैदान में एक–दूसरे के सम्मुख पहुँच गयी। 21 अप्रैल 1526 को प्रातः ही दोनों सेनाओं की मुठभेड़ हुई। इब्राहिम की सेना तेजी से आगे बढ़ा परन्तु बाबर की सुरक्षा पंक्ति को देखकर उनमें घबड़ाहट फैल गगई। बाबर ने मौके का लाभ उठाकर इब्राहिम पर चारों ओर से आक्रमण कर उसे घेर लिया। बाबर के तीरंदाजों और तोपचियों उसकी तुलुगमा पद्धति नने इब्राहीम की सेना के पांव उखाड़ दिए। इब्राहिम लोदी युद्ध क्षेत्र में ही करीब पंद्रह हजार सैनिकों के साथध मारा गया। इब्राहीम की बाकी सेना भाग खड़ी हुई। इसप्रकार कुछ ही घंटो के युद्ध ने ही भारत का भाग्य परिवर्तित कर दिया। बाबर अपनी आत्म कथा तुजुक–ए–बाबरी में लिखता है,"सर्वसक्तिमान परमात्मा की अपार अनुकंपा से यह कठिन कार्य मेरे लिए सुगम बन गया और वह विशाल सेना आधे दिन में ही मिट्टी में मिल गई।"

पानीपत के युद्ध ने भारत के भारत के भाग्य का तो नही किन्तु लोदी वंश के भाग्य का निर्णय कर दिया। अफगानों की शक्ति समाप्त नही हुई लेकिन दुर्बल हो गई। युद्ध के पश्चात् बाबर ने दिल्ली तथा आगरा पर ही नही बल्कि धीरे–धीरे लोदी–साम्राज्य के सभी भागों पर आक्रमण कर लिया। उसने इस युद्ध की विजय से भारत में मुगल वंश की नींव डाल दी।

1.7 खानवा का युद्ध

पनीपत के पश्चात् बाबर द्वारा भारत में लड़े गये युद्धो में सबसे महत्वपूर्ण खानवा का युद्ध था। पानीपत के युद्ध में विजय ने बाबर को दिल्ली और आगगरा का शासक बना दिया, गुल राज्य की भारत में नींव रख दी, वही खानुआ के युद्ध नने बाबर के प्रबलतम शत्रु राणा सांगा का अंतकर बाबर की विजडयों को स्थायित्व प्रदान किया। राणा सांगा ने बाबर पर आक्रमण करने के पूर्व अपनी स्थिति सुदृढ़ की। उसकी सहायता के लिए हसन कां मेवाती, महमूद लोदी तथा अनेक राजपूत सरददार अपनी–अपनी सेना के साथ आ पहुँचे। इससे राणा सांगा का हौसला बढ़ गया। वह एक विशाल सेना के साथ बयाना एवं आगरा पर अधिकार करने को बढ़ा। बाबर ने ख्वाजा मेंहदी राजपूतों का सामना करने को भेजा, लेकिन सागां ने उसे परास्त कर बयाना पर अधिकार कर लिया। सीकरी के पास भी आरम्भिक मुठ–भेड़ में मुगल सेना को पराजित होकर पीछे हटना पड़ा। इन आरंम्भिक विफलताओं से मुगलों भय व्याप्त हो गया। मुगल सैनिक आतंकित हो गए तथा उनका मनोबल गिर गया। राजपूतों की विजय से प्रभावित होकर कुछ अफगान सरदारों ने भी बाबर का साथ छोड़ दिया यह एक कठिन–परिस्थिति थी लेकिन बाबर ने धैर्यपूर्वक परिस्थिति का मुकाबला किया। अपनी सेना के मनोबल को बढ़ाने के लिए उसने 'जिहाद' की घोषणा कर दी उसने शराब न पीने की

कसम खाई तथा शराब के सभी बर्तनों को तोड़ दिया। उसने मुसलमानों पर से तमगा (एक प्रकार का सीमाकर) भी उठा लिया। उसने अपने सैनिकों से निष्ठापूर्वक युद्ध करने एवं प्रतिष्ठा की सुरक्षा करने का वचन लिया। सेना को यह भी आश्वासन दिया कि युद्ध के पश्चात जो सैनिक घर जाना चाहेंगे उन्हें जाने दिया जायेगा। इससे बाबर की सेना में उत्साह जगा और युद्ध के लिए तत्परर हो गये।

बाबर राणा सांगा का मुकाबला करने के लिए फतेहपुर सीकरी के निकट खानवा नामक स्थान पहुँचा। राणा सांगा वहीं उसका प्रतीक्षा कर रहा था। बाबर ने जिस व्यूह–रचना का प्रयोग पानीपत में किया था वही यहां भी किया। गाड़ी का प्रयोग पानीपत में किया था वही यहा भी किया। गाड़ी खड़ीकर एवं खाँइया खुदवाकर सुरक्षा पंक्ति सुदृढ़ की गई। पानीपत की तरह यहां भी बाबर की सेना राणा सांगा की तुलना में छोटी थी। बाबर के अनुसार सांगा की सेना में 2 लाख से अधिक सैनिक थे। रविवार, 16 मार्च 1527 को खानवा के मैदान में दोनों सेनाओं की मुठभेड़ हुई।

राजपूत वीरता से लड़े परन्तु बाबर के तोपखाना और उसकी 'तुलगमा' ने राजपूतों को पांव उखाड़ दिया। अनेक राजपूत योद्धा युद्ध क्षेत्रों में ही मारे गया। राणा सांगा गंभीर रूप से घायल व्यवस्था में रणक्षेत्र से निकला भागा ताकि वह पुनः बाबर से युद्ध कर सके परन्तु उसके सामन्तों ने बाद में विष देकर उसकी हत्या कर दी। बाबर की यह एक महान विजय भी। युद्ध के बाद उसने 'गाजी' की उपाधि धारण की। खानवा के युद्ध के परिणाम पानीपत के युद्ध से भी अधिक महत्वपूर्ण एवं निर्णायक सिद्ध हुए। पानीपत के युद्ध ने बाबर को भारत में पाँव रखने का मौका प्रदान किया, परन्तु खानवा ने उसे पाँव फैलाने का अवसर प्रदान किया।

1.8 चंन्देरी की विजय

खानवा के युद्ध के पश्चात बाबर की दूसरी मुख्य विजय चन्देरी की थी। चन्देरी व्यापार और राजनीतिक दृष्टि से महत्वपूर्ण था। राणा सांगा की तरह चन्देरी का शासक भी एक वीर राजपूत शासक था। राजपूताना पर अधिकार करने से पूर्व बाबर का इसके साथ संघर्ष होना अनिवार्य था, क्योंकि राणा संग्राम सिंह के साथ मेदिनी राय भी राजपूतों को संगठित करने का प्रयास कर रहा था। अतः खानवा के पश्चात् बाबर ने विद्रोहियों के दमन का निश्चय किया। अलवर, चंदवार, रापड़ी, इटावा पर मुगलों ने पुनः अधिकार कर लिया। अब बाबर चन्देरी की तरफ बढ़ा। उसने मेदिनी राय को अपने पक्ष में मिलाने एवं चंदेरी के बदले शम्साबाद देने का प्रस्ताव रखा परन्तु मेदिनी राय ने बाबर के प्रस्ताव को ठुकरा दिया। क्रोधित होकर बाबर ने चन्देरी का दुर्ग को घेर लिया। राजपूत दुर्ग की रक्षा नहीं कर सके। उन्हें पराजित होना पड़ा। 29 जनवरी 1528 ईव को बाबर को चन्देरी पर अधिकार हो गया और युद्ध में मेदिनीराय मारा गया। मेदिनी राय की दो पुत्रियों का विवाह क्रमशः हुमायूँ एवं कामरान से कर दिया गया। मालवा के सुल्तान नसरूद्दीन के पौत्र अहमदशाह को चंदेरी का प्रशासक बनाया गया जिसने बाबर की सत्ता स्वीकार कर ली तथा 50 लाख रूव बाबर के खजाने में देना स्वीकार किया।

1.9 घाघरा का युद्ध

चन्देरी विजय के पश्चात् बाबर ने अफगानों की ओर ध्यान दिया। अफगान अपनी शक्ति बढ़ा कर दिल्ली पर पुनः अधिकार करने की योजना बना रहे थे। अब बाबर चन्देरी से अवध की तरफ बढ़ा। उसके आगमन की खबर सुनकर अफगान नेता बिब्बन बंगाल भाग गया। बाबर ने लखनऊ पर अधिकार कर लिया। इधर बिहार में अफगान, महमूद लोदी के नेतृत्व में अपने आपकों संगठित कर रहे थे। बंगाल के सुल्तान से भी उन्हें सहायता मिल रही थी। अफगानों ने बनारस से आगे बढ़ते हुए चुनार का दुर्ग घेर लिया। इन घटनाओं की सूचना पाकर बाबर तेजी से बिहार की तरफ बढ़ा। उसके आगमन का समाचार सुनकर अफगान भयभीत होकर चुनार का घेरा उठाकर भाग खड़े हुए। बाबर ने महमूद लोदी को शरण नहीं देने का निर्देश दिया। परन्तु बंगाल को शासक नुसरतशाह द्वारा उसका प्रस्ताव ठुकरा दिया गया। फलतः 6 मई 1529 को घाघरा के तट पर बाबर और अफगानों की मुठभेड़ हुई। इस युद्ध में बाबर को पूर्ण सफलता मिली। अनेक अफगान सरदार बाबर की शरण में आ गये। महमूद लोदी भागकर बंगाल में शरण लिया. बंगाल के शासक नुसरतशाह ने बाबर से संधि कर ली। बिहार का कुछ भाग मुहम्मद खां लोहानी को और अधिकांश भाग जलालुद्दीन को दे दिया गया। केवल कुछ भाग बाबर अपने अधीन रखा। शेर खां सर को माफ कर दिया गया और जलालुउद्दीन ने उसे अपना मंत्री बनना स्वीकार कर लिया। इस प्रकार घाघरा के युद्ध के पश्चात अफगानों की शक्ति पर थोड़े समय के लिए पूर्णतः अंकुश लग गया।

1.10 सारांश

बाबर की भारत–विजय अनेक दृष्टियों से महत्वपूर्ण है। बाबर वह पहला शासक था, जिसने कुषाण साम्राज्य के पतन के पश्चात पहली बार भारतीय साम्राज्य में काबुल और कंधार को सम्मिलित किया। इससे भारतीय विदेशी व्यापार के विकास में मदद मिली। बाबर का दूसरा महत्वपूर्ण कार्य था तत्कालीन उत्तरी भारत के शक्ति संतुलन को नष्ट कर साम्राज्य स्थापना की प्रक्रिया का आरम्भ करना बाबर के आक्रमण ने भारतीय सैन्य व्यवस्था को भी गहरे रूप से प्रभावित किया। बारूद तोपखाना और घुड़सवारी पर अब भारत में भी बल दिया जाने लगा। बाबर का लगातार युद्ध में व्यस्त रहने के कारण प्रशासनिक व्यवस्था की ओर ध्यान देने का अवसर नहीं मिला यद्यपि इस दिशा में उसकी सबसे बड़ी एवं महत्वपूर्ण उपलब्धिं थी 'बादशाही' का विकास करना उसने तुर्क–अफगानों द्वारा धारण की जानेवाली 'सुल्तान' की उपाधि त्याग दी एवं अपने आपको पादशाह अथवा बादशाह कहना आरम्भ किया। अब राजा का आधार प्रजा की इच्छा नहीं, बल्कि दैवी इच्छा मानी गई। इससे बादशाह की शक्ति और प्रतिष्ठा में अत्यधिक वृद्ध हुई। बाबर ने अपनी सैनिक प्रतिभा के बल पर भारत में उस विशाल और वैभवशाली राजवंश की नींव डाली, जिस पर अकबर ने एक विशाल और साम्राज्य की स्थापना की। बाबर को एक भाग्यशाली सैनिक, मध्य एशिया और भारत के बीच की कड़ी तथा मुगल साम्राज्य का संस्थापक मानते हैं।

1.10 अभ्यासार्थ प्रश्न

- ❖ बाबर के व्यक्तित्व एवं कृतित्व पर प्रकाश डालिए।
- ❖ भारत में बाबर सफलता के क्या कारण थे।
- ❖ बाबर कालीन युद्धों के कारण एवं परिणामों की समीक्षा करें।

❖ बाबर के चरित्र गुणों को रेखांकित कीजिये।

❖ बाबर कल "तलवार के साथ–साथ कलम का भी धनी था" इस कथन की व्याख्या कीजिये।

1.11 संदर्भ ग्रन्थ

प्रो0 हरिशचन्द्र वर्मा :– भाग–II–मध्यकालीन भारत हिन्दी माध्यम कार्यान्वय निर्देशालय दिल्ली विश्वविद्यालय दृ दिल्ली

प्रो0 बी.बी. सिन्हाः– मध्यकालीन भारत का इतिहास ज्ञानदा प्रकाशन–24 दरियागंज अंसारी रोड नई दिल्ली–110002

प्रो0 आर्शीवादी लाल श्रीवास्तव :– भारत का इतिहास (1000–1707AD) शिव लता अग्रवाल (कम्पनी–आगरा–3)

प्रो0 एल. पी. शर्मा :– मध्यकालीन भारत(1000–1761AD) लक्ष्मी नारायण अग्रवालः–आगरा

प्रो0 जे0एल0 मेहता खण्ड–2 :– मध्यकालीन भारत का वृहत् इतिहास– (मुगल साम्राज्य 1526–1707) जवाहर पब्लिशर्स एडं डिस्ट्रीब्यूटर्स नई दिल्ली–110016

इकाई–2

हुमायूँ (1530–40 तथा 1555–56)

इकाई की रूप रेखा

2.0. उद्देश्य
2.1. प्रस्तावना
2.2. हुमायूँ जीवन परिचय
2.3. हुमायूँ की समस्याएँ
2.4. हुमायूँ और शेरखां
2.5. चौसा का युद्ध
2.6. कन्नौज का युद्ध
2.7. हुमायूँ के असफलता के कारण
2.8. हुमायूँ भारत की ओर वापस
2.9. मच्छी वाणा का युद्ध
2.10. सरहिन्द का युद्ध
2.11. सारांश
2.12. अभ्यार्थ प्रश्न
2.13. सन्दर्भ ग्रंथ

2.0 उद्देश्य

इस इकाई में हुमायूँ के व्यक्तित्व एवं उसकी असफलताओं के बारे में जानकारी दी गई। उसके बाल्यावस्थासे लेकर मृत्यु तक की पूरी घटना का वर्णन है। उसका शेरशाह के हाथों पराजय से लेकर भारत दो बारा लौटने की घटना का क्रमबद्ध वर्णन है। इस इकाई के अध्ययन के बात आज जा सकेंगेः–

- ❖ हुमायूँ का जीवन परिचय
- ❖ हुमायूँ की समस्याएँ
- ❖ शेर खां के साथ उसका मुकाबला एवं भारत से पलायन
- ❖ भारत लौटना एवं मुगलराज्य की पुनः स्थापना

2.1 प्रस्तावना

हुमायूँ को प्रारम्भ से ही अनेक कठिनाइयों का सामना करना पड़ा। हुमायूँ को कुछ कठिनाइयाँ अपने पिता से विरासत के रूप में प्राप्त हुई और कुछ उसने स्वयं ही पैदा की लेकिन उसकी सबसे बड़ी कठिनाई उसके अफगान शत्रु थे जो उस समय भी मुगल–वंश को भारत से निकालने के लिए प्रयत्नशील थे। इन कठिनाइयों के साथ–साथ हुमायूँ का व्यक्तिगत चरित्र भी उसके लिए हानिकारक सिद्ध हुआ।

2.2 हुमायूँ का जीवन परिचय

हुमायूँ का पूरा नाम नासिरूद्दीन मुहम्मद हुमायूँ था। सका जन्म 6 मार्च 1508 को काबुल में हुआ। उसकी माता माहिम बेगम तथा पिता जहीरूद्दीन मुहम्मद बाबर था। बाबर हुमायूँ से अगाध प्रेम करता था और उसे अपने सभी पुत्रों से योग्य समझता था। 12 वर्ष की छोटी अवस्था में ही उसे बदख्शां के प्रशासन की देख भाल के लिए नियुक्त किया गया। बाबर ने जब 1526 ईव में भारत पर आक्रमण किया तब हुमायूं भी बदख्शां से अनी सेना लेकर बाबर के साथ आ मिला। पानीपत के युद्ध के पूर्व उसने हिसार–फिरोजा के निकट हामिद खां की सैनिक टुकड़ी को परास्त किया। हुमायूँ ने बाबर के साथ पानीपत एवं खानवा के युद्ध में भाग लिया था। हुमायूँ के कार्यों से खुश होकर बाबर ने उसे कोहिनूर हीरा एवं सभ्यता का जागीर प्रदान की। बाबर की मृत्यु के पश्चात् 30 दिसम्बर 1530 को हुमायूँ भारत का शासक बना।

2.3 हुमायूँ की समस्याएँ

गद्दी पर बैठने के समय हुमायूं के समक्ष अनेक कठिनाइयाँ थी। इनमें से कुछ तों हुमायूँ की दुर्बलता के कारण उत्पन्न हुई थी। परन्तु अधिकांश उसे बाबर द्वारा विरासत से प्राप्त हुई थी। बाबर ने भारत में साम्राज्य स्थापना के लिए अनेक युद्ध लड़े थे। फलस्वरूप उसने अपने उत्तराधिकारी हुमायूँ के लिए अनेक प्रतिस्पर्धी एवं दुश्मन जोड़े थे। राज्य के अन्दर एवं बाहर अनेक महत्वकांक्षी व्यक्ति एवं शक्तियाँ नवजात मुगल राज्य को हड़पने की ताक में लगी हुई थी। मुगलों में उत्ताराधिकारी का निश्चित नियम नहीं था। इसलिए प्रत्येक राजकुमार और राजवंश का व्यक्ति शक्ति के बल पर शासक बनने की कोशिश करता था। बाबर की मृत्यु के बाद उसका प्रधानमंत्री ने हुमायूँ के स्थान पर मेंहदीं ख्वाजा को गद्दी पर बिठाने की कोशिश की। इसलिए हुमायूँ को पिता के मृत्यु के चार दिन बाद गद्दी प्राप्त हुई। हुमायूँ के अपने भाइयों ने भी उसके समक्ष एक विकट समस्या खड़ी कर दी थी। बाबर ने मृत्यु के पूर्व हुमायूँ को आदेश दिया था कि वह शासक बनने के पश्चात् अपने भाइयों से उदारतापूर्ण व्यवहार करे।इसलिए हुमायूँ ने सदैव उनके अपने तीनों भाइयों, कामरान, अस्करी और हिन्दाल क अपने राज्य का कुछ भाग दे दिया। परन्तु हुमायूँ के भाइयों ने उसके साथ सदैव शत्रुतापूर्ण व्यवहार किया, उसके लिए मुसीबतें खड़ी की और विपत्ति में भी हुमायूँ की सहायता नहीं की।

हुमायूँ के लिए अफगान सबसे बड़ी चुनौती बनी हुई थी। यद्यपि बाबर ने अफगानों की शक्ति को कुचलने का भरसक प्रयास किया था, तथापि, वह इसमें पूरी तरह सफल नहीं हो सका था। बंगाल एवं बिहार के अतिरिक्त अन्य भागों में अफगान अपनी शक्ति का संचय कर मुगलों से अंतिम संघर्ष की तैयारी कर रहे थे। इब्राहिम लोदी का भाई महमूद लोदी बंगाल के सुलतान नुसरतशाह एवं अन्य अफगान सरदारों के सहयोग से पुनः आगरा एवं दिल्ली पर अधिकार करने का

प्रयास कर रहे थे। हुमायूँ का प्रबलतम शत्रु शेर खां बिहार में अफगानों को संगठित कर रहा था। इसी प्रकार इब्राहिम लोदी का चाचा, आलम खां, गुजरात में बहादुरशाह की सहायता से अपनी सेना को संगठित कर रहा था। वह मुगलों से प्रतिशोध लेने की ताक में था।

हुमायूँ को सिर्फ अफगानों से ही नही, बल्कि बंगाल के सुलतान नुसरतसाह और गुजरात के बहादुर शाह की ओर से भी खतरा बना हुआ था। दोनों ही महत्वकांक्षी शासक थे। दोनों ही अफगानों को सहायता देकर उनके माध्यम से मुगलों का राज्य समाप्त करना चाहते थे। बहादुर शाह मालवा और मेवाड़ पर अधिकार कर आगरा विजय का सपना देख रहा था। हुमायूँ के समक्ष जितनी समस्याएँ थी उन्हें सुलझाने के लिए दृढ़इच्छा शक्ति, राजनीतिक दुरदर्शिता एवं सैनिक कौशल की आवश्यकता थी। परन्तु दुर्भाग्यवश हुमायूँ में इन गुणों का सर्वथा अभाव था। बौद्धिक प्रतिभा होते हुये भी उसमें राजनीतिक एवं सैनिक गुणों का अभाव था। वह शीघ्र ही कोई निर्णय नहीं ले पाता था। अफीम और शराब के अत्यधिक सेवन से वह सुस्त एवं आलसी बन चुका था। वह किसी काम को पूरा किये बिना ही बीच में अधूरा छोड़कर दूसरा काम आरम्भ कर देता था। सही अवसर पर उचित कारवाई करने की उसकी आदत नहीं थी। परिणामस्वरूप अपने जीवन में उसने कई भयंकर भूलें की, जिनके फलस्वरूप उसे अपना राज्य खोकर करीब पन्द्रह वर्षो तक निर्वासित जीवन व्यतीत करना पड़ा।

2.4 हुमायूँ और शेर खां

हुमायूँ का प्रबलतम एवं घातक शत्रु शेर खां था। वह एक योग्य और महत्वकांक्षी व्यक्ति था। अफगानों की दुर्बल स्थिति को देखकर उसने अपनी शक्ति बढ़ानी आरम्भ कर दी। इसके लिए उसने युद्ध एवं कूटनीति दोनों का सहारा लिया। बिहार के अल्पायु शासक जलाल खां के संरक्षक के रूप में वह बिहार का वास्तविक शासक बन बैठा। शेर खां की बढ़ती शक्ति से भयभीत होकर एवं अफगानों के दमन के उद्देश्य से हुमायूँ ने गद्दी पर बैठने के पश्चात शेर खां पर आक्रमण कर चुनार का घेरा डाल दिया। हुमायूँ को बहलाकर शेरखां ने उसकी अधीनता स्वीकार करने का ढोंग किया। फलतः हुमायूँ चुनार उसी को सुपुर्द कर वापस लौट गया। 1533–36 के मध्य जब हुमायूँ आंतरिक विद्रोहों को दबाने, मालवा एवं गुजरात की विजय में व्यस्त था, तब शेरखां ने अपनी शक्ति बढ़ा ली। उसने बिहार की प्रशासनिक व्यवस्था सुदृढ़ कर ली तथा एक विशाल और मजबूत सेना इकट्ठी की। उसकी शक्ति से प्रभावित होकरअफगान उसे ही अपना नेता मानने लगे। शेरखां ने हजरत–ए–ला की उपाधि धारण की। वस्तुतः वह बिहार का एक स्वतंत्र शासक बन बैठा। उसने अपने नाम के तांबे और चांदी के सिक्के भी ढलवाए। उसने बंगाल पर चढ़ाई कर तेलियागढ़ी पर अधिकार कर लिया। बंगाल के नए सुलतान महमूद शाह ने पुर्तगालियों की सहायता से बने बचाव का प्रयास किया परन्तु विफल रहा। महमूद शाह ने शेरखां को धन देकर अपनी रक्षा की। शेर खां का पुत्र कुतुब खां भी अपनी सैनिक टुकड़ी के साथ आगरा से भागकर अपने पिता के पास पहुँच चुका था। इन घटनाओं की खबर सुनकर हुमायूँ ने हिन्दुबेग को शेर खां को सबक सिखाने के लिए भेजा। हिन्दुबेग अपनी सेना के साथ बिहार की तरफ बढ़ा परन्तु हिन्दु बेग को अपने पक्ष में मिलाकर शेर खां ने हुमायूँ के पास इस आशय की सूचना भिजवा दी कि वह मुगलों के विरूद्ध कोई कार्य नहीं कर रहा है। उसने हुमायूं को अपनी वफादारी की भी याद दिलाई। फलतः हुमायूँ शीघ्र ही कोई कदम नहीं उठा सका। इससे शेरखां और अधिक शक्तिशाली बन

गया। उसने दूसरी बार बंगाल पर आक्रमण कर दिया। बंगाल के शासक महमूद शाह ने हुमायूँ से सहायता मांगी। अब हुमायूँ की नीद से आँखें खुली और शेरखां से युद्ध करने निकल पड़ा।

जुलाई1537 में हुमायूँ ने शेरखां के विरूद्ध अपना अभियान आरम्भ किया। उसने चुनार के दुर्ग को घेर लिया। मुगलों के आगमन की खबर उसके हुमायूँ को दोखा देने के लिए उसने अपनी सेना की एक टुकड़ी पहाड़ियों पर नियुक्त कर दी। इससे हुमायूँ धोखे में पड़ गया। वस्तुतः शेरखां पहले ही चुनार से रसद एवं सैनिक साजो–समान हटा चुका था। हुमायूँ ने लगभग छः महीनों तक दुर्ग को घेरे रखा। मार्च 1538 में वह रूमी खां की चौंकी से दुर्ग पर अधिकार करने में सफल हो सका, परन्तु इससे हुमायूँ को कोई विशेष लाभ नहीं हो सका। जिस समय हुमायूँ चुनार का घेरा डाले हुए था, उसी समय शेरखां रोहतास गढ़ के शक्तिशाली दुर्ग पर अधिकार कर बंगाल की राजधानी गौड़ की ओर बढ़ रहा था। गौड़ पर अधिकार कर अथाह सम्पत्ति प्राप्त की। बंगाल का सुल्तान महमूदशाह भाग खड़ा हुआ। उसने हुमायूँ से भेंटकर सहायता की याचना की। हुमायूँ शेर खां से खुला युद्ध नहीं करना चाहता था। वह पहले बंगाल पर अधिकार करके शेरखां से युद्ध करना चाहता था। इसलिए, बनारस से उसने शेरखां को प्रस्ताव भेज कर रोहतास का दुर्ग वह हुमायूँ को सुपुर्द कर दे बंगाल पर अपना अधिकार हटा ले एवं गौड़ से प्राप्त धन उसके हवाले कर दे। इसके बदले में हुमायूँ शेरखां को चुनार का दुर्ग अथवा जौनपुर का क्षेत्र या अन्य कोई इलाका देने को तैयार था, परन्तु शेर खां की दूसरी ही योजना थी वह भी हुमायूँ से खुला युद्ध नहीं कर गोरिल्ला युद्ध पद्धति द्वारा काम लेना चाहता था। वह हुमायूँ को आगे बढ़ने का अवसर देकर उसका मार्ग काटना चाहता था। हुमायूँ के प्रस्ताव के जवाब में उसने अपनी शर्ते पेश की। वह बिहार छोड़ने को तैयार हो गया था दस लाख टंका सलाना कर देने पर सहमत हुआ परन्तु वह चाहता था कि बंगाल पर उसे मुगलों के प्रतिनिधि के रूप शासन करने दिया जाए। वह कुतबा एवं सिक्कों पर अपना नाम बनाए रखना चाहता था। हुमायूँ को उसने सूचना भेजवाई कि अगर से शेरखां शर्तें मंजूर हो, तो वह शीघ्र बनारस छोड़कर आगरा चला जाए।

हुमायूँ बंगाल जैसे समृद्ध प्रदेश को शेर खां के पास छोड़ना नहीं चाहता था। अगस्त 1538 में हुमायूँ निर्विरोध गौड़ पहुँच गया। बंगाल पर अधिकार कर उसने वहां प्रशासनिक व्यवस्था स्थापित की। गौड़ का नाम उसने 'जन्नताबाद' रखा। हुमायूँ की बंगाल की विजय के साथ ही उसके पतन की प्रक्रिया प्रारम्भ हुई। बंगाल में आवश्यकता से अधिक समय तक रूके रहना हुमायूँ के लिए घातक सिद्ध हुआ। हुमायूँ को बंगाल में आराम करते देखकर शेर खां ने क्रमशः चुनार, बनारस, जौनपुर, कन्नौज पटना इत्यादि पर अधिकार कर लिया। अब वह कन्नौज से बहराइच तक तथा मुंगेर से संभल तक के क्षेत्र का स्वामी बन गया था। दूसरी ओर हिन्दाल ने आगरा जाकर विद्रोह कर दिया एवं स्वयं ही बादशाह की पदवी धारण कर ली। अब हुमायूँ ने आगरा लौटने का फैसला किया।

2.5 चौसा का युद्ध

हुमायूँ के वापस लौटने की सूचना पाकर शेरखां ने मार्ग में ही हुमायूं को घेरने का निश्चय किया। हुमायूँ ने वापसी में अनेक गलतियाँ की। कर्मनासा नदी के किनारे चौसा नामक स्थान पर उसे सेर खां की उपस्थिति का पता चला। अतः वह नदी पार कर शेरखां पर आक्रमण करने को उतारू हो उठा, लेकिन यहाँ भी उसने लापरवाही बरती। उसने तत्काल शेरखां पर आक्रमण नही किया। वह तीन

महिनों तक गंगा नदी के किनारे समय बरबाद करता रहा। शेर खां ने इस बीच उसे धोखे से शांति–वार्ता में उलझाए रखा और अपनी तैयारी तरता रहा। वस्तुतः वह बरसात की प्रतिक्षा कर रहा था।

वर्षा आरम्भ होते ही शेर कां ने आक्रमण की योजना बनाई। हुमायूँ का शिविर गंगा और कर्मनासा नदी के बीच एक नीची जगह पर ता। तः बरसात का नी इसमें भर गया। मुगलों के तोपखाना नाकाम हो गया था। तथा सेना में अव्यवस्था व्याप्त हो गी। इसका लाभ उठाकर 26 जून 1539 की रात्रि में शेर खां ने मुगल छावनी पर अचानक धोखे से आक्रमण कर दिया। मगुल खेमे खलबली मच गई। सैनिक प्राण बचाने के लिए गंगा में कूदकर भाग खड़े हुए। उनमें कुछ डूब गये और अनेक अफगानों द्वारा मारे गया। हुमायूँ स्वयं एक भिश्ती की सहायता से जानबचाकर गंगा पार कर सका। हुमायूँ कुछ विश्वासी मुगलों की सहायता से आगरा पहुँच का। हुमायूँ की पूरी सेना नष्ट हो गई। शेरखां ने अब शेरशाह की उपाधि धारण कर ली और पूर्णरूप से स्वतंत्र शासक बन बैठा। उसने अपने नाम का खुतबा पढ़वाया सिक्के ढलवाए एं फरमान जारी किये। उसने जलाल खां को भेजकर बंगाल पर भी अधिकार कर लिया कर स्वयं बनारस, जौनपुर और लखनऊ होता हुआ कन्नौज जा पहुँचा।

2.6 कन्नौज का युद्ध

हताश और परेशान हुमायूँ जब आगरा पहुँचा तब वहां की स्थिति भी शोचनीय थी, तथापि हुमायूँ ने एक बार पुनः अपना भाग्य आजमाने का निर्णय लिया। उसने अपने विद्रोही भाइयो–कामरान और हिन्दाल–को क्षमाकर दिया, परन्तु भाइयों ने विपत्ति में भी उसकी सहायता नहीं की आगरा में कामरान की सुसगठित सेना मौजद थी, परन्तु हुमायूँ पर विश्वास नहीं होने से वह अपनी सेना सहित लाहौर चला गया। उसने लाहौर से हुमायूँ की सहायता भेजने का वचन दिया, परन्तु अपने वचन का पालन नही किया। अन्य भाइयो ने भी इस विकट परिस्थिति में अपने को तटस्थ रखा। हुमायूँ ने स्वंय ही साहस जोटाया, सेना इकट्ठी की और से अंतिम संघर्ष के लिए तैयार हुआ।

अप्रैल 1540 में हुमायूँ सेनासहित कन्नौज आ धमका। गंगा के दोनो किनारो पर मुगलों एवं अफगानो की सेनाओ ने पड़ाव डाल दिए। हुमायूँ ने यहाँ पुनः पहले वाली भूल दुहराई। उसने तत्काल शेरशाह पर आक्रमण नहीं किया बालक उसके साथ वार्ता में संलग्न रहा। उसने शेरशाह की अनुमति से गंगा पार कर लिया एवं बिलग्राम के निकट एक नीची जगह में खेमा डाल दिया। इस बीच शेरशाह पर आक्रमण मे बिलम्ब देखकर मुगल भयभीत हो गये, उनका मनोबल गिर गया एवं मुगलों ने हताशा फैल गई। मुगल सरदार और सैनिक हुमायूँ का साथ छोड़ने लगे। दूसरी ओर भीषण वर्षा के कारण मुगल शिविर में पानी भर गया। शेरशाह इस स्थिति का लाभ उठाकर 17 मई, 1540 को हुमायूँ पर अचानक आक्रमण कर दिया। हुमायूँ ने वीरता से मुकाबला किया परन्तु शेरशाह से पराजित हो गया।

कन्नौज अथवा बिलग्राम के युद्ध ने हुमायूँ के भाग्य का अंत कर दिया। इस युध्द के परिणाम स्वरुप भारत में मुगलों की सत्ता समाप्ति के कगार पर पहुँचा दिया। इस युध्द ने द्वितीय अफगान राज्य की स्थापना का मार्ग प्ररास्त कर दिया। युध्द में परास्त होकर हुमायूँ आगरा पहुँचा। शेरशाह ने उसका पीछा जारी रखा। अफगानों के आगमन की खबर पाकर हुमायूँ आगरा से लाहौर गया।

कामरान ने उसे कोई सहायता प्रदान नहीं की। वह स्वंय शेरशाह से गुप्त वार्ता करता रहा। हुमायूँ 1543 तक भारत में ही शरण लेकर पुनः सत्ता प्राप्त करने का प्रयास किया, परन्तु विफल होकर ईरान चला गया।

2.7 हुमायूँ के असफलता के कारण

कन्नौज के युध्द ने हुमायूँ को बिना राज्य के बादशाह बना दिया। उसके दुर्दिन आरम्भ हो गये। वह दर–दर की ठोकरें खाता फिरा। हुमायूँ की असफलता के प्रमुख कारण थे उसकी राजनीति भूलों, चारित्रिक दुर्बलता एवं शेरशाह की महत्वकांक्षा एवं कुशल सेनापतित्व। इसके अलावा अन्य प्रमुख कारण थे।

2.7.1 तत्कालीन राजनीतिक परिस्थिति

हुमायूँ जिस समय गद्दी पर बैठा जन समर्थन का अभाव था तथा राजनीतिक परिस्थिति विषम थी। बाबर ने अफगानों एवं राजपूतों को पराजित किया था परन्तु उनकी शाक्ति को कुचल नहीं सका था। राज्य के विभिन्न भागों में अफगान अभी भी प्रभावशाली थे। वे निरंतर खोये हुए राज्य को पुनः प्राप्त करने की ताक मे थे। बाबर की मृत्यु का लाभ उठाकर वे अपनी शक्ति संगठित करने लगे। उन पर नियन्त्रण रखने के लिए जिस दृढ़ निश्चय. इच्छा शक्ति एवं तत्परता की आवश्यकता थी उसका हुमायूँ मे अभाव था।

2.7.2 जनसमर्थन प्राप्त न होना

मुगलों को अभी तक जनसमर्थन प्राप्त नही हो सका था। अधिकांश अफगान एंव भारतीय जनता उन्हें विदेशी आक्रमणकारी एवं लूटेरा ही समझती थी। इसलिए उन्हें मुगलों के प्रति की सहानुभूति नहीं थी। जनता अफगनों को ही हिन्दुस्तान का वास्तविक शासक समझकर उनके साथ सहयोग कर रही थी। अतः हुमायूँ को जनसमर्थन का अभाव था।

2.7.3 अवसर का सदुपयोग नही करना

हुमायूँ को अनेक अवसरों पर ऐसा मौका मिला था, जिसमें अगर उसने तत्परता और बुध्दमानी से काम लिया होता तो उसकी दुर्गाति नहीं हुई होती। अपनी अदुरदर्शिता एवं दृढ़ इच्छाशक्ति के अभाव के कारण वह कभी शत्रु पर सही मौके पर आक्रमण नही कर सका। चुनार के प्रथम घेरे में उसने शेर खां की चिकनीदृचुपड़ी बातों मे आकर उससे समझौता कर उसे अपनी शक्ति बढ़ाने का मौका दिया। इसी प्रकार दूसरी बार उसे करीब छः महीने का समय चुनार दुर्ग का विजय में गंवाया। गौड़ मे भी उसने अनावश्यक समय बर्बाद की। चौसा और कन्नौज का लड़ाई में थी उसने तत्काल ही अफगानों पर आक्रमण न कर उन्हें अपनी स्थिति सुद्दढ़ करने का अवसर दिया।

2.7.4 धन एवं शक्ति का अपव्यय

हुमायूँ ने अपने धन और शक्ति का भी अपव्यय किया। उसके पास पहले से ही कमी थी, खजाना खाली था, परन्तु उसने इनाम देने, उत्सव मनाने तथा भोगविलास पर अनावश्यक धन खर्च कर अपनी अर्थिक स्थिति लाचार बना ड़ाली। जब उसे सेना के लिए धन का आवश्यकता पड़ी तो उसके पास घन था ही नही। इसी प्रकार कालिंजर, चुनार और बंगाल के व्यर्थ युद्धों में उसका समय धन शक्ति एवं प्रतिष्ठा नष्ट हुई।

2.7.5 निश्चित योजना की कमी

हुमायूँ ने अपने सैनिक आभियान किसी निश्चित योजना के अनुसार नही किए। कभी वह बहादुरशाह पर आक्रमण करता और बिना उसकी शक्ति पूरी तरह नष्ट किये बिना ही शेरखां की तरफ बढ़ जाता। वह निश्चित नही कर पाया कि शेर खां की शक्ति को बिहार में नष्ट करें अथवा बंगाल में। चौसा के युध्द में पराजित होने के पश्चात थी उसने कन्नौज एवं बनारस का मध्यवर्ती इलाका पुनः वापस लेने का कोई प्रयास नही किया। वह शेरखां से अन्तिम संघर्ष के लिए तैयार हो गया।

2.7.6 कुशल सेनापति के गुणों का अभाव

यद्यपि हुमायूँ वीर और साहसी था, तथापि उसमें कुशल सेनापति का अभाव था। आक्रमण के लिए उसने सहीं अवसर का पहचान नही की। उसकी रणनीति भी दोषपूर्ण थी। उसने अनुभवी लोगो के सलाह को भी नहीं माना। इसी कारण विशाल सेना होने के बावजूद वह पराजित होता रहा। उसकी सैन्य संगठन भी त्रुटिपूर्ण था तथा अनुशासन का कमी थी। कन्नौज के युद्ध के अवसर पर उसके अनेक सैनिक पदाधिकारी एवं जवान युद्ध प्रारम्भ होने से पहले ही उसका साथ छोड़कर चले गये।

2.7.7 हुमायूँ का चारित्रिक दुर्बलताए

हुमायूँ की चारित्रिक दुर्बलताएं भी उसके पतन के लिए उत्तरदायी थी। यद्यपि उसमें अनेक मानवोचित गुण थे, तथापि उसमें एक कुशल प्रशासक राजनीति एवं दक्ष सेनापति के गुणों का सर्वथा अभाव था। एक काम को पूरा किए बिना ही दुसरा कार्य प्रारम्भ कर देता। उसे सही अवसर की पहचान भी नही थी। वह विलासी स्वभाव का था तथा अफीम का अत्यधिक सेवन करता था। इससे तत्परता एवं शीघ्रता से निर्णय लेने में देरी होती थी।

2.7.8 हुमायूँ के भाइयों एवं अमीरों का विश्वासघात

हुमायूँ के पतन में उसके भाइयों एवं अमीरों के असहयोग एवं विश्वास घात का भी योगदान था। जिस समय वह कालिजंर पर घेरा डाले हुए था, उसी समय कामरान ने जबरदस्ती पंजाब पर अधिकार का उसकी सत्ता को चुनौती दी एवं मुगलों कि आपसी फूट के अफगानो पर उजागर कर दी। अस्करी के बेवकूफी और विद्रोह के कारण मालवा और गुजरात हुमायूँ के हाथों से निकल गया। चुनार पर आक्रमण के समय हिन्दू बेग ने हुमायूँ को धोखा दिया जिससे वह निरर्थक छः महीनों तक दुर्ग का घेरा डाले रहा। चौसा के युद्ध के अवसर पर जमां मिर्जा ने भी हुमायूँ को धोखा दिया। जिस समय हुमायूँ बंगाल में था उसी समय हिन्दुत्व और कामरान ने विद्रोह कर दिया आगरा में भी कामरान हुमायूँ का सहायता नही की बल्कि अपने भाई को संकट में छोड़कर लाहौर चला गया कन्नौज के युद्ध के अवसर पर सुल्तान मुहम्मद मिर्जा ने युद्ध आरम्भ होने से पहले ही उसे छोड़कर चला गया। आगरा से भागकर हुमायूँ जब लाहौर पहुचाँ तब वहां भी उसके भाईयो ने उसे सहयोग नही दिया। कामरान ने उसे बार–बार परेशान किया उसने शेर खाँ से गुप्त वार्ता चलाई एवं हुमायूँ की हत्या करने की साजिश की। हिन्दाल और अस्करी ने भी अपने भाई का साथ नही दिया फलतः हुमायूँ को भारत

छोड़कर भागना पड़ा हुमायूँ की यह मुर्खता ही कही जाएगी कि उसने बार–बार अपने विद्रोही भाईयों एवं अमीरो पर विश्वास कर उन्हें क्षमा प्रदान किया। अंत में, वे ही हुमायूँ की जड़ खोदने को उतारु हो गए।

2.8 हुमायूँ भारत की ओर वापस

ईरान के शाह की सहायता हुमायूँ के लिए एक वरदान सिद्ध हुई। उसने खोया हुआ। धैर्य एवं शक्ति पुनः प्राप्त कर ली। एक बार फिर वह भारत में भाग्य आजमाने की लालायित हो उठा। लेकिन इसके लिए उसे मध्य एशिया में अपनी शक्ति संगठित करना एवं विद्रोही भाइयों को वशा में लाना आवश्यक था इसलिए सबसे पहले कंधार विजय को योजना बनाई। ईरान से चलकर हुमायूँ कन्दार पहुँचा। कंधार पर उसका भाई अस्करी, कामरान के प्रतिनिधि की हैसियत से शासन कर रहा था। 1545 में हुमायूँ कंदार पर विजय मिली। वहा बैरम खां को नियुक्त कर काबुल एवं बदक्शां की ओर चल दिया। इन दोनों प्रातों पर क्रमशः कामरान का एवं मिर्जा सुलेमान का सासन था। कामरान युद्ध में पराजित होकर गजनी भाग गया और काबुल हगुमायूँ के अधिपत्य में आ गया। हुमायूँ बदक्शी की ओर मुड़ा और मित्र सुलेमान को परास्त कर इस पर अधिकार कर लिया। 1554 ईव में हुमयूँ पंजाब विजय के लिए चल पड़ा। शीघ्र ही पेशवार पहुँच गया। सिन्ध पाकर वह लाहौर की तरफ बढ़ा। इसी बीच कंधार से बैरम खां सेना की एक टुकड़ी के साथ हुमायूँ से आ मिला। फरवरी 1555 में हुमायूँ ने लाहौर पर अधिकार कर लिया। लाहौर के पश्चात सरहिन्द, हिसार और दीपालपुर पर भी मुगलों का अधिकार हो गया। अब अगल मुकाबला हुमायूं का अफगानों था। जिसको जीतना हुमायूँ को आवश्यक था।

2.9 मच्छीवाणा का युद्ध

मुगलों के आगमन एवं पंजाब पर उनके अधिकार की सूचना पाते ही अफगान सुल्तान सिकन्दर सर ने अपने योग्यतम सेनापति तातार खां एवं हैवात खां को सेना के साथ मुगलों को रोकने के लिए भेजा। लुधियाना के निकट मच्छीवाणा नामक स्थान पर मुगलों एवं अफगानों की मुठभेड़ हुई। मुगल तोपचियों के आगे अफगान धनुर्धर टिक नही पाए। 15 मई 1555 को अफगान पराजित होकर भाग खड़े हुए इस विजय के परिणामस्वरूप सम्पूर्ण पंजाब, सरहिन्द, हिसार फिरोजा और दिल्ली के कुछ सीमावर्ती क्षेत्र पर भी मुगलों का अधिपत्य स्थापित हो गया।

2.10 सरहिन्द का युद्ध

मच्छीवाणा में पराजय के पश्चात स्वयं सिकन्दर सर एक विशाल सेना के साथ सरहिन्द पर अधिकार करने के लिए दिल्ली से आगे बढ़ा। 22 जून 1555 को सरहिन्द के निकट मुगलों एवं अफगानों में मुठभेड़ हुई। अफगानो की विशाल सेना मुगलों के सामने टिक नही पाई। अनेक अफगान सरदार मारे गये और सिकन्दर सर भाग खड़ा हुआ। सरहिन्द के युद्ध ने मुगलों की खोई हुई भारत की सत्ता पुनः स्थापित कर दी।

2.11 सारांश

हुमायूँ का व्यक्तित्व एवं चरित्र विवादास्पद है। तत्काल–ए अकबरी के लेखक निजमुद्दीन अहमद और इतिहासकार फरिश्ता हुमायूँ के व्यक्तिगत चरित्र और मालवीय गुणों की प्रशंसा करते है। वही दयालु, विधाप्रेमी, साहित्य कला, एवं विज्ञान में अभिरूचि रखने वाला था परन्तु उसमें अनेक चारित्रिक दुर्बलताए भी थी। वह आलसी, सुस्ती और अदूरदर्शी था। इसलिए उसे अपना राज्य खोकर 15 वर्षो तक भगोड़े का जीवन व्यतीत करना पड़ा हुमायूँ की सबसे प्रशंसनीय बात यह थी कि वह घोर निराशा की परिस्थिति में भी उसने कभी धैर्य एवं साहस नही खोया। प्रतिकूल परिस्थिति से वह सदैव जूझता रहा और अन्ततः सफल हुआ। उसने प्रशासकों चार विभागों के सुपुर्द किया गया अस्ति (सिक विभाग से संबंदध) हवाई (महली की आंतरिक व्यवस्था) अब (जल एवं नदी से सम्बन्ध) तथा काकी (कृषि एवं भूमि से सम्बद्ध) प्रत्येक विभाग की देखरेख के लिए अलग–अलग मंत्री बहावल किये गये। इस तरह हुमायूं जीवन में असफल नही रहा। हाँ वह भाग्यहीन अवश्य था। वस्तुतः, हुमायूँ दया का पात्र है घृणा का नही।

2.12 अभ्यार्थ प्रश्न

1. हुमायूँ की कठिनाइयों एवं उसके असफलता के कारणों की व्याख्या कीजिये।
2. हुमायूँ एवं शेरशाह के बीच हुए संघर्षो का वर्णन कीजिये।
3. "हुमायूँ जीवन भर ठोकरे खाता रहा और ठोकर खकर ही उसके जीवन का अन्त हुआ" क्य आप इस कथन से सहमत है!
4. हुमायूँ की व्यक्तिगत दुर्बलताओं को रेखांकित कीजिये।
5. हुमायूँ के भाइयों ने उसके लिए किस प्रकार परेशानी खड़ी की?

2.13 सन्दर्भ ग्रन्थ

प्रो0 हरिश्चन्द्र वर्मा :– भाग II मध्यकालीन भारत हिन्दी माध्यम कार्यान्वय निदेशालय – दिल्ली विश्वविद्यालय – दिल्ली

प्रो0 बी.बी. सिन्हा :– मध्यकालीन भारत का इतिहास ज्ञानदा प्रकाशन–24 दरिया गंज अंसारी रोड–नई दिल्ली–110002

प्रो0 आर्शीवादी लाल श्रीवास्तव :– भारत का इतिहास (1000–1761AD) शिवलाल अग्रवाल कम्पनी आगरा–3

प्रो0 एल. पी. शर्मा :– मध्यकालीन (1000–1761) लक्ष्मीनारायण अग्रवाल–आगरा

प्रो0 जे.एल. मेहता :– खण्ड–2 मध्यकालीन भारत का वृहत इतिहास (1526–1707) जवाहर पब्लिशर्स एण्ड डिस्ट्रीब्यूटर्स बेरसराय, नई दिल्ली–110016

प्रो0 एल. बी. पाण्डे :– मध्यकालीन भारत का इतिहास

इकाई–3

अकबर और उसकी नीतियां (1556–1605)

इकाई की रूप रेखा

3.0. उदेश्य

3.1. प्रस्तावना

3.2. अकबर का जीवन परिचय

3.3. पानीपत का द्वितीय युद्ध–1556

3.4. अकबर की राजपूत नीति

3.5. वैवाहिक सम्बन्ध की नीति

3.6. राजपूतों के प्रति अकबर की उदार नीति

3.7. अकबर की धार्मिक नीति

3.8. दीन–ए–इलाही

3.9. अकबर की प्रशासनिक नीति

3.10. अकबर द्वारा केन्द्रीय सत्ता को मजबूत करने का प्रायस

3.11. मनसबदारी व्यवस्था

3.12. अकबर एक राजकीय शासक के रूप में

3.13. सास्कृतिक एकता की नीति

3.14. सारांश

3.15. अभ्यासार्थ प्रश्न

3.16. सन्दर्भ ग्रन्थ

3.0 उद्धेश्य

इस इकाई में अकबर के व्यक्तित्व एवं उसकी नीतियों के बारे में जानकारी दी गई है। उसके बाल्यावस्था से लेकर मृत्यु तक की घटनाओं का लेखा जोखा है। अकबर की उदार धार्मिक नीति एवं राजपूतों के साथ वैवाहिक सम्बन्धों का वर्णन की गई है। इस इकाई के अध्ययन करने के बाद जान सकेंगेः–

- अकबर का जीवन परिचय एवं प्रारम्भिक कठिनाई
- अकबर की धार्मिक नीति

- ❖ अकबर की राजपूत नीति एवं वैवाहिक सम्बन्ध
- ❖ अकबर एख राष्ट्रीय शासक के रूप
- ❖ अकबर का मूल्यांकन

3.1 प्रस्तावना

अकबर एक महान सम्राट और साम्राज्य निर्माता था। उसने नव स्थापित मुग्ल राज्य को स्थायित्व एवं दृढंता प्रदान की। वह सुलहे–ए–कुल की नीति पर अमल करते हुए सामजिक एवं धार्मिक एकता स्थापित करने की कोशिश की। उसने समाज के दो बहुसंख्यक वर्ग– हिन्दू एवं मुसलमान–के उत्थान के लिए समान रूप से प्रयास किया। उसने भारतीयों में यह चेतना जगा दी कि विभिन्न जातियों, धर्मों सम्प्रदायों एवं वर्गों में विभक्त रहते हुए भी वह एक राष्ट्र के निवासी है। इस चेतना को जगाकर उसने राष्ट्र निर्माण में सराहनीय योगदान दिया।

3.2 अकबर का जीवन परिचय

भारत के महान स्रमाट अकबर का जन्म 14 अक्टूबर 1542 को अमरकोट के राणा वीरसाल के यहां हुआ था। उस समय उसके पिता हुमायूँ दुर्दिन का सामना कर रहा था और अपने पत्नी हमीदा बानो के साथ राजा वीरसाल के यहां ठहरा हुआ था। वीर साल के हुमायूँ के सम्बन्ध बिगड़ जाने के कारण बालक अकबर को भी अमरकोट छोड़कर हुमायूँ के पास जाना पड़ा। सिन्ध को जतिने में निष्फल होकर हुमायुँ ने भारत छोड़कर कंधार जाने का निश्चय किया लेकिन अपने भाई अस्करी के आक्रमण की सूचना पाकर हुमायूँ अकबर को मुल्तान नामक स्थान पर छोड़कर ईरान चला गया। अकबर की देख–रेख की का जिम्मा जौहर, शम्सुद्दीन खान, माहम अनगा और जिजी अनगा ने अपने ऊपर लिया। अस्करी के संरक्षण में अकबर का लालन–पालन होने लगा। अस्करी ने बाद में उसे काबुल भेज दिया। काबुल में अकबर की देख–रेख बाबर की बहन ने की। 1546ई. में अकबर अपने पिता के पास पहुंच सका।

हुमायूँ ने अकबर की शिक्षा–दीक्षा के लिए अनेक प्रायस किए, परन्तु अकबर शिक्षा प्राप्त करने में रूचि नही रखता था। उसकी अभिरूचि शिकार, घुड़सवारी, तीरंदाजी, तलवार चलाने इत्यादि में अधिक थी। यद्यपि उसकी बुद्धि अत्यन्त ही तीव्र थी, तथापि पढ़ाई में वह ध्यान नही लगा सका। इसलिए हुमायूँ ने उसे आरम्भ से ही राज–काज में लगाना आरम्भ किया। 1551 ई0 में सिर्फ 9 वर्ष की अल्पायु में ही अकबर को गजनी का सुबेदार नियुक्त किया गया। अकबर ने यहां अपनी प्रतिभा का परिचय दिया। भारत विजय के दौरान भी अकबर ने महत्वपूर्ण भमिका निभाया। हुमायूँ ने सरहिन्द विजय का श्रेय अकबर को दिया एवं 1555 में विधिवत उसे युवराज भी घोषित कर दिया गया। पंजाब से दिल्ली की ओर प्रस्थान करने के पूर्व अकबर को पंजाब का गवर्नर बना दिया गया।

हुमायूँ की मृत्यु के पश्चात् बैरम खां के संरक्षक के रूप में मुगल राज्य और अकबर की सुरक्षा के लिए पर्याप्त व्यवस्था की तार्दी वेग को दिल्ली भेज दिया गया। उसने शाह अबुल माली को गिरफ्तार कर लाहौर भेज दिया।

फलस्वरूप, तत्काल अकबर के विरूद्ध विरोध की संभावना कम हो गी। इधर आदिलशाह के मंत्री हेमू ने आगरा और दिल्ली पर आक्रमण कर अपने अधिकार में कर लिया। हेमू ने इस विजय के पश्चात् 'विक्रमादित्य' की उपाधि धारण कर ली।

3.3 पानीपत का द्वितीय युद्ध 1556

दिल्ली और आगरा के पतन का समाचार सुनकर मुगल खेमे में चिन्ता व्याप्त हो गई इस समय परिस्थिति अत्यन्त भयावह थी। एक बार पुनः हुमायूँ के साथ घटी घटनाओं की पुनावृत्ति हो रही थी, लेकिन इस बार अकबर और उसके संरक्षण बैरम खां नें अपना अग्रगामी दल अलीकुली कां उजबेक के नेतृत्व में दिल्ली की ओर भेजा और स्वयं अकबर के साथ दिल्ली की ओर बढ़ रहा था। मार्ग में अलीकुली ने हेमू की अग्रगामी सैनिक टुकड़ी को पराजित कर उसका तोपखाना अपने अधिकार में कर लिया इससे हेमू की स्थिति दुर्बल हो गई, तथापि वह मुगल सेना को रोकने के लिए पानीपत के मैदान में आ डटा। 5 नवम्बर 1556 को मुगलों और हेमू की सेना की पानीपत के मैदान में मुठभेड़ हुई। युद्ध में हेमू वीरतापूर्वक लड़ा परन्तु पराजीत हो गया। उसे युद्ध भूमि में ही मार डाला गया। हेमू की मृत्यु के साथ ही मुगल की भारत पर विजय सुनिश्चित हो गई। मुगलों ने अब दिल्ली और आगरा पर पुनः अधिकार कर लिया।

3.4 अकबर की राजपूत नीति

एक कुशल राजनीतिज्ञ होने के कारण अकबर भारतीय राजनीति के राजपूतो के महत्व को समझता था। इसलिए उसने राजपूतों के प्रति एक निश्चित नाति अपनाई। जहाँ तक सम्भव हो वह उन्हें मित्र बनाना चाहता था, राजनीतिक प्रतिहिंदी और शत्रु नही। इसलिए उसने राजपूतों के प्रति, उदारता, सहिष्णुता, सदभावना एवं सहयोग की नीति अपनाई। दूसरी ओर राजपूतों ने भी अकबर की मित्रता को स्वीकार कर भारत में मुगलराज्य को स्थायित्व प्रदान किया। राजपूत राज्यों का भारतीय राजनीति में महत्व देखते हुए अकबर ने राजपूतों के प्रति तीन अलग–अलग नीतियां अपनाई। पहली श्रेणी में वैसे राज्य आते हैं जिन्होंने आसानी से अकबर की अधीनता स्वीकार कर ली। उनके साथ वैवाहिक सम्बन्ध स्थापित हुआ तथा जिन्हें मुगल प्रशासन और सेना में ऊँचे ओहदे प्रदान किये गये। दूसरी श्रेणी में वैसे राज्य थे जिन्होंने उसकी अधीनता स्वीकार कर ली अथवा उसके साथ सम्मानजनक समझौता कर लिया। तीसरा वह राज्य था जो अकबर की अधीनता स्वीकार नहीं कर सदा संघर्ष करता रहा, ऐसे राज्य में केवल मेवाड़ था। राजपूतों के साथ राजनीतिक स्तर पर निपटने के अतिरिक्त अकबर ने उन्हें अपने पक्ष में करने के लिए उत्तर धार्मिक नीति भी अपनाई एवं सामाजिक कुरीतियों को दूर करने का प्रयास किया।

3.5 वैवाहिक सम्बन्ध स्थापित करने की नीति

अकबर ने राजपूतों को अपने पक्ष में मिलाने के लिए प्राचीन भारतीय राजनीतिक परम्परा का पालन करते हुए राजपूत राजवंशों से वैवाहिक सम्बन्ध स्थापित किए। इसके लिए राजपूतों पर दबाव नहीं डाला गया बल्कि अकबर की मित्रता प्राप्त करने के लिए कुछ राज्यों ने स्वेच्छा से ही ऐसा किया 1562 ई0 में जब अकबर अजमेर गया तब अंबर (आमेर) के राजा भरमल अथवा बिहारी मल ने

अकबर से भेंट कर उसकी अधीनता स्वाकर कर ली एवं अपनी पुत्री का विवाह अकबर से कर दिया। भारमल को मनसब प्ररदान किया गया एवं उनके पुत्र भगवान दास और पौत्र मानसिंह को भी मुगल सेना में उच्चस्थान दिया गया। रानी को भी महल में सम्मानजनक स्थान मिला। इसके साथ ही मुगल–राजपूत सम्बन्धों की एक नई परम्परा प्रारम्भ हुई। डाव वेणी प्रसाद ने इस विवाह के महत्व पर प्रकाश डालते हुए लिखते है, "यहा भारतीय राजनीति में एक नए युग के उद्घाटन का प्रतीक है" आमेर की देखा–देखी कुछ अन्य राजपूत राज्यों ने भी अकबर से वैवाहिक सम्बन्ध स्थापित किये। 1570 ईव में बीकानेर के शासक राय कल्याणमल और जैसलमेर के राजा हरराय के साथ भी वैवाहिक सम्बन्ध स्थापित हुआ। आमेर से वैवाहिक सम्बन्ध के परिणामस्वरूप अकबर के उत्तराधिकारी जहाँगीर का जन्म हुआ 1584 में जहाँगीर का विवाह अकबर ने राजा भगवान दास की बेटी जगतगेसाई, किया जिसे राजकुमार (खुसरों का जन्म हुआ। ये सभी राज्य अकबर के मित्र एवं अधीनस्थ राज्य बन गये।

3.6 राजपूतों के प्रति अकबर की उदार नीति

राजपूतों और अन्ततः हिन्दुओं को अपने पक्ष में मिलाने के लिए अकबर ने दो अन्य महत्वपूर्ण कार्य किये सबसे पहले उसने धार्मिक सहिष्णुता की नीति अपनाई। अन्य धर्मावलम्बियों की तरह हिन्दुओं को भी धार्मिक स्वतंत्रता प्रदान की गई। 1563 ईव में उनपर लगाये जाने वाले तीर्थ कर वापस ले लिया गया जबकि अगले ही वर्ष 1564 में धार्मिक कर जजिया भी हटा लिया गया। जबर्दस्ती हिन्दुओं के धर्म–परिवर्तन पर रोक लगा दिया गया एवं धर्म परिवर्तन हिन्दुओं को पुनः अपने धर्म अपनाने की छूट मिली। अकबर ने स्वयं भी हिन्दू पर्वोः–दशहरा, दीपावली, होली, रक्षाबन्धन, मनाना आरम्भ किया। वह हिन्दुओं के सम्मान तिलक भी लगाने लगा। राजपूत सरदारों को भी तिलक लगाकर दरबार में आने की आजादी दी गई। शाही महल की हिन्दू रमणियों को भी धार्मिक स्वतंत्रता मिली हिन्दुओं को विश्वास प्राप्त करने के लिए अकबर ने हिन्दुओं के तीर्थ स्थानों, जैसे मथुरा, की यात्रा की और हिन्दुओं के प्रसिद्ध धर्मग्रन्थों, जैसे रामायण, एवं महाभारत इत्यादि का फारसी भाषा में अनुवाद करवाया। हिन्दुओं के मुकदमें की सुनवाई के लिए हिन्दु न्यायाधीशों की नियुक्ति की व्यवस्था की गई। अकबर के इन कार्यों से राजपूतों एवं हिन्दुओं पर गहरा प्रभाव पड़ा। अब वे अकबर को अपना सच्चा हमदर्द और शुभचिंतक समझने लगे। फलतः, उन लोगों ने विरोध का मार्ग छोड़कर मैंत्री अपनाया।

3.7 अकबर की धार्मिक नीति

अकबर की महानता उसकी धार्मिक नीति पर आधारित है। उसने तुर्क–अफगान शासकों की धार्मिक विभेद की नीति के स्थान पर उदार नीति अपनाई तथा सभी धर्मों एवं सम्प्रदायों में एकता और समन्वय स्थापित करने का प्रयास किया। अकबर की धार्मिक सहिष्णुता की नीति व्यक्तिगत कारणों के अतिरिक्त राजनीतिक उद्देश्यों से भी प्रभावित थी। इसके द्वारा वह मुगल साम्राज्य को स्थायित्व करने का प्रयास किया। अकबर की धार्मिक सहिष्णुता की नीति व्यक्तिगत कारणों के अतिरिक्त राजनीतिक उद्देश्यों से भी प्रभावित थी। इसके द्वारा वह मुगल साम्राज्य को स्थायित्व एवं दृढ़ता प्रदान करना चाहता था। अकबर की धार्मिक नीति के मनोवांछित फल मिले। अकबर की धार्मिक नीति का विकास तीन विभिन्न चरणों में पूरा हुआ––––(1) 1556–75, (2) 1575–82 (3) 1582–1605

1556–75 यह काल अकबर के धार्मिक नीति के विकास का आरम्भिक काल था। वह एक सच्चे सुन्नी मुसलमान के समान रहता था एवं इस्लाम धर्म के नियमों का पालन करता था यद्यपि हिन्दुओं से जजिया और तीर्थकर इस समय लिया गया तथापि हिन्दुओं पर धार्मिक अत्याचार नही किये गये। न तो उनके मंदिर तोड़ गये और न ही उन्हें धर्म परिवर्तन करने के लिए विवश किया गया। यह अकबर की धार्मिक उदारता का परिचायक था। इसी काल में 1562 ई0 में आमेर की राजपूत राजकुमारी से अकबर का विवाह हुआ। इस विवाह से हिन्दु धर्म के सम्पर्क में गहरे रूप से आया और हिन्दुओं को अपने पक्ष में मिलाने के लिए उन्हें अनेक धार्मिक सुविधाएं प्रदान की। 1563 ई0 में तीर्थयात्रा कर समाप्त कर दिया। 1564 ई0 में जजिया भी हिन्दुओं पर से उठा लिया गया। अकबर ने स्वयं सिक्खों को अमृतसर में मंदिर बनवाने के लिए जमीन दी एवं धर्म–परिवर्तित लोगों को पुनः अपना पुराना धर्म स्वीकार करने की सुविदा दी गई। हिन्दु समाज में व्याप्त अनेक कुप्रथाओं–सतीप्रथा, बाल विवाह इत्यादि को रोकने का प्रयास किया गया। अन्य धर्मों के प्रति भी उदार नीति अपनाई गई। इस प्रकार, अकबर से सुलह–कुल की नीति अपना कर सभी धर्मवालों को प्रेम और सदभावनापूर्ण वातावरण का अवसर प्रदान किया।

1575–82– अकबर की धार्मिक नीति के विकास में यह काल सर्वाधिक महत्वपूर्ण है। इसी समय इबादत खाना की स्थापना हुई, मजहर की घोषणा हुई तथा दीन–ए–इलाही अथवा तौहीद–ए–इलाही की स्थापना हुई। अकबर की जिज्ञासु प्रवृत्ति और विभिन्न धार्मिक नेताओं से मेल–मिलाप ने उसमें धार्मिक मामलों में गहरी अभिरूचि जगा दी। वह सभी धर्मों का सार जानने को उत्सुक हो उठा इसीलिए उसने 1573 ई0 में पतेहपुर सीकरी में इबादतखाना (प्रार्थना–भवन) बनवाने की आज्ञा दी। 1575 ई0 तक यह भवन बनकर तैयार हो गया। अब अत्यधिक विस्तृत रूप से धर्म पर चर्चा होने लगी। अब वह इस परिणाम पर पहुँच कि सभी धर्मों का सार एक हैय उनमें केवल बाहरी अन्तर है। 1579 ई0 में इबादतखाना बन्द कर के मजहर की घोषणा की गई। इसके अनुसार इस्लाम धर्म की व्याख्या एवं मुतल मौलवी को धार्मिक मतभेदों में सम्राट की ही निर्णय निर्णायक होगा। इस प्रकार राजनीतिक मामलों के अतिरिक्त धार्मिक मामलों का भी सर्वोच्च अधिकारी बन गया।

3.8 दीन–ए–इलाही

धार्मिक क्षेत्र में अकबर का सबसे महत्वपूर्ण विवादस्पद कार्य था, तौहीद–ए इलाही अथवा दीन–ए–इलाही की स्थापना। इबादतखाना बन्द करवाने एवं मजहर की घोषणा के पश्चात् भी अकबर धार्मिक मामलों में रूचि लेता रहा। 1582 ई0 में अकबर ने दीन–ए–इलाही नामक एक नये मत अथवा धर्म की घोषणा की। धार्मिक विभिन्नता एक मतभेदों को दूर करने के लिए पूरे देश में सामंजस्य एवं एकता की भावना जगाने के उद्देश्य से अकबर ने एक ऐसे धर्म की कल्पना की, जिसमें सभी धर्मों की अच्छी बातों का समावेश कर इसे सार्वजनिक बनाया जा सके। इस नये धर्म की कल्पना के पीछे अकबर का व्यक्तिगत इच्छा एवं राजनीतिक आवश्यकता छिपी हुई थी। अपने नये धर्म के द्वारा अकबर मुगल साम्राज्य के अन्तर्गत बसने वाली सभी जातियों एवं धार्मिक सम्प्रदाय के लोगों को एक सूत्र में बांधकर अपने साम्राज्य को स्थायित्व प्रदान करना चाहता था। उसका दूसरा उद्देश्य स्वयं को राष्ट्रीय सम्राट के रूप में प्रतिष्ठित करवाना एवं सम्राट के पद का महत्व एवं गौरव बढ़वाना था।

3.9 अकबर की प्रशासनिक नीति

एक साम्राज्य निर्माता के अतिरिक्त भारतीय इतिहास में अकबर एक कुशल प्रशासक के रूप में भी विख्यात है। उसने तुर्क–अपगान पद्धति में आवश्यकतानुसार संशोधन एवं परिवर्तन किए। अकबर का शासन धर्मनिरपेक्षता के सिद्धान्त पर आधारित था। उसके पूर्वगामी तुर्क–अफगान शासकों ने इस्लामी राज्य की स्थापना का प्रयास किया था परन्तु अकबर ने अपने राज्य में रहने वाली सभी जातियों एवं धार्मिक सम्प्रदायों के प्रति प्रशासनिक एकरूपता की नीति अपनाई धर्म के आधार पर प्रशासनिक भेदभाव की नीति नही बरती गई। अकबर ने सभी नागरिकों को एक समान अधिकार प्रदान किया एवं सच्चे कार्यों में राष्ट्रीय राज्य सत्ता की स्थापना की। उसने प्रशासन का दूसरा मुख्य उद्देश्य था प्रजा की रक्षा, उन्नति एवं सुख के लिए सदैव प्रयत्नशील रहना। इसलिए अकबर ने प्रजा के आर्थिक एवं सामाजिक हितों की सुरक्षा एवं उन्नति तथा सभी सम्प्रदायों एवं वर्गों में एकता औरर सदभावना बनाये रखने का सतत प्रयास किया। इसके साथ ही, अकबर सम्राट के दैवी सिद्धान्त में विश्वास करता था, इसलिए शासन में उसने जनवाद के सिद्धान्त को मान्यता नही दी, बल्कि सम्राट के पद को अधिक गौरवमय और भव्य बनाकर उसने जनता में उनकों प्रति सम्मान एवं भय और भव्य बनाकर उसने जनता में उसके प्रति सम्मान एवं भय की भावना पैदा करने का प्रयास किया जिससे जनता उसे अपना समर्थन दे सके, सम्राट के विरूद्ध विद्रोह नही कर सके। इस प्रकार अकबर ने उदार–एकाधिकार सत्ता स्थापित करने का प्रयास किया।

3.10 अकबर द्वारा केन्द्रीयसत्ता को मजबूत करने का प्रयास

सम्राट की शक्ति एवं उसका सम्मान बढ़ाने के लिए अकबर ने अनेक प्रयास किये। उसने हिन्दु राज्य व्यवस्था में प्रचलित राजतंत्र के दैवी सिद्धान्त को अपनाया। उसने खलीफा की प्रभुत्ता को मानने से इनकार कर दिया एवं स्वयं को ईश्वर का प्रतिनिधि घोषित किया। उसने खलीफा के समान स्वयं ही खुतबा पढ़ा और जमींबोस (राजगद्दी के सामने जमीन चूमने की प्रथा) की प्रथा आरम्भ की 1579 ई0 में मजहर की घोषणा के बाद वह धार्मिक मामलों का भी प्रधान बन गया। उसने राज्य की सारी शक्ति अपने हाथों में केन्द्रित रखी। उसके मंत्री और पदाधिकारी उसके पूर्ण नियंत्रण में थे। उसकी शक्ति पर किसी प्रकार का संवैधानिक नियंत्रण अथवा अंकुश नही था। जनता में सम्राट के प्रति सम्मान एवं भय की भावना पैदा करने के लिए वह प्रतिदिन सुबह प्रजा को अपने महल के झरोखे से दर्शन देता था। दरबार के नियम–कायदे निश्चित किये गये। उसने दरबार में आने–जाने की घोषणा नक्कारा बजाकर की जाती थी। दरबार के प्रमुख सरदारों को पूरी साजो–सम्मान के साथ घोड़े पर बैठकर प्रतिदिन महल का चक्कर लगाना पड़ता था। यह प्रथा चौकी और तस्लीम–ए–चौकी कहलाती थी। सम्राट के कुछ विशेषाधिकार भी थे, जैसे खिताब, मनसब, और जागीर बाँटना, मुहर और पंजे का प्रयोग करना, अंग–भंग की सजा देना, हाथियों का युद्ध करवाना, तुलादान करना इत्यादि। सम्राट स्वयं दरबार में बैठकर फरियाद सुनता एवं न्याय करता था। अकबर के प्रयासों से बाबर द्वारा स्थापित 'पादशाही' की शक्ति एवं प्रतिष्ठा दोनों में वृद्धि हुई। 'बादशाह' (बादशाह) को एक ही साथ आतंक भय और श्रद्धा की दृष्टि से देखा जाता था। अकबर द्वारा स्थापित यह व्यवस्था बाद में भी चलती रही।

3.11. मनसबदारी व्यवस्था

अपने साम्राज्यवादी उद्देश्यों की पूर्ति के लिए अकबर ने सैन्य संगठन पर विशेष ध्यान दिया। उसने मुगल सेना को एक नये रूप में संगठित किया। उसने सेना का संगठन मनसबदारी व्यवस्था के आधार पर किया। इस व्यवस्था के अनुसार प्रत्येक सरदार और सैनिक पदाधिकारी का मनसब (पद) निश्चित किया गया। मनसबदारों की विभिन्न श्रेणियाँ थी। अबुल फजल के अनुसार मनसबदारों की 66 श्रेणियां थी। मनसबदारी व्यवस्था मे संख्या को बहुत अधिक महत्व प्रदान किया गया है सबसे छोटा मनसब 10 का अधिकत 7000 का था। आरम्भ में पाँच हजार से उच्च मनसब सिर्फ राजवंशों के लोगों को ही दिए गए प्रान्त बाद में महत्वपूर्ण सरदारों को भी सर्वोच्च मनसब प्रदान किये गये। ये मनसब अपनी श्रेणी और पद के अनुरूप सैनिकों की भर्ती करते थे। सेना के खर्च के लिए इन्हें नगद वेतन अथवा जागीर दी जाती थी।

मनसबदार इस व्यवस्था का गलत तरीके से लाभ उठाते थे। वे भाड़े के और अयोग्य सैनिकों की भरती करते अथवा निर्धारित संख्या से कम सैनिक रखते, परन्तु वेतन पूरा लेते। इसलिए अकबर ने मनसबदारी व्यवस्था में महत्वपूर्ण परिवर्तन किया। उसने मनसबदारों की दो श्रेणियां बना दी–जात और सवार। जात के आधार पर प्रत्येक मनसबदार का पद पर वेतन निश्चित किया गया। जात के ही अनुसार सवार रखने की अनुमति दी गई। प्रत्येक सवार के लिए जात के अतिरिक्त 2 रूपया अधिक वेतन दिया गया। मनसबदारों को सवार घोड़ा के अतिरिक्त ऊंट खच्चर और गाड़ियां भी रकनी पड़ती थी। सेना में व्याप्त भ्रष्टाचार को रोकने के लिए अकबर ने घोड़ो को दागने एवं सैनिकों का खाता (हुलीया) रखने की भी व्यवस्था की। अकबर स्वयं मनसबदारों की सेना का निरीक्षण करता था। अकबर ने मनसबदारी व्यवस्था में एक और सुधार यह किया उसने पाँच हजार और उससे कम के मनसबदारों की तीन उप–श्रेणियां बना दी–प्रथम मध्य एवं तृतीय उपश्रेणी। यह श्रेणी ज्ञात और सवार की संख्या के अनुपात में निश्चित की गई। अकबर के प्रयासों से मुगल मनसबदारी व्यवस्था।

3.12 एक राष्ट्रीय शासक के रूप मे अकबर

विश्व के मध्ययुगीन शासकों में अकबर की गणना एक महान सम्राट के रूप में की जाती है। वह केवल मुगल बादशाहों में ही सर्वश्रेष्ठ नही था, बल्कि भारत के प्रमुख और महान शासकों में उसका स्थान अग्रणी है। एक महान साम्राज्य–निर्माता, कुशल प्रशासक, धर्मसहिष्णु शासक, समाज सुधारक, कला और संस्कृति के संरक्षक के रूप में उसका स्थान अतुलनीय है। अनेक इतिहासकारों ने उसे उसके समकालीन यूरोपीय शासकों–इग्लैण्ड की महारानी एलिजाबेथ और फ्रांस के सम्राट हेनरी चतुर्थ से भी ऊँचा स्थान प्रदान किया है। अकबर की ख्याति मुख्यतः इसलिए है कि उसने समस्त भारत को एक सूत्र में (बाँधने का प्रयास किया अपनी सुलह कुल की नीति के द्वारा उसने सभी भारतीयों को सम्मान अवसर प्रदान किया और एक साथ–मिल–जुलकर रहने का वातावरण तैयार किया।

जिस समय अकबर गद्दी पर बैठा उस समय भारत की राजनीतिक, सामाजिक और धार्मिक स्थिति अशांत थी। सम्पूर्ण भारत विभिन्न राज्यों के अधीन था। केन्द्रीय सत्ता का नामोनिशान नही था. स्थानीय तत्व ही राजनीति और प्रशासन में अदिक प्रभावशाली थे। प्रशासनिक व्यवस्था ठप्प पड़ चुकी थी। सामाजिक एवं धार्मिक स्थिति की सुखद नही थी देश में विभिन्न जातियाँ वर्गों एवं धर्मों के लोग थे जिन्हें आपसी सदभावना, एकता की कमी थी। समाज में अनेक

बुराइयाँ प्रविष्ट कर चुकी थी। धार्मिक विभेद चरम सीमा पर पहुँच चुके थे। इस विषम परिस्थिति में भी अकबर ने साहस और धैर्य नही खोया। वह समस्त भारत को एक राजनीतिक और प्रशासनिक सूत्र में बांधकर, सबको समान अवसर और सुविधाएं प्रदान कर, सामाजिक कुरीतियों को मिटाकर धर्म–निरपेक्षता की नीति अपनाकर, साहित्य एवं कला का विकास कर भारत की स्थिति सुदृढ़ करना चाहता था। उसने भारत को ही अपना देश समझा और इसके विकास के लिए अनवरत प्रयास किया। उसके ये ही कार्य उसे एक राष्ट्रीय शासक बनाते है।

3.13 सांस्कृतिक एकता की नीति

सांस्कृतिक उत्थान के क्षेत्र में भी अकबर ने सराहनीय कार्य किए। उसने फारसी के साथ–साथ संस्कृत भाषा और साहित्य के विकास पर भी पूरा ध्यान दिया। उसके द्वारा स्थापित अनुवाद किया। महाभारत, गीता, रामायण बाइबिल, कुरान, अथर्ववेद, पंचतंत्र, सिंहासन बत्तीसी इत्यादि को फारसी अनुवाद हुआ। कुछ फारसी ग्रन्थों को संस्कृत में भी अनुदित किया गया। इतिहास काव्य, राजता, एवं कविता, संस्कृत, फारसी, हिन्दी, और उर्दू में लिखे गये। शैक्षणिक विकास के लिए अनेक मदरसे स्थापित किए गये एवं संस्कृत पाठशालाओं को प्रोत्साहन और अनुदान दिया गया। अकबर के दरबार में विभिन्न कलाओं से सम्पन्न विद्वान और विशेषज्ञ रहते थे। उसने कलाकारों, कवियों, चित्रकारों, संगीतकारों को संरक्षण एवं प्रोत्साहन दिया। भवन–निर्माण के क्षेत्र में भी उसकी महान् उपलब्धियां है। उसने ऐसे भवनों का निर्माण करवाया जिसमें हिन्दू और इस्लामी शैलियों का मिश्रण स्पष्ट दृष्टिगोचर होता है।

3.14 सारांश

इस प्रकार अकबर ने सामाजिक एकता, राष्ट्रीय. अखण्डता एवं धार्मिक निरपेक्षता के लिए सराहनीय योगदान दिया। उसने भारत के विभिन्न सम्प्रदायों एवं वर्गों में एकता एवं समन्वय की भवना स्थापित करने के लिए अथक प्रयास किया एवं राष्ट्रीय–निर्माण में योगदान दिया उसने भारतीयों में यह चेतना जगा दी कि विभिन्न जातियों, धर्मो, सम्प्रदायों एवं वर्गो में विभक्त रहते हुए भी वे एक राष्ट्र के निवासी है। इस चेतना को जगाकर उसने राष्ट्र–निर्माण में महत्वपूर्ण योगदान दिया। उसने सभी के साथ समान व्यवहार किया तथा योगता के अनुसार उसे प्रतिष्ठित भी किया। अपने इन्ही गुणों के कारण अकबर को एक राष्ट्रीय सम्राट के रूप में स्वीकार किया गया है।

3.15 अभ्यासार्थ प्रश्न

- ❖ अकबर की प्रारम्भिक कठिनाइयों का वर्णन कीजियें।
- ❖ अकबर की राजपूत नीति का व्याख्या कीजिये।
- ❖ अकबर की धार्मिक नीति का वर्णन कीजिये।
- ❖ अकबर के प्रशासनिक व्यवस्था परर निबन्ध लिखिए।
- ❖ मनसबदारी व्यवस्था का संक्षिप्त वर्णन कीजिये।

- ❖ अकबर के सामजिक एवं संस्कृति एकता के क्षेत्र में उठाये गये कदम की व्याख्या कीजिये।
- ❖ एक राष्ट्रीय शासक के रूप में अकबर का मूल्यांकन कीजिये।

3.16 संदर्भ ग्रन्थ

प्रो0 विपिन बिहारी सिन्हा – मध्यकालीन भारत का इतिहास

प्रो0 ए. बी. पाण्डे – मध्यकालीन भारत का इतिहास

प्रो0 हरिश्चन्द वर्मा – मध्यकालीन भारत Vol II

प्रो0 आर्शीवादी लाल श्रीवास्तव – भारता का इतिहास (1000–17861)

प्रो0 एल. पी. शर्मा – मध्यकालीन भारत (1000–1761)

प्रो0 जे. एल. मेहता – मध्यकालीन भारत का वृहत्त, इतिहास

इकाई–4 जहाँगीर और नूरजहाँ (1605–1627)

इकाई की रूप रेखा।

4.0. उद्देश्य
4.1. प्रस्तावना
4.2. जहाँगीर का प्ररम्भिक जीवन
4.3. जहाँगीर का सिंहासनारोहण
4.4. नूरजहाँ का उत्कर्ष
4.5. नूरजहाँ का प्रारम्भिक जीवन
4.6. नूरजहाँ का प्रभाव
4.7. नूरजहाँ का चरित्र एवं व्यक्तित्व
4.8. सारांश
4.9. अभ्यासार्थ प्रश्न
4.10. सन्दर्भ ग्रन्थ

4.0 उद्देश्य

इस इकाई में जहाँगीर और नूरजहाँ के सम्बन्ध में जानकारी दी गई है। जहाँगीर के जीवन सम्बन्ध महत्वपूर्ण बिन्दुओं पर प्रकाश डाला गया है। जहाँगीर के जीवन में नूरजहाँ का आना और फिर सारा राज–काज अपने हाथों केन्द्रित करने का वर्णन किया गया है। नूरजहाँ के गुणों और उसकी प्रशासनिक कुशलता की भी चर्चा की गई। इस इकाई के अध्ययन के बाद आप जान सकेंगे किः–

- ❖ जहाँगीर सलीम का प्रारम्भिक जीवन
- ❖ नूरजहाँ का उत्कर्ष एवं प्रशासन पर उसका नियंत्रण
- ❖ नूरजहाँ जनता एवं इसका प्रभाव जहाँगीर का चरित्र एवं व्यक्तित्व
- ❖ जहाँगीर के समय चित्रकला का विकास

4.1 प्रस्तावना

सलीम अथवा जहाँगीर सम्राट अकबर का पुत्र एवं मुगलवंश का एक महत्वपूर्ण शासक था। उसने अकबर द्वारा स्थापित विशाल मुगल साम्राज्य की सुरक्षा की न्याय के प्रशासन पर अत्यधिक बल दिया। संगीत विवाह एवं चित्रकला को विशेषरूप से प्रश्रय दिया नूरजहाँ के साथ विवाह एवं प्रशासन पर उसका नियंत्रण भी इस समय की महत्वपूर्ण घटना थी। उसी के समय में सिखों से सम्बंध बिगड़े कंधार, मुगलों के हाथ से निकल गया। प्रशासन पर नूरजहाँ और उसके गुट का प्रभाव स्थापित हुआ। जिससे मुगल दरबार में गड़बड़ी बढ़ गई और कुछ विद्रोह भी हुए। इन सब के बावजूद जहाँगीर के काल में न्याय, कला एवं चित्रकला का काफी विकास हुआ।

4.2 सलीम (जहाँगीर) का प्रारम्भिक जीवन

जहाँगीर अकबर का सबसे बड़ा पुत्र था। उसका जन्म 30 अगस्त 1569 को हुआ था। उसकी माता कुछवाहा राजा भारमल की पुत्री थी जिसके साथ अकबर ने 1562 में विवाह किया था। उसका जन्म विख्यात सूफी संत सलीम चिश्ती की अनुकंपा से हुआ था, इसलिए वह सलीम के नाम से पुकारा गया अकबर उसे प्यार से शेखू बाबा कहता था। अर्ब्दुरहीम खानकाना के योग्य संरक्षण में सलीम ने फारसी, तुर्की एवं हिन्दी हिन्दी की शिक्षा ग्रहण की। सलीम ने अनेक विवाह किए जिसमें सबसे प्रमुख था। राजा भगवान दास की पुत्री मानबाई एवं राजा उदय सिंह की पुत्री जगत गोसाई से विवाह। शासक बनने के बाद उसने मेहरून्निसां (नूरजहाँ) से भी विवाह किया जिसका तत्कालीन राजनीति पर गहरा प्रभाव पड़ा। नूरजहाँ ने अपनी स्थिति सुदृढ़ करने के लिए नूरजहाँ जुनटा का निर्माण किया जहाँगीर के भोग–विलास में लिप्त रहने के कारण प्रशासन की बागडोर नूरजहाँ ने सम्भाल रखा था।

4.3 जहाँगीर का सिंहासनारोहण

अकबर की मृत्यु के पश्चात् 24 अक्टूबर 1605 को सलीम, "नुरूद्दीन मुहम्मद जहाँगीर बादशाह गाजी" के नाम से आगरा की गद्दी पर बैठा। जहाँगीर ने गद्दी पर बैठते ही अपनी उदारता का परिचय दिया। सभी पुराने पदाधिकारियों और मंत्रियों को उनके पदों पर बनाएं रका गया। उसने अपने विरोधियों को भी पुरस्कार एवं पद सौंपे। अबुल फजल के हत्यारे वीर सिंह बुंदेला को दरबार में उचित स्थान दिया गया। मिर्जा ग्यास बेग को 'एतमादुद्दौला' को उपाधि प्रदान की गई और उसे दीवान का पद सौंपा गया। गद्दी पर बैठने के उपलक्ष्य में जहाँगीर ने सिक्के भी ढलवाए। वाकियात–ए–जहाँगीरी नामक ग्रन्थ से यह भी पता लगता है कि जहाँगीर ने आगरा किला से यमुना नदी के किनारे तक 30 गज लम्बी एक सोने की जंजीर, जिससे 60 घंटिया लटकी हुई थी। इसे न्याय की जंजीर' कहा जाता है। इसका उद्देश्य था फरियादी को सम्राट तक सीधा फरियाद करने का मौका प्रदान करना।

4.4 नूरजहाँ का उत्कर्ष

जहाँगीर के शासन की सर्वप्रमुख घटना है उसका नूरजहाँ से 1611 ई0 में विवाह होना। इस विवाह का तत्कालीना राजनीति पर गहररा प्रभाव पड़ा। इस

समय से लेकर जहाँगीर की मृत्यु तक शासन की वास्तविक बागडोर नूरजहाँ नूरजहाँ और उसके समर्थकों के हाथों में ही रही। जहाँगीर नूरजहाँ के हाथों की कठपुतली बना रहा। जहाँगीर को अपने प्रति आशक्ति को देखकर नूरजहाँ ने अपने समर्थकों का एक दल बना लिया और सारी शक्ति अपने हाथो में केन्द्रित कर ली। फलस्वरूप, नूरजहाँ के विरूद्ध प्रतिक्रिया आरम्भ हुई और साम्राज्य को शाहजहाँ और महावत खां का प्रबल विद्रोह झेलना पड़ा।

4.5 नूरजहाँ का प्रारम्भिक जीवन

नूरजहाँ का वास्तविक नाम मेहरून्निसा था। वह ईरानी अमीर मिर्जा गयास बेग की पुत्री थी। मिर्जा ग्यास भेड़ बकरी की तलाश में अपने परिवार के साथ भारत आया था। अकबर ने उसकी योग्यता तीव्र–बुद्धि एवं कार्यकुशलता को देखते हुए मुगल प्रशासन में उसे स्थान दिया। धीरे–धीरे मिर्जा ग्यास बेग दरबार में अपना प्रभाव बनाने में सफल हुआ। जहाँगीर ने उसे 'ऐतमादुद्दौला' की उपाधि प्रदान की। 1594 में मेहरून्निसा का विवाह अली कुली बेग नामक ईरानी से, जो मुगल सेना में ता, कर दिया गया। जहाँगीर ने उसे शेर अफगन की उपाधि प्रदान की थी। 1607 ई0 में शेरअफगन ने बंगाल के सुबेदार कुतुबुद्दीन की हत्या करदी इसे देखकर कुतुबुद्दीन के सैनिकों ने शेर अफगन को भी मार डाला। मेहरून्निसा को आगरा बुलाकर सलीमा बेगम की सेवा नियुक्त कर दिया गया। मार्च 1611 में नौरोज के त्योहार के अवसर पर मीना बाजार में जहाँगीर ने नूरजहाँ को देखा। वह नूरजहाँ की सुन्दरता से अत्यन्त प्रभावित हुआ। उस पर मोहित होकर उसने मई 1611 में मेहरून्निसा से विवाह कर लिया। जहाँगीर ने उसे नूरमहल और नूरजहाँ की उपादि प्रदान की। नूरजहाँ के साथ विवाह का जहाँगीर पर विशेष प्रभाव पड़ा। उसके रूप और गुणों पर आकर्षित होकर जहाँगीर ने उसे अपना सबसे विश्वसनीय सलाहकार बना लिया. जहाँगीर का कृपा प्राप्त कर वह शासन और राजनीति में महत्वपूर्ण दखल देने लगी। वह जहाँगीर पर विशेष ध्यान देती थी। वह उसके साथ शिकार पर भी जाती थी। वह जहाँगीर के साथ प्रत्येक सुबह झरोखा दर्शन भी देती थी। उसने जहाँगीर को सुख एवं शांन्ति देने का प्रयास किया। नूरजहाँ को प्रभाव के कारण जहाँगीर ने मद्यपान कम कर दिया एवं कला कौशल को प्रश्रय दिया। जब जहाँगीर नूरजहाँ पर पूरी तरह आश्रित हो गया।

4.6 नूरजहाँ का प्रभाव

जहाँगीर के साथ विवाह होने के पश्चात् मुगल राजनीति एवं दररबार में नूरजहाँ एवं उसके सम्बंदियों का प्रभाव बढ़ गया उसके पिता 'ऐतमादुद्दौला' और भाई आसफ खां दरबार के सबसे प्रभावशाली सरदार बन गये। आसफ खां ने अपनी पुत्री आरजमन्द बानों बेगम से खुर्रम (शाहजहाँ) का विवाह कर अपनी स्थिति और सुदृढ़ कर ली। इस विवाह के परिणामस्वरूप नूरजहाँ ऐतमादुद्दौला आसफ खां युवराज का गुट अथवा नूरजहाँ जनता जिसमें उसकी माता भी शामिल थी। अगले 10 वर्षो तक परस्पर सहयोग और विश्वास से साथ कार्य करता रहा। 1611–22 तक नूरजहाँ ने अपने माता–पिता की सलाह और निर्देश पर राजनीति की लेकिन 1622–27 के बीच नूरजहाँ को अनेक कठिनाइयां उठानी पड़ी। नूरजहाँ ने खुर्रम (शाहजहाँ) एवं महावत खां के विद्रोहो को दबाने की योजना बनाई, परन्तु इसी बीच 28 अक्टूबर 1627 को लाहौर के निकट जहाँगीर की मृत्यु हो गई जहाँगीर के साथ ही नूरजहाँ का प्रभाव भी समाप्त हो गया। आसफ खां ने उसे

गिरफ्तार कर लिया। शाहजहाँ ने बादशाह बनने के पश्चात उसके भरण–पोषण के लिए एक निश्चित राशि तय कर दी। नूरजहाँ ने अपने जीवन के बाकी अठारह वर्ष राजनीति से दूर रहकर शांतिपूर्ण ढंग से व्यतीत किए।

4.7 जहाँगीर का चरित्र एवं व्यक्तित्व

जहाँगीर का चरित्र एवं व्यक्तित्व अत्यन्त विवादस्पद है। कुछ इतिहासकार उसे लोकप्रिय तथा उदार शासक मानते है तो कुछ आलसी, निकम्मा, विलासी, धर्म–असहिष्णु तथा क्रुर व्यक्तिवाला मानते है। अनेक इतिहासकार उसे विरोधी गुणों का सम्मिश्रण मानते है। स्मिथ के अनुसार, "वह कोमलता और क्रुरता न्याय एवं चंचलता, शिष्टता एवं बर्बरता, बुद्धिमत्ता एवं लड़कपन का अद्वितीय सम्मिश्रण था" वस्तुतः व्यक्ति और शासक के रूप में जहाँगीर में अनेक गुण और दुर्बलताएँ थी। जहाँगीर का व्यक्तित्व अत्यन्त आकर्षक था। वह अपने परिवार वालों से स्नेह करता था तथा सभी के साथ उदारता का व्यवहार करता था। उसे न्याय के प्रति विशिष्ट लगाव था वह फारसी, तुर्की और हिन्दी भाषा का आधा रखता था। वह कविताएँ एवं गजल लिखने की सामर्थ्य रखता था। उसकी आत्मकथा तुजुक–ए–जहाँगीरी फारसी की एक उत्कृष्ट रचना मानी जाती है, उसे कला, विशेषकर चित्रकला से अधिक लगाव था। उसने समय में चित्रकला का चरमोत्कर्ष हुआ। वह नृत्य संगीत में भी अभिरूचि रखता था एवं कलाकारों के संरक्षण देता था। उसने सिकंदरा का मकबरा बनवाया तथा कश्मीर में शालीमार बाग लगवाया। इस प्रकार, व्यक्तिगत तौर पर जहाँगीर में अनेक गुण थे।

4.8 सारांश

यद्यपि एक राजनीतिज्ञ के रूप में जहाँगीर की सराहना नही की जा सकती है तथापि कला और साहित्य के क्षेत्र में अवश्य ही प्रगति हुई। चित्रकला में उसकी विशेष रूचि थी। और इसे वह प्रश्रय भी दिया। वह स्वंय विद्वान था तथा अपने शासन काल में विद्वानों एवं साहित्यकारों को प्रश्रय दिया। उसने पिता से प्राप्त एक विशाल साम्राज्य की एकता एवं स्मृद्धि बनाये रकने में सफल हुआ। उसने न्याय प्रदान करने के लिए उचित कदम उठाये। कोई भी फरियादी अपनी फरियाद शासक तक आसानी से पहुँचा सकता था। वह एक उदार एवं प्रजापालक शासक के रूप में विख्यात है।

4.9 अभ्यार्थ प्रश्न

- जहाँगीर के चरित्र एवं व्यक्तित्व का वर्णन कीजिये।
- नूरजहाँ का उत्कर्ष एवं मुगल प्रशासन पर प्रभावों का वर्णन कीजिये।
- नूरजहाँ की उपलब्धियों का वर्णन कीजिये।
- जहाँगीर की न्याय प्रिय एवं जनहितैषी शासक के रूप में मूल्याकन करे।
- जहाँगीर के समय चित्रकला की उपलब्धियों पर प्रकाश डाले।
- नूरजहाँ पर एक निबन्ध लिखिये।

4.10 सदर्भ ग्रन्थ

प्रो0 बिपिन बिहारी सिन्हा – मध्यकालीन भारत का इतिहास

प्रो0 जे. एल. मेहता – मध्यकालीन भारत का वृहत् इतिहास खण्ड–2

प्रो0 एल. पी. शर्मा – मध्यकालीन भारत (1000–1761)

प्रो0व आशिर्वादी लाल श्रीवास्तव – भारत का इतिहास (1000–1707)

डा0 कामेश्वर प्रसाद – मध्यकालीन भारत का इतिहास

इकाई– 5

शाहजहाँ (1628–58)

<u>इकाई की रूप रेखा</u>

5.0. उद्देश्य

5.1. प्रस्तावना

5.2. आरम्भिक जीवन

5.3. शाहजहाँ का राज्यरोहण

5.4. शाहजहाँ का विजय अभियान

5.5. उत्तराधिकार का युद्ध

5.6. धरमत का युद्ध

5.7. सामूगढ़ का युद्ध

5.8. मुगल साम्राज्य का स्वर्णयुग

5.9. प्रशासनिक व्यवस्था

5.10. जनहित सम्बंधी कार्य

5.11. शैक्षणिक एवं साहित्यिक प्रगति

5.12. कलात्मक विकास

5.13. सारांश

5.14. अभ्यासार्थ प्रश्न

5.15. संदर्भ ग्रन्थ

5.0 उद्देश्य

इस इकाई में शाहजहाँ के आरम्भिक जीवन एवं सिंहासनारोहण से लेकर उत्तराधिकारी युद्ध तक की घटनाओं की जानकारी दी गई है। किस प्रकार शाहजहाँ ने आंतरिक एवं बाह्य समस्याओं का निदान किया। शाहजहाँ के दक्कन एवं मध्य–एशियाई नीति के सम्बन्ध में वर्णन किया गया है। शाहजहाँ का कला,

साहित्य एवं स्थापत्य कला में अभिरूचि का भी वर्णन है। उत्तराधिकारी युद्ध और शाहजहाँ के कैदी बनाये जाने का भी वर्णन किया गया है। इस इकाई के अध्ययन के बाद आप जान सकेंगे कि।

- ❖ शाहजहाँ की प्रारम्भिक कठिनाइयां एवं राज्यारोहण
- ❖ शाहजहाँ के पुत्रो का उत्तराधिकार युद्ध
- ❖ मुगलकाल का स्वर्ण युग
- ❖ शाहजहाँ के जनहित एवं प्रशासनिक कार्य
- ❖ शैक्षणिक एवं कलात्मक प्रगति
- ❖ संगीत एवं कला में शाहजहाँ की व्यक्तिगत अभिरूचि

5.1 प्रस्तावना

शाहजहाँ मुगल वंश का एक महत्वपूर्ण एवं महान शासक था। उसने लगभग 30वर्षो (1627–58) तक शासन किया। उसके समय में दक्षिणी राज्यों को मुगलों के प्रभावशैली नियंत्रण में लाने का प्रयास हुआ। कंधार को पुनः ईरानियों से वापस लेने की कोशिश की गई। इस पर अधिकार करने का प्रयत्न किया गया। शाहजहाँ के कला–कौशल, विशेषतया स्थापत्य कला के विकास पर अत्यधिक ध्यान दिया। एवं अनेक भव्य भवनों का निर्माण करवाया। इस समय साम्राज्य की आर्थिक समृद्धि बढ़ी। इस कारण, अनेक विद्वानों ने शाहजहाँ के युग को मुगलकालीन स्वर्णयुग की संज्ञा दी है। परन्तु इसी समय अनेक विघटनकारी तत्व भी उभरे। दक्षिण एक मध्य एशियाई युद्धों में अपार जन–धन की हानि हुई जिससे मुगलों की शक्ति और प्रतिष्ठा को गहरी ठेस लगी। उत्तराधिकार के युद्ध ने मुगल साम्राज्य को जड़ो पर तीखा प्रहार किया।

5.2 आरम्भिक जीवन

शाहजहाँ का वास्तविक नाम खुर्रम था। उसका जन्म 5 जनवररी 1592 को एक राजपूत राजकुमारी के गर्भ से हुआ था। उसके लालन–पालन में अकबर एवं स्वयं उसके पिता जहाँगीर ने पर्याप्त ध्यान दिया। उसे हिन्दी, फारसी इतिहास इत्यादि का अच्छा ज्ञान था परन्तु उसकी अभिरूचि सैनिक कार्यों में अधिक थी। उसे तीरंदाजी और घुड़सवारी से विशेष लगाव था। 1607 ई0 में उसे 8000 ज्ञात और 5000 सवार का मनसबदार बनाया गया। आगे चलकर उसका ओध्या 30,000 जात और 20,000 सवार तक पहुँच गया। उसे हिसार फिरोजा की जागीर भी दी गई जो सामान्यतः गद्दी के उत्तराधिकारी को दी जाती थी। शाहजहाँ के अनेक विवाह हुए जिसमें सबसे प्रमुख था आसफ खां की पुत्री अरजुमंद बानो बेगम (मुमताज–महल) के साथ। जहाँगीर के शासन काल में खुर्रम ने अनेक युद्धो का सफलतापूर्वक संचालन किया। मेवाड़ पर विजय उसकी सबसे बड़ी सफलता थी। अहमद नगर पर अधिकार करने के उपलक्ष्य में जहाँगीर ने उसे शाहजहाँ की उपाधि प्रदान की। वह नूरजहाँ जुनता का प्रभावशाली सदस्य था। नूरजहाँ आरम्भ में उसे ही उत्तराधिकारी बनाना चाहती थी परन्तु बाद में उसने अपने दामाद शहर यार का पक्ष लेना आरम्भ कर दिया।

5.3 शाहजहाँ का राज्यारोहण

जिस समय जहाँगीर की मृत्यु हुई, शाहजहाँ दक्षिण में था। नूरजहाँ ने पुनः अपने दामाद को गद्दी पर बिठाने का प्रयास कियाः परन्तु शाहजहाँ के ससुर आसफ खां ने चालकी से यह योजना विफल कर दी। उसने प्रमुख सरदारों के मिलकर खाली गद्दी पर अस्थायी तौर से खुसरों के पुत्र दावर बख्श (बुलकी) को गद्दी पर बिठा दिया। शहरयार ने भी लाहौर में अपने आपको सम्राट घोषित कर दिया। इधर आसफखां ने शाहजहाँ को राजधानी शीध्र आने को लिखा। शाहजहाँ तेजी से दवलन से आगरा की ओर बढ़ा। इस बीच आसफ खां ने लाहैर में शहरयार को परास्त कर उसे बन्दी बना लिया एवं उसकी आखें निकलवा ली। शाहजहाँ के गुप्त निर्देश पर, दावर बख्श, शहरयार एवं दानियाल के पुत्रों की हत्या कर दी गई। खुसरो की हत्या शाहजहाँ पहले ही करवा चुका था। आसफखां ने लाहौर में शाहजहाँ को सम्राट घोषित कर दिया एवं उसके नाम का खुतबा पढ़ा। शाहजहाँ आगरा पहुँच गया, फरवरी 1628 को उसका विधिवत अभिषेक हुआ। शाहजहाँ रक्तरंजित तलवार के साथ गद्दी पर बैठा था, इसलिए सबको प्रसन्न करने के लिए उसने मुक्तहाथ से धन बाँटा। महावत खाँ को 7000 जात और 7000 सवार का मनसब तथा 'खानखाना' की उपधि मिली। आसफखां को विशेष सम्मान दिया गया उसे 8000 जात और 8000 सवार का मनसब तथा वकील की पद मिला। नरजहाँ के भरण–पोषण के लिए एक निश्चित राशि तय कर दी गई।

5.4 शाहजहाँ का विजय अभियान

शाहजहाँ में अपूर्व सैनिक क्षमता थी शासक बनने के पूर्व ही उसने इसका पर्याप्त परिचय दिया था। गद्दी पर बैठने के बाद आतंकी कठिनाइयों पर विजय प्राप्त कर उसने सामाज्य विस्तार की ओर ध्यान दिया। उसकी सैनिक गति विधियों का केन्द मध्य एशिया और दक्कन था। उसने कंधार का पुनः वापस लेने का प्रयास किया एवं अहमदनगर, बीजापुर तथा गोलकुंडा पर प्रभावशाली नियंत्रण स्थापित करने का प्रयास किया। इन कार्यों में उसे उसके योग्य, सरदार महावत खां और अफने तृतीय पुत्र औरंगजेब से पर्याप्त सहायता मिली परन्तु इन सैनिक अभियान से शाहजहाँ को कोई विशेष लाभ नही हो सका। शाहजहाँ को कुछ विद्रोह का भी सामना करना पड़ा विशेष रूप से ओरधा का राजा जुझार सिंह एवं खानजहाँ लोदी का विद्रोह भयानक एवं खतरनाक था परन्तु शाहजहाँ के सैनिक क्षमता एवं दृढ संकल्प के आगे सभी परास्त हो गये। 1632 ई0 शाहजहाँ ने बंगाल में पुर्तगालियों को पराजित कर हुगली पर अधिकार कर लिया।

5.5 उत्तराधिकारी का युद्ध

मुगलों के उत्तराधिकार का कोई निश्चित नही था। सिंहासन का फैसला बहुधा तलवार के बल पर ही होता है। शाहजहाँ के चारों पुत्रो दारा, शुजा, औरंगजेब और मुराद एक ही मां मुमताज महल से पैदा हुए थे। इन सभी को प्रशासनिक एवं सैनिक शिक्षा दी गई थी। सभी पुत्रों ने अनेक सैनिक अभियानों में भाग लिया था एवं विभिन्न सुबों की सूबेदारी संभालकर पर्याप्त प्रशासनिक अनुभव भी प्राप्त कर लिया था अतः शाहजहाँ के चारों पुत्र गद्दी के लिए अपने आपको योग्य मानते थे। शाहजहाँ का बड़ा पुत्र दारा शिकोह जिसकी आयु 43 वर्ष थी, अपने पिता का सबसे अधिक प्रिय था। उसे शाहजहाँ ने शाह इकबाल की उपाधि प्रदान की थी। वह विद्वान, उदार एवं दयाल था। वह संस्कृत का प्रकाण्ड विद्वान

था। शाहजहाँ ने उसे पंजाब का सुबेदार एवं दिल्ली का प्रशासक नियुक्त किया था, परन्तु वह प्रशासनिक जिम्मेदारी अपने अधीनस्थ नियुक्त किया था, परन्तु वह प्रशासनिक जिम्मेदारी अपने अधिनस्थ कर्मचारियों पर सौप कर पिता के साथ राजधानी में रहता था शाहजहाँ का दूसरा पुत्र शाहशुजा बंगाल का प्रशासक था। वह साहसी और वीर, परन्तु, आलसी, विलासप्रिय एवं अकर्मण्य था। अपने सभी भाइयों में चालाक, महत्वकाक्षी एवं कूटनीतिज्ञ औरंगजेब था। यद्यपि धार्मिक मामलों में औरंगजेब असहिष्णु प्रवृत्ति का कट्टर सुन्नी मुसलमान था। परन्तु वह एक अच्छा संगठन कर्ता और कुशल सेनानायक था। शाहजहाँ ने उसे दक्षिण की सूबेदारी सौपीं थी। वास्तव में उत्तराधिकार का युद्ध द्वारा और औरंगजेब के मध्य हुआ क्योंकि ये ही दोनों प्रबल दाबेदार थे।

5.6 धरमत का युद्धः—

शाहजहाँ ने मुराद और औरंगजेब के आक्रमण की सूचना पाकर उनके विरूद्ध भी एक सेना जोधपुर के राजा जसवंत सिंह और कासिम खां के अधीन भेजी। मालवा पहुँचने पर जसवंत सिंह ने औरंगजेब और मुराद की सम्मिलित सेना को अपनी प्रतिक्षा करते हुए पाया औरंगजेब ने जसवंत सिंह को युद्ध न करने और वापस लौटने की सलाह दी। परन्तु जसवंत सिंह नने वापस लौटना अपना अपमान समझा अतः बिना पूरी तैयारी के ही वह विद्रोही राजकुमार से भिड़ गया अप्रैल 1658 को उज्जैन के निकट धरमत का निर्णायक युद्ध हुआ। जसवंत सिंह को पराजित और जख्मी होकर जोधपुर वापस लौटना पड़ा। इस युद्ध के परिणामस्वरूप औरंगजेब की शक्ति एवं प्रतिष्ठा अधिक बढ़ गई। उसे लूट में काफी संपत्ति और युद्ध—सामग्री भी हाथ लगी। अब वह मुराद के साथ तेजी से राजधानी की ओर बढ़ा। चंबल नदी पार कर वह आगरा के निकट, सामूगढ़ के समीप पहुँच गया।

5.7 सामूगढ़ का युद्ध

धरमत के युद्ध में राजा जसवंत सिंह की पराजय से दारा को गहरा धक्का लगा। उसकी सैनिक भूलों ने भी उसकी स्थिति दुर्बल बना दी। विद्रोही राजकुमारों को रोकने के लिए सेना भेज देने से राजधानी की सुरक्षा खतरे में पड़ गई थी। अपनी दुर्बल स्थिति को देखते हुए दारा ने सुलेमान शिकोह को शीघ्र आगरा वापस आने की सूचना भेजी, लेकिन समय पर नही पहुँच सका। जसवंत सिंह और उदय पुर के राणा को भी सहायता के लिए आने को कहा, गया, परन्तु औरंगजेब ने उन्हें अपने पक्ष में मिलाकर उन्हें युद्ध से तटस्थ रहने को राजी कर लिया। इस प्रकार दारा की स्थिति निःसहाय हो गई, परन्तु उसने धैर्य के साथ स्थिति की मुकबला करने का निश्चय किया। 29 मई 1658 को सामूगढ़ का निर्णायक युद्ध हुआ। औरंगजेब की सैन्य कुशलता के सामने दारा टिक नही सका और बुरी तरह पराजित हुआ। अब औरंगजेब आगरा में प्रवेश कर शाहजहाँ को नजरबन्द कर दिया। औरंगजेब अब तक पूरी तरह से सत्ता पर काबिज हो गया था।

5.8 मुगल साम्राज्य का स्वर्णयुग

शाहजहाँ का शासन मुगल भारतीय इतिहास में सामान्यतः स्वर्ण युग (GoldenAge) के नाम से विख्यात है। अनेक तत्कालीन इतिहासकारों, विदेशी यात्रियों तथा आधुनिक इतिहासज्ञों का मानना है कि शाहजहाँ के समय में मुगल साम्राज्य की चतुर्दिक प्रगति हुई। साम्राज्य में शान्ति एवं सुव्यवस्था बनी रही,

विद्रोह नही के बराबर हुए। आर्थिक प्रगति हुई एवं कला–कौशल, शिक्षा एवं साहित्य का चरमोत्कर्ष हुआ। दरबार की शान–शौकत पराकाष्ठा पर पहुँच गई। इसलिए रक्फी खां, राय भबारमल, जैसे समकालीन इतिहास कार शाहजहाँ के शासन की प्रशंसा करते हैं। खफी खां के शब्दों में "यद्यपि अकबर एक विजेता और संविधान निर्माता था, फिर भी व्यवस्था, साम्राज्य एवं राजस्व के प्रबंध और राज्य के प्रत्येक विभाग की सुव्यवस्थित प्रशासन के लिए भारत में ऐसा की भी राजुकुमार शासक नही हुआ जिसकी शाहजहाँ से तुलना की जा सकें।" इसके विपरीत अनेक विद्वानों की मान्यता है कि शाहजहाँ का शासनकाल 'स्वर्णयुग' नही था वरन् समय की ऊपरी चमक–दमक में मुगल साम्राज्य के पतन के बीच अधिक सशक्त थे।

5.9 प्रशासनिक व्यवस्था

शाहजहाँ का शासनकाल प्रशासनिक व्यवस्था के लिए भी विख्यात है। यद्यपि उसके शासन के आरम्भ में कुछ विद्रोह राजनीतिक कारणों के कारण हुए परन्तु प्रशासनिक व्यवस्था में किसी प्रकार की ढिलाई नही आई। उसने अकबर द्वारा स्थापित प्रशासनिक व्यवस्था को ही मूलरूप से बनाए रखा। तथापि इसमें आवश्यकतानुसार संशोधन एवं परिवर्द्धन भी किये गये। उसने पूरे साम्राज्य में शांति व्यवस्था बनाए रखी। वह प्रशासन में व्यक्तिगत दिलचस्पी लेता था। वह प्रजा के हित की सदैव कामना करता था। उसके प्रशासन की प्रशंसा करते हुए यूरोपीय मंत्री ट्रैवर्नियर ने लिखा है कि शाहजहाँ अपनी प्रजा पर राजा की तरह शासन नही करता था, बल्कि एक पिता जैसे अपने परिवार और पुत्रों की सुरक्षा करता है। उसी प्रकार शासन करता है। शाहजहाँ के शासनकाल में भू–राजस्व व्यवस्था में भी महत्वपूर्ण सुधार किए गए। इसके फलस्वरूप राजकीय आय में वृद्धि हुई और साम्राज्य की सम्पन्नता बढ़ी। उसने कृषि के विकास पर समुचित ध्यान दिया। कृषि के विकास के लिए नहरों का निर्माण हुआ एवं किसानों को अनेक सुविधाएं दी गई। फलस्वरूप, कृषि का विस्तारर हुआ। एवं उत्पादन बढ़ा। इसका लाभ उठाकर राज्य ने लगान की राशि 1/3 से बढ़ाकर) कर दी। इससे राजकीय कोष अधिक सम्पन्न हो गया। इस समय कृषि के अतिरिक्त व्यापार और उद्योग–धंधे में भी प्रगति हुई। भारत का विदेशी व्यापार यूरोप एवं पश्चिमी एशिया के अनेक देशों में होता था। भारत में बनी वस्तुओं की मांग बड़े पैमाने पर होती थी। वस्त्र उद्योग अत्यधिक उन्नत स्थिति में था। विभिन्न उद्योंगो से संबंधित अनेक राजकीय एवं बिजी कारखाने ते जहाँ हजारों कुशल कारीगर अनेक राजकीय एवं निजी कारखाने थे जहाँ हजारों कुशल कारीगर कार्यरत रहते थे। आगरा, दिल्ली बंगाल इत्यादि समृद्ध थे।

5.10 जनहित सम्बंधी कार्य

शाहजहाँ का शासनकाल शान्ति एवं सुव्यवस्था का था। राज्य की ओर से प्रजा के हित का सैदव ध्यान रखा जाता था। शाहजहाँ स्वयं ही व्यक्तिगत तौर पर अपनी प्रजा की सुख–सुविधा का ध्यान रखता था। किसानों के सुविधा के लिए यमुना नहर का निर्माण करवाकर उत्तम प्रबन्ध किया प्रमुख राजमार्गों एवं व्यापारिक मार्गों पर यात्रियों की सुविधा के लिए अनेक सरायों का निर्माण किया गया शाहजहाँ ने जनहित के लिए अनेक मस्जिद, बगीचों इत्यादि का भी निर्माण करवाया। दक्षिण पड़ने वाले भीषण दुर्भिक्ष के समय उसने राहत कार्यों में व्यक्तिगत दिलचस्पी ली। इस प्रकार एक निरंकुश और शक्तिशाली समान होते हुए भी शाहजहाँ ने जनहित के कार्यों में गहरी अभिरूचि दिखाई।

5.11 शैक्षणिक एवं साहित्यिक प्रगति

शाहजहाँ का शासनकाल शिक्षा एवं साहित्य के विकास का भी काल था। शिक्षा के समुचित प्रसार के लिए उसने अनेक विद्यालयों की स्थापना करवाई जिसमें प्रमुख है। आगरा और दिल्ली के विद्यालय। मस्जिदों में भी शिक्षा के प्रसार का कार्य किया गया। शैक्षणिक संस्थाओं को राजकीय अनुदान प्रदान किए जाते थे। इस्लामी शिक्षा के अतिरिक्त भारतीय शिक्षा प्रदान करने वाली संस्थाओं को भी बिना किसी भेद–भावना के अनुदान दिए गए। फलस्वरूप इस समय फारसी भाषा और साहित्य के अतिरिक्त हिन्दी एवं संस्कृत साहित्य का भी समुचित विकास हुआ। डा0 बी. पी. सक्सेना के अनुसार' शाहजहाँ का शासन काल हिन्दी साहित्य एवं भाषा के विकास का सबसे अधिक शानदार काल था।

शाहजहाँ के दरबार में फारसी, हिन्दी, संस्कृत एवं उर्दू भाषा के अनेक विद्वान एवं कवि थे। इस समय फारसी भाषा में कविताएँ एवं ऐतिहासिक ग्रन्थ बादशाहननामा एवं खफी खां ने मुन्तखब–उल–लुबाब की रचना इसी समयकी। शाहजहाँ का पुत्र द्वारा शिकोह फारसी का अच्छा विद्वान था। उसने संस्कृत के अनेक ग्रंथो–(अथर्ववेद उपनिषद) का फारसी भाषा में अनुवाद किया। मुंशी बनवारी दास ने प्रबोध चंद्रोदय का फारसी अनुवाद किया। रामायण का भी फारसी अनुवाद हुआ। ज्योतिष, गणित की पुस्तकों का भी संस्कृत से फारसी में अनुवाद हुआ। शाहजहाँ हिन्दी के विकास में भी अभिरुचि रखता था। उसने हिन्दी के प्रमुख कवियों एवं विद्वानों को राज्याश्रय भी दिया। उसके समय के प्रसिद्ध कवियों में थे सुन्दरदास चिंतामणि और कविन्द आचार्य सुन्दरदास ने सुंदर श्रृगांर, सिंहासन बत्तीसी और बारहमासा की रचना की। संस्कृत के सबसे बड़े विद्वान और शाहजहाँ के राजकवि जगन्नाथ पंडित थे। उन्होंने गंगालहरी की रचना की। शाहजहाँ उनसे अत्यधिक प्रभावित था और उन्हें उसने "महाकवि राय" की उपाधि से विभूषित किया।

5.12 कलात्मक विकास

शाहजहाँ का काल निःसंदेह कलात्मक विकास के दृष्टिकोण से मुगलकालीन इतिहास का स्वर्ण युग माना जा सकता है। कला, विशेषतया, स्थापत्य कला की इस समय अभूतपूर्व उन्नति हुई। शाहजहाँ ने मुगल साम्राज्य को सुन्दर और भव्य भवनों से सुसज्जित कर दिया। इस समय किला–निर्माण एवं मस्जिद–निर्माण अपनी चरम पर पहुँच गये। उसने दिल्ली के निकट शाहजहाँबाद नामक नगर का निर्माण करवाया एवं लाल पत्थरों से लाल किला बनवाया। इसकी बनावट अनूठी और भव्य थी। किले के अन्दर 'दीवान–ए–आम' और 'दीवान–ए–खास' नामक भव्य कक्षों का निर्माण हुआ। लाल किला के अतिरिक्त शाहजहाँ ने ताजमहल, जामा मस्जिद, मोती मस्जिद, जहाँगीर का मकबरा जैसे भव्य भवनों का निर्माण करवाया। आगरा स्थित ताजमहल शाहजहाँ की सर्वोत्तम कृ ति मानी गई। इसकी गणना विश्व की आश्चर्यजनक वस्तुओं में की जाती है। इसका निर्माण 1631 में प्रारम्भ होकर 1653 में तैयार हुआ। इसके निर्माण में करीब 9 करोड़ रूपये खर्च हुए। इसकी भीतरी दीवारों को रत्नजटित बेल–बूटों से सजाया गया था। इसी प्रकार, बहुमूल्य रत्नों से सुसज्जित मयूर सिंहासन अथवा तख्त–ए–ताउस का भी निर्माण हुआ जिसमें विश्व प्रसिद्ध कोहिनूर हीरा जड़ा था। शाहजहाँ की इन कृत्यों से मगुल साम्राज्य का वैभव एवं इसकी संपन्नता की झलक मिलती है। वास्तुकला के अतिरिक्त शाहजहाँ ने विविध लोक कलाओं को भी

प्रश्रय दिया। यद्यपि मुगलकालीन चित्रकला की सर्वाधिक प्रगति जहाँगीर के समय में हुई, परन्तु शाहजहाँ ने भी इस कला के विकास में अभिरूचि ली। उसके दरबार में अनेक ख्याति प्राप्त चित्रकार थे। कीमती रंगों एवं बशों का उपयोग कर सुंदर चित्र बनाए गए। शाहजहाँ संगीत में भी दिलचस्पी रखता था। उसने दरबार में अनेक ख्याति प्राप्त संगीतज्ञ ते। जगन्नाथ एक विख्यात गायक थे, जो शाहजहाँ के दरबार की शोभा बढ़ाते थे। ध्रुपद गायन कला का इस समय विशेष रूप से विकास हुआ।

5.13 सारांश

उपरोक्त विवेचना से स्पष्ट हो जाता है कि शाहजहाँ के शासनकाल में साम्राज्य में शान्ति व्यवस्था बनी रही, प्रशासनिक व्यवस्था सुदृढ़ हुई, आर्थिक सम्पन्नता बढ़ी एवं कला—कौशल, शिक्षाएवं साहित्य की अभूतपूर्व वृद्धि हुई। इसीलिए, अनेक इतहासकारों ने शाहजहाँ के शासन काल को मुगलकालीन भारतीय इतिहास का 'स्वर्ण युग' (ळवसकमद ।हम) माना जाता है। निःसन्देह शाहजहाँ के शासनकाल में स्थापत्य कला के क्षेत्र में अतुलनीय वृद्धि हुई। अनेक भव्य और आकर्षित भवन बनाए गये। विश्व प्रसिद्ध ताजमहल इस युग की श्रेष्ट इमारत है जो संसार के सात आश्चर्यों में शामिल है। लाल किला एवं जामा मस्जिद जैसे भवन शाहजहाँ की आर्थिक एवं सम्पन्नता एवं वैभव को बखूबी दर्शाता है।

5.14 अभ्यासार्थ प्रश्न

- ❖ शाहजहाँ के प्रारम्भिक जीवन एवं राज्यारोहण का संक्षिप्त विवरण दें।
- ❖ शाहजहाँ के पुत्रों में हुए उत्तराधिकार के युद्ध के कारण व परिणाम लिखिए।
- ❖ शाहजहाँ के प्रशासनिक एवं जनहित के कार्यों का मूल्यांकन कीजिए।
- ❖ शाहजहाँ के काल में शैक्षिक एवं कलात्मक प्रगति का वर्णन कीजिये।
- ❖ "क्या शाहजहाँ का काल मुगलकालीन इतिहास का स्वर्ण युग था" तर्क दीजिए

5.15 सदर्भ ग्रन्थ

प्रो0 जे0 एल0 मेहता – मध्यकालीन भारत का वृहत् इतिहास खण्ड–2

प्रो0 ए0 बी0 पाण्डे – मध्यकालीन भारत का इतिहास

प्रो0 बी0 बी0 सिन्हा – मुगलकालीन भारत का इतिहास

प्रो0 एल. पी. वर्मा – मध्यकालीन भारत का इतिहास

प्रो0 ए0 एल0 श्रीवास्तव – भारत का इतिहास (1000–1761)

डा0 कामेश्वर प्रसाद – मध्यकालीन भारत का इतिहास भाग–2 (1526–1757)

Notes

Notes

Notes

Notes